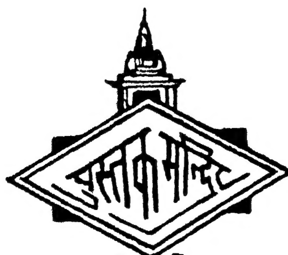
# यौरोपीय साहित्यकार

लेखक

विनोदशङ्कर व्यास



प्रकाशक




काशी

चित्रकार
श्यामशङ्कर व्यास



प्रथम संस्करण
१९५२ ई०
मूल्य पाँच रुपये



मुद्रक
पं० पृथ्वीनाथ भार्गव,
भार्गव भूषण प्रेस, गायघाट, बनारस ।

# अपनी बात

*

जब हम ससार की अन्य उन्नत भाषाओं के साहित्य का अध्ययन कर अपनी राष्ट्रभाषा हिन्दी के आधुनिक साहित्य की ओर दृष्टिपात करते है, तब हमारा मन उस मयूर की भाँति शिथिल हो जाता है जो जगल मे नाचते हुए अपने पैरों की ओर देखता है। इस पर भी जब कही सुनाई पडता है कि आधुनिक हिन्दी-साहित्य मे है ही क्या, तब अपमान और लज्जा से हमारा मस्तक नत हो जाता है।

हिन्दी मे कुछ नही है, इसका कारण क्या है ? इस सम्बन्ध में विचार करने पर नीचे लिखी बाते सम्मुख आती है—हिन्दी के लेखको की दलबन्दी, आपस की फूट, पक्षपात और व्यक्तिगत स्वार्थ। पुस्तक-प्रकाशको की रुचि और लेखको को कुछ न देने की उनकी मनोवृत्ति। सरकारी सरक्षण और सुविधाएँ न प्राप्त होना।

लेखक वर्षो के घोर परिश्रम और अध्ययन के पश्चात् जब कोई महत्त्वपूर्ण रचना प्रस्तुत करता है तब प्रकाशक यह कहकर टाल देता है कि 'ऐसी पुस्तक के पढनेवाले कुछ इने-गिने लोग ही होगे, इसका बिकना कठिन होगा।' फिर ठोस और उच्च साहित्य का निर्माण कैसे हो ?

उधर दलबन्दी के कारण एक दल दूसरे के ऊपर कीचड उछालने के अतिरिक्त कुछ नही करता। सर्वत्र व्यक्तिगत स्वार्थ ही चल रहा है। राष्ट्र और भाषा दोनो के प्रति पक्षपात एव स्वार्थरहित मनोवृत्ति का दर्शन दुर्लभ हो गया है। ऐसी स्थिति मे जो युगो से साहित्य की सेवा करते चले आ रहे है, उनके लिए मार्ग अवरुद्ध है। फिर नवीन लेखको की कठिनाई का प्रश्न ही क्या ?

साहित्य की सेवा एक पवित्र साधना और कठोर तपस्या है। साहित्यकार विकट परिस्थितियो मे भी कभी अपने कर्तव्य और लक्ष्य से विचलित नही होता। सभी देशो और कालो मे साहित्यकारो ने ही मानव को मानवता और दिव्य जीवन का पाठ पढाया है। अतएव ऐसे महारथियो की जीवन-गाथा सदैव उपयोगी ही प्रमाणित होगी।

हिन्दी मे जीवनी-साहित्य का विशेष अभाव है । इस सम्बन्ध मे पूज्य प० महावीरप्रसाद द्विवेदी ने एक आकर्षक शैली का निर्देशन किया था। स्वर्गीय प० पद्मसिह शर्मा इस कला के आचार्य थे। अब जीवित लेखको मे प० बनारसीदास चतुर्वेदी और भाई शिवपूजनसहाय अग्रगण्य है।

योरोपीय साहित्यकारो मे होमर से लेकर प्रौस्ट तक ४९ प्रमुख साहित्यकारो की जीवन-गाथा, उनकी श्रेष्ठ रचनाओ के कथाभाग और उनकी रचनाओ के महत्त्व आदि विषयो पर प्रकाश डाला गया है। केवल मूल तत्त्व का ही वर्णन है । एक कहानी-लेखक होने के कारण मैंने सक्षेप मे सभी अगो पर दृष्टिपात किया है। इन लेखको की कृतियो का विस्तृत अध्ययन करने की रुचि उत्पन्न करना ही इस पुस्तक का लक्ष्य है।

हिन्दी मे यह अपने विषय की अकेली पुस्तक है। मैंने भाषा और विचार दोनो ही सरलतापूर्वक व्यक्त करने का प्रयत्न किया है, जिसमे पाठक

ऊब न उठे। आरम्भिक अश यूनानी काल तक कुछ गहन है, इसके बाद के सभी लेखो को कहानी की भाँति आकर्षक बनाने का प्रयास किया गया है। पाठको को जिस स्थान से रुचिकर प्रतीत हो वही से वे पुस्तक पढना आरम्भ कर सकते हैं। इस पुस्तक के सभी लेख मौलिक और स्वतन्त्र रूप से लिखे गये हैं। ससार की किसी भी भाषा मे यह पुस्तक अनूदित हो सकती है। अभी तक मैंने जो कुछ विश्व-साहित्य का अध्ययन किया है, उसमे मुझे इस तरह की पुस्तक—जिसमे सब अग सम्मिलित हो—अप्राप्य ही रही है। इस पुस्तक के केवल दो लेख पत्र मे प्रकाशित हुए थे, शेष ४७ लेख अप्रकाशित है। पुस्तक का आकर्षण शिथिल न हो, इसलिए ये लेख मासिक पत्रो मे प्रकाशित न होकर प्रथम बार इस पुस्तक मे ही प्रकाशित हो रहे हैं।

३२ वर्ष निरन्तर हिन्दी-साहित्य की सेवा करने के कारण मेरे सहृदय पाठक इसी भाँति की पुष्ट रचनाओ की मुझसे आशा करते है, अतएव मैंने भी अपनी शक्ति और अपने अल्प ज्ञानानुसार इसे पूर्ण किया है। मुझे अपने परिश्रम पर सन्तोष है। 'योरोपीय साहित्यकार' को प्रस्तुत करने मे लगभग ७-८ सौ अग्रेजी पुस्तको का मुझे अध्ययन करना पडा है।

मैंने अपनी पुस्तक मे विचार-स्वातन्त्र्य पर पूर्ण ध्यान रखा है। किसी भी लेखक के साथ मैंने पक्षपात अथवा विरोध की भावना नही व्यक्त की है। मेरे लिए नित्जे, टालसटाय, कार्ल मार्क्स, गोर्की, प्रौस्ट और डौस्टोएईव्स्की सभी समान महत्त्व रखते है। रूसी लेखको के सम्बन्ध मे मैंने विशेष रूप से अध्ययन किया है, क्योकि अग्रेजी साहित्य मे सोवियत रूस के प्रति उदार नीति नही है।

मेरे मँझले पुत्र चि० श्यामशकर व्यास ने इस पुस्तक के सभी शीर्षक, लेखको के चित्र और कवर आदि प्रस्तुत किया है। पाश्चात्य लेखको की

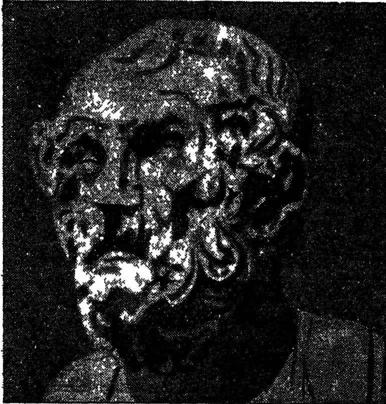
फोटो देखकर सभी चित्र तूलिका से अकित किये गये है। ये सभी चित्र मौलिक है और प्रथम बार इस पुस्तक मे प्रकाशित हो रहे है। लेखको की फोटो प्राप्त करने मे बडी कठिनाइयो का सामना करना पडा, फिर भी सम्पूर्ण लेखको के चित्र नही प्राप्त हो सके। पुश्किन का चित्र तो एक स्टाम्प टिकट से सहयोग लेकर बना है। अगले सस्करण मे अन्य लेखको के चित्रो को देने का प्रयत्न किया जायगा। मेरे छोटे पुत्र चि० हेमशकर व्यास ने पाडुलिपि को टाइप कर मेरे कार्य को बहुत हलका कर दिया।

मेरे शेष जीवन का एकमात्र ध्येय हिन्दी-साहित्य की सेवा ही है। दलबन्दी, सभा, सोसाईटी और सस्थाओ से सदैव अलग रहकर मै अपनी लगन मे तत्पर हूँ। मेरी अगली पुस्तक 'योरोपीय साहित्य' शीघ्र ही प्रकाशित होगी, जिसमे योरोपीय साहित्य का क्रमबद्ध इतिहास है।

**विनोदशंकर व्यास**

## सूचना

# तालिका



# होमर

( लगभग ८८४ ईसा पूर्व )

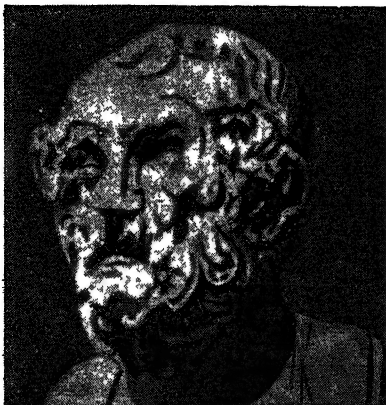
होमर के जीवन तथा रचनाओ के सम्बन्ध मे अनेक तर्क और विवाद-ग्रस्त प्रश्न उठते है। कोई कहता है कि अनेक कवियो के समूह का नाम ही होमर से सम्बोधित हुआ है, किन्तु अधिकाश लोगो का मत है कि होमर नाम का एक ही कवि था।

आज तक होमर के जन्म और रचना-काल के सम्बन्ध मे भी मतभेद है। ईसा पूर्व छठी शताब्दी से दसवी शताब्दी तक उसके सम्बन्ध मे अनुमान लगाया जाता है।

हम उन जिज्ञासुओ की पक्ति मे है जो यूनान के इतिहासकार हेरोडेटस के मत का समर्थन करते है।

हेरोडेटस यूनान का सबसे अधिक प्रामाणिक इतिहासकार माना जाता है। साधारण पाठक उसकी रचना पढकर आश्चर्य और भ्रम मे पड सकता है, किन्तु अध्ययनशील व्यक्ति जब सावधानी से उसका अर्थ निकालेगा तो उसे अत्यन्त विश्वसनीय समझेगा। इसका प्रमुख कारण यह है कि वह ऐतिहासिक घटनाक्रम और रचना-निरूपण के सम्बन्ध मे तीन प्रकार से अपना विचार उपस्थित करता है—(१) जिसको उसने विशेष छानबीन द्वारा सत्य समझा है, (२) जिसके सम्बन्ध मे लोगो का ऐसा मत है, (३) जिसको दूसरो से सुनकर उसने वैसा ही लिख दिया है और उस सम्बन्ध मे उसका अपना व्यक्तिगत कोई मत नही है।

हेरोडेटस एक विश्वसनीय रिपोर्टर था। उसका यह लिखना—वे ऐसा कहते है अथवा मैने सुना है, इन शब्दो मे और मेरी सम्मति मे बडा



# होमर

( लगभग ८८४ ईसा पूर्व )

होमर के जीवन तथा रचनाओ के सम्बन्ध मे अनेक तर्क और विवाद-ग्रस्त प्रश्न उठते है। कोई कहता है कि अनेक कवियो के समूह का नाम ही होमर से सम्बोधित हुआ है, किन्तु अधिकाश लोगो का मत है कि होमर नाम का एक ही कवि था।

आज तक होमर के जन्म और रचना-काल के सम्बन्ध मे भी मतभेद है। ईसा पूर्व छठी शताब्दी से दसवी शताब्दी तक उसके सम्बन्ध मे अनुमान लगाया जाता है।

हम उन जिज्ञासुओ की पक्ति मे है जो यूनान के इतिहासकार हेरोडेटस के मत का समर्थन करते है।

हेरोडेटस यूनान का सबसे अधिक प्रामाणिक इतिहासकार माना जाता है। साधारण पाठक उसकी रचना पढकर आश्चर्य और भ्रम मे पड सकता है, किन्तु अध्ययनशील व्यक्ति जब सावधानी से उसका अर्थ निकालेगा तो उसे अत्यन्त विश्वसनीय समझेगा। इसका प्रमुख कारण यह है कि वह ऐतिहासिक घटनाक्रम और रचना-निरूपण के सम्बन्ध मे तीन प्रकार से अपना विचार उपस्थित करता है—(१) जिसको उसने विशेष छानबीन द्वारा सत्य समझा है, (२) जिसके सम्बन्ध मे लोगो का ऐसा मत है, (३) जिसको दूसरो से सुनकर उसने वैसा ही लिख दिया है और उस सम्बन्ध मे उसका अपना व्यक्तिगत कोई मत नही है।

हेरोडेटस एक विश्वसनीय रिपोर्टर था। उसका यह लिखना—वे ऐसा कहते है अथवा मैंने सुना है, इन शब्दो मे और मेरी सम्मति मे बडा

अन्तर है और इन दोनो के अतिरिक्त घोर अन्तर है जब वह लिखता है—मै जानता हूँ, यह सत्य है।

होमर के सम्बन्ध मे वह लिखता है—पिछले समय मे ईश्वर का आकार, रूप और नाम आदि अज्ञात थे। मेरे मत से होमर मेरे काल से चार सौ वर्ष पूर्व था। इससे अधिक नही। उसने यूनानी देवताओ का नामकरण किया और उनका आकार और सम्मान उपस्थित किया। कुछ कवियो का कहना है कि यह सब होमर के पहले था, किन्तु मेरी सम्मति मे यह उसके बाद ही हुआ।

हेरोडेटस का जन्म ई० पू० ४८४ मे हुआ था। इस तरह वह होमर को ८८४ ई० पूर्व मानता था।

होमर अन्धा था। वह गायक और कवि के रूप मे एक स्थान से दूसरे स्थान पर चला जाता था। प्राचीन यूनान मे एजियन समुद्र के किनारे सभ्य नगरो मे होमर का विशेष सम्मान होता था और बडे आदर से लोग उसकी कविता का आनन्द लेते थे। उस समय तक पायिरस (एक प्रकार का कागज) की उत्पत्ति हो चुकी थी। उसपर लिखित उसकी कविताओ की प्रतियाँ भी प्राप्त हो जाती थी। धनी और बडे लोगो के यहाँ वे बडे आदर से पढी जाती थी।

यह होमर के साथ चलनेवाले उस दल के लिए, जो उसकी कविताओ की प्रति प्रस्तुत करता था, एक विशेष आय का साधन था।

वह अन्धा महाकवि गायक चलती-फिरती नाट्य-मडली की भाँति अपने दल के साथ एक नगर से दूसरे नगर मे भ्रमण करता था। इसी लिए होमर के बाद एजियन के किनारे के सात नगरो ने अपने अपने नगर को होमर का जन्मस्थान घोषित किया। किस स्थान पर उसका जन्म हुआ यह निश्चित न हो सका और 'सात नगर' ही उसके जन्मस्थान कहे जाते है।

होमर ने 'इलियड' और 'ओडेसी' नाम के दो महाकाव्य लिखे थे। इनमे से किसी के एक सर्ग को जनता के सम्मुख पढकर वह सुनाता था। होमर के बाद उसके कितने ही अनुगामी उसकी शैली का अनुकरण और उसके काव्य की समस्त कथा कठस्थ करते गये और यही उन लोगो की जीविका का एकमात्र सहारा था। यह एक सम्प्रदाय के रूप मे चलता रहा, ठीक उसी भाँति जैसे भारतीय सगीत की परम्परा अनुगामियो और शिष्यो द्वारा सुरक्षित रही।

मध्य युग के अन्तिम काल मे केवल पवित्र भाव के ध्यान से अथवा कौतूहल के कारण कुछ पुजारियो ने यूनानी भाषा के प्राचीन ग्रन्थो की नकल करके उसे छिपाकर सुरक्षित रखा था। वे आपत्ति-काल मे सम्भवत अपने लाभ की लालसा मे उनकी प्रतिलिपि करते रहे, जिन्हे वे स्वय भी न समझ पाते थे, क्योकि उस समय तक यूनानी भाषा सर्वसाधारण से लुप्त हो गई थी और लैटिन भाषा ही रोम के चर्च की भाषा होने के कारण प्रचलित थी।

यूनानी भाषा के साथ होमर भी अस्त हो गये थे। विश्व-साहित्य-ससार मे होमर के फिर से उदय होने की एक मनोरजक घटना है।

चौदहवी शताब्दी के मध्य मे लिओनटियूस पिलाट्स नाम का एक अत्यन्त आवारा शराबी और धूर्त आदमी था। वह अपनी चालाकी से पैसा पैदा करता और पुलिस को सदैव भ्रम मे डालता रहा। इस मनुष्य की सबसे बडी विशेषता यह थी कि वह यूनानी और रोमन भाषा का पूर्ण ज्ञाता था। उसने एथेन्स नगर मे विशेष शिक्षा प्राप्त की थी। संयोग से एक दिन विख्यात कहानी-लेखक बोकेच्चियो से उसकी भेट हो गई।

बोकेच्चियो के आग्रह पर पिलाट्स वेनिस से फ्लोरेन्स नगर आया। उसने बोकेच्चियो को बतलाया कि वह तुरन्त होमर का लैटिन मे अनुवाद कर सकता है। इस पर बोकेच्चियो अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसके कार्य मे सहयोग देने लगा। बोकेच्चियो के पास थोडी पूँजी थी और अपना एक मकान था। उस समय तक वह इटालियन भाषा मे अमर कहानियाँ लिख चुका था। इटालियन ही सर्वसाधारण की भाषा थी।

बोकेच्चियो पेटरार्क का बडा सम्मान करता था। पेटरार्क लैटिन भाषा का प्रकाण्ड विद्वान् था। उसकी धारणा थी कि यूनानी भाषा का अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है, क्योकि ससार मे जो अशान्ति और सकट घिरा हुआ है उसकी कुजी यूनानी भाषा मे ही है। वह बोकेच्चियो को इटालियन भाषा मे लिखने के कारण लज्जित भी करता था। इसी पेटरार्क के लिए—जो लैटिन मे होमर को पढना चाहता था—बोकेच्चियो ने पिलाट्स से उसका अनुवाद तीन वर्षो मे पूर्ण कराया।

उस समय समस्त फ्लोरेन्स नगर मे केवल पाँच मनुष्य ही होमर को जानते थे, जिनमे एक बोकेच्चियो भी था।

होमर को ससार के सम्मुख उपस्थित करने का एकमात्र श्रेय बोकेच्चियो ही को है। ग्रीक के लैटिन अनुवाद का पहला सस्करण १४८८ ई० मे

हुआ। १५०४ ई० और १५१७ ई० मे जो सस्करण प्रकाशित हुए उस समय तक होमर प्रसिद्ध हो चुका था और उस पर विद्वानो ने अन्वेषण आरम्भ कर दिया था।

साहित्य का इतिहास मानव के काल्पनिक विचार का इतिहास है। फिर भी इसके अध्ययन मे कुछ बाह्य तथ्यो पर ध्यान देना भी आवश्यक है। इलियड और ओडेसी मे प्राचीन गाथाओ का सग्रह है। इनमे पूर्व की अपेक्षाकृत ऊँची और सौन्दर्य्यानुप्राणित सभ्यता और पश्चिम की अशक्त पर अपेक्षाकृत कट्टर और सुसज्जित सभ्यता के बीच के सघर्ष की झलक मिलती है।

यूनान और ट्राय वालो के सघर्ष का वास्तविक कारण क्या है? सम्भवत यह कहना कठिन होगा। क्या सचमुच रूढिवादी यूनानियो को यह असह्य था कि पूर्व का कोई अति सुन्दर राजकुमार किसी यूनानी सुन्दरी को उठा ले जाय? इस प्रश्न का उत्तर देना कठिन होगा। पर इतना स्मरण रखना चाहिए कि इलियड मात्र से यूनान और ट्राय की गाथाएँ समाप्त नही हो जाती। यूनानी, हेलेनी, सिकन्दरी, एशियाई और लैटिनी व्याख्या और मीमासा उपलब्ध हो तो एक बहुत विशाल साहित्य तैयार हो जाय।

यदि इलियड और ओडेसी को भूमध्यसागर की सम्पूर्ण यूनानी और रोमन सभ्यता का बाइबिल समझ लिया जाय तो पूरा विषय बिलकुल स्पष्ट हो जाय। इस प्रकार होमर की रचनाओ को लघुतर और बृहत्तर यूनान, यहाँ तक कि यूनान और रोम से प्रभावित ससार की दूसरी सभ्यताओ का, धार्मिक ग्रथ समझना चाहिए। होमर की रचनाओ में एक साथ धर्म, नैतिकता, स्वास्थ्य, घरेलू धधे, वेदान्त और वीरता का उल्लेख है। इनमे आदिम और अविशृखलित भूमध्यसागरीय मानव-जगत् के लिए आवश्यक और वाछनीय सभी विषयो का समावेश है।

विशेष ध्यान देने की बात यह है कि होमर की रचनाओ ने राजधानी और अधीन देशो के जीवन को समान रूप से प्रभावित किया। हाँ, इनमे अवश्य ही दूसरी काल्पनिक गाथाएँ और व्याख्याएँ जोड दी गई जिनका जन-जीवन से सम्बन्ध नही था।

एशियाई वक्ताओ और व्याख्याताओ का उल्लेख करते हुए हेरोडेटस कहता है कि हेलन की कहानी नितान्त असगत है। क्या यह सम्भव था कि यूनानी सघ एक स्त्री के लिए युद्ध छेड़ देता जब कि उसी काल में

प्रतिदिन आठ सौ कुमारियाँ बाजार मे सस्ते दाम पर बिकती थी ? इस प्रकार वह युद्ध बिलकुल निराधार बातो के लिए लडा गया।

होमर की रचनाओ ने जो सबसे बडा काम किया वह यह है कि उसने पूर्व के भूमध्यसागरीय धर्म की एक केन्द्रीय आधारशिला स्थापित की। यूनानी पुराणो को कोई अलग वस्तु नही समझना चाहिए।

होमर अपने भावो को पौराणिक अतीत काल से नही लाया, उसने जीवन के अपने अनुभव के आधार पर उनकी रचना की। होमर अपने देवताओ की पूजा करता है, पर वह यह नही चाहता कि उसके वे देव-पात्र एक दूसरे को गम्भीर दृष्टि से देखें, जैसा कि वह स्वय इनमे से प्रत्येक को देखता है।

यूनानियो का मत है कि आपोलो अपने कवियो को पागल बना देता था, जिससे वे उससे सलाह ले और इस प्रकार उसका विचार मानवता की परीक्षा के लिए प्रकाशित हो सके। पर प्रत्येक कवि की अपनी प्रवृत्ति, अपनी कल्पना होती थी, इसलिए वे देवताओ द्वारा आरोपित पागलपन से उतना प्रभावित नही हो पाते थे।

इसी से ये देवता कभी-कभी इन लोगो को अपने उपदेशो से वचित कर देते थे। उदाहरणत हिब्रू ईश्वर ने अपने अधीनस्थ साउल को अपने उपदेशो से वचित कर दिया। इसी तरह आपोलो ने भी अपने कवियो को अपने उपदेशो से वचित कर दिया था।

महाकवि होमर ने अपने दोनो महाकाव्यो इलियड और ओडेसी मे पहिले किसे लिखा इस सम्बन्ध मे भी मतभेद है, लेकिन दोनो रचनाओ को पढने के पश्चात् अनुमान होता है कि इलियड को ही उसने पहले लिखा होगा, क्योकि इलियड के अनेक पात्रो का विकास ओडेसी मे हुआ है।

इलियड की कथावस्तु बहुत सरल है। यूनान का सम्राट् आगामेनन, जिसे होमर एचिया कहता है, अपने भाई, स्पार्टा के मेनेलाउस के साथ अपने अधीन सभी राजकुमारो को ट्राय के राजा प्रियाम के विरुद्ध लडने के लिए भडकाता है, क्योकि प्रियाम का एक बेटा, पेरिस, मेनेलाउस की स्त्री—आरगोस की सुन्दरी हेलन—को लेकर भाग जाता है। एचिया की सेनाएँ नौ वर्षो तक अपने जहाजो के आसपास ट्राय के समुद्री तटपर तम्बू गाडे रहती है, लेकिन यह झगडा तय नही हो पाता। इस बीच मे पेल्यूस के बेटे और मिरमिन्डस के राजकुमार एचिलीस के नेतृत्व मे ट्राय के कई नगरो को लूट लेते है।

इन लूटो के फलस्वरूप एचिलिस और उसके सेनापति के बीच एक आपसी झगडा खडा हो जाता है। आगामेनन को पुरस्कार-स्वरूप क्राइसीइस नाम की युवती मिलती है और वह उसे उसके बाप को सिपुर्द करने से अस्वीकार करता है। उसका बाप आपोलो का एक स्थानीय पुजारी है, जो अपनी लडकी को छुडाने के लिए धन लेकर आता है, किन्तु निराश लौट जाता है। पुजारी अपने ईश्वर की प्रार्थना करता है और इसके फलस्वरूप महामारी फैल जाती है।

जनता आगामेनन को बाध्य करती है कि वह पुजारी की लडकी उसको वापस कर दे और आगामेनन को प्रायश्चित्त-स्वरूप ऐसा करना पडता है। पर वह एचिलीस को पुरस्कार मे प्राप्त लडकियो मे से एक ब्रिसीइस नामक लडकी पर अधिकार कर अपने घाटे की पूर्ति कर लेता है।

इचिलीस बडा क्रुद्ध हो जाता है और आगे लडने से इनकार कर देता है और रणक्षेत्र से अपनी मिरमिडन सेना हटा लेता है। एक क्षणिक विराम-सन्धि होती है, जिसमे मेनेलाउस और पेरिस को द्वन्द्व युद्ध करने का अवसर दिया जाता है। इसके बाद दोनो सेनाएँ फिर रणक्षेत्र मे जुट जाती है, पर एचिलीस की अनुपस्थिति के कारण एचिआ की सेनाएँ, जो अबतक ट्राय की सेनाओ को नगर की दीवारो के अन्दर ही बने रहने के लिए बाध्य किये रहती है, केवल अपनी सुरक्षा भर कर पाती है। यहाँ तक कि इन लोगो को अपने जहाजो और तम्बुओ के आसपास खाइयाँ और दीवारे बनानी पडती है।

पर इनकी यह रक्षा-व्यवस्था ट्राय के सेनापति हेक्टर द्वारा ध्वस्त कर दी जाती है। वह एचिआ के जहाजो मे से एक मे आग लगा देता है।

अब तक एचिलीस सभी तरह की प्रार्थनाओ के बाद भी लडने के लिए प्रस्तुत नही होता, फिर वह किसी तरह अपने मित्र पेट्रोक्लस को मिरमिडन सेनाओ का सेनापतित्व प्रदान करता है और उसे एचिअन सेनाओ की सहायता के लिए भेजता है। पेट्रोक्लस इस मिशन मे सफल होता है, किन्तु वह इतना आगे बढ जाता है कि ट्राय की दीवारो के अन्दर हेक्टर द्वारा मारा जाता है।

इस दुर्घटना से एचिलीस जाग उठता है। वह हेक्टर पर क्रुद्ध हो जाता है और अपने मारे गये साथी के लिये बडे शोक मे पड जाता है। वह आगामेनन से समझौता कर लेता है और एक बार फिर मैदान मे उतर पडता है। ट्राय की सेनाएँ फिर एक बार अपने नगर की दीवारो के भीतर खदेड दी जाती है, और अन्त मे वह हेक्टर को मार डालता है।

इतने ही से सन्तुष्ट न होकर वह अपने शत्रु के शव को अपमानित करता है।

हेक्टर के पिता राजा प्रियाम को देवता लोग, रात मे एचिलीस के तम्बू मे जाकर हेक्टर का शव लाने के लिए प्रेरित करते है (एचिआ वाले शव-सस्कार पर विशेष ध्यान देते थे)। एचिलीस आर्द्र हो जाता है और हेक्टर की शव-क्रिया के लिए छोटा-सा युद्ध-विराम होता है। यही इलियड की समाप्ति हो जाती है।

कथा दु:खान्त है, किन्तु शव-दाह के साथ-साथ खेल-कूद की योजना होती है और अनेक प्रकार की दौड और वीरता के प्रदर्शन के लिए पुरस्कार-वितरण होता है। भयानक विध्वस के बाद भी मनोरजन का वातावरण उपस्थित होता है। नवनिर्माण और नवचेतना का प्रादुर्भाव होता है। इससे प्रतीत होता है कि दु:खान्त का उद्देश्य विनष्ट वस्तुओ के लिए शोक मनाना नही, बल्कि कोई समाधान सुझाना है।

होमर ने मानव-जीवन और उसकी भिन्न-भिन्न मनोवृत्तियो का इतना सजीव विश्लेषण किया है कि तीन हजार वर्षो के बाद भी आज वे परिवर्त्तित नही हुई है। होमर ने लिखा है—युद्ध मनुष्य का व्यवसाय है।

आज भी हमारे युग मे युद्ध पूँजीपतियो का व्यवसाय ही है, लेकिन उस समय के और आज के दृष्टिकोण मे अन्तर है। उस युग मे वीरता और पुरुषार्थ ही पुरुष का अस्त्र था। आज विश्वासघात और कूटनीति ही प्रमुख साधन बन गये है। बिना युद्ध के ही घर बैठे मानव का सर्वनाश करने के लिए ऐटम और हाइड्रोजन बमो का आविष्कार हो रहा है।

किन्तु उस समय रणक्षेत्र मे प्रतिद्वन्द्वी को ललकारकर सावधान करना और प्रचलित नियमो के अनुकूल अस्त्रो का ही प्रयोग उचित समझा जाता था। सूर्यास्त तक युद्ध का निर्णय न होने पर दोनो पक्ष के योद्धा किस तरह प्रसन्नतापूर्वक रणक्षेत्र से आपस मे उपहारो का आदान-प्रदान कर वापस लौटते थे। (हेक्टर ने अयास को एक सुन्दर तलवार भेट की और अयास ने हेक्टर को एक सुनहली बेल्ट दी—इलियड बुक ७)।

वीरो का रण-कौशल दिखलाते हुए होमर ने उनके हृदय मे तनिक भी दया और क्षमा का भाव जाग्रत होने नही दिया था। अपने शत्रु की मुक्ति के लिए अनेक प्रलोभन मिलने पर भी तत्काल ही उसे मौत के घाट उतार दिया गया था। किसी भी स्थिति मे उसे छोडा नही गया। दूसरी ओर कितने ही वीर योद्धा, रणक्षेत्र मे अपने मित्रो के वीर-गति प्राप्त करने पर, सरल बालको की भाँति बिलखते और अश्रुपात करते थे।

मनुष्य की क्रूरता चरम सीमा पर पहुँच जाती है जब पराजित शत्रु के प्राण लेने पर भी उसकी प्रतिहिंसा शान्त नही होती। वह शव का हाथ और सिर काटकर अपने साथ ले जाता है और लोगो को दिखलाकर अपने को विजयी समझता है।

होमर लिखता है—मनुष्य सब चीजो से थक जाता है। अधिकता की सीमा पर पहुँचने पर वह प्रेम, निद्रा, सगीत और नृत्य से ऊब जाता है और लम्बे युद्ध को देखकर वह चिल्ला उठता है—'पर्याप्त', लेकिन ये ट्राय-जन साधारण मनुष्य नही हैं, ये युद्धलोलुप है।

युद्ध मे जाते समय हेक्टर अपने पुत्र को गोद मे लेने के लिए हाथ फैलाता है। पर लडका चिल्लाकर अपनी नर्स की छाती से चिपक जाता है। वह अपने पिता के काँसे के शिरस्त्राण को देखकर डर जाता है। इस पर हेक्टर और उसकी स्त्री हँस पडती है। हेक्टर अपना शिरस्त्राण भूमिपर रख देता है, फिर वह अपने बेटे को चूमता है, अपनी गोद मे लेकर प्यार करता है और जिउस और दूसरे देवताओ से प्रार्थना करता है—हे देवताओ, आशीर्वाद दो कि मेरा यह लडका मेरे जैसा ही ट्राय मे सर्व-प्रसिद्ध हो, मेरे ऐसा ही वीर और बलशाली हो और इलियड का शक्ति-शाली राजा हो। जब यह युद्ध-क्षेत्र से लौटकर आवे तो सब लोग यही कहे—'यह एक ऐसा पुरुष है जो अपने पिता से भी श्रेष्ठ है'। यह घर पर अपने मारे हुए शत्रुओ के खून से रँगे कवच आदि लाने मे समर्थ हो और इस प्रकार अपनी माता को अपनी विजय से प्रसन्न कर सके।

होमर भाग्यवादी था। उसका विश्वास था कि मनुष्य का शरीर धारण कर कोई भी कायर अथवा वीर भाग्य से दूर नही हो सकता।

वह लिखता है—मानव अपनी पीढी मे वृक्ष की पत्तियो की भाँति है। पवन चलता है और उस वर्ष की पत्तियाँ बिखर जाती है, लेकिन वृक्ष फिर नई कोपलो को जन्म देता है और नवीन पत्तियाँ वर्षा मे हरी-भरी हो जाती है। इसी तरह एक पीढी का विकास होता है और दूसरी अपने अन्त के समीप पहुँचती है।

इलियड को जब हम भारतीय दृष्टि से पढते हैं तब उसमे हमे भार-तीय जीवन से बहुत समानता दिखाई पडती है; जैसे कोई पवित्र कार्य करने के पहले दोनो हाथ धो डालना, क्षमा माँगने के लिए नम्रतापूर्वक पैरो पर गिर पडना, युद्ध के समय स्त्रियो का घर मे रहकर चर्खा चलाना और गृहस्थी का कार्य करना। मरने पर लकडी की चिता पर शव को जला

देना, मृत्यु के बाद दस दिन तक विलाप करना और बारहवे दिन भोज देकर निवृत्त होना, इत्यादि।

जिस तरह भारतीय ग्रामीण स्त्रियाँ पति की मृत्यु पर करुण क्रन्दन और विलाप करती है, ठीक उसी स्वर मे हेक्टर की पत्नी का रुदन सुनाई पडता है।

भारत के दो महान् ग्रन्थ वाल्मीकीय रामायण और महाभारत का होमर पर निस्सन्देह प्रभाव पडा था। इन ग्रन्थो से होमर की रचनाओ की तुलना करने पर बहुत सी बाते समान प्रतीत होती है। भारतीय विद्वानो के लिए अभी यह विषय अनुसन्धान का है।

अब सक्षेप मे होमर के दूसरे महाकाव्य ओडेसी की कथावस्तु दे देना उपयुक्त होगा।

यह कहानी ओलिम्पियन देवताओ के एक सम्मेलन से आरम्भ होती है। यह ट्राय के पतन के दस वर्ष बाद की घटना है। जिउस सम्मेलन का अध्यक्ष बनता है और वह आगामेनन के भाग्य का पर्यालोचन करता है। आगामेनन ट्राय की विजय से लौटते समय अपनी स्त्री, क्लाइहीमनेस्त्रा और उसके प्रेमी ईजीस्यूस द्वारा मार डाला जाता है।

होमर इस दु खान्त कथा को प्रस्तुत करते हुए कलंकिनी क्लाइहीमनेस्त्रा और ओडेसीउस की पतिव्रत-धर्म-परायणा महिषी पेनेलोप की पारस्परिक तुलना करता है।

इसके बाद ओडेसीउस की चर्चा चलायी जाती है और यह विचार किया जाता है कि इस दुर्भाग्य-ग्रस्त पथ-भ्रष्ट राजा को फिर से उसकी राजधानी मे प्रतिष्ठित किया जाय।

ओडेसीउस समुद्र के देवता पोसीडन के द्वेष के कारण दस वर्षो तक भटकता रहा और अपने निवास-स्थान इथाका न लौट सका। वह ओगीजिया द्वीप मे कालिरसो नाम की परी द्वारा बदी बना लिया जाता है, यह एक अपेक्षाकृत कम शक्तिशालिनी देवी है जो पिछले सात वर्षो से ओडेसीउस को अपने वश मे करने का प्रयत्न करती रही है। अस्तु।

यह निश्चय किया जाता है कि देवताओ का दूत हरमिज ओडेसीउस की मुक्ति के लिए भेजा जाय। उधर एथिन नाम की देवी इथाका जाकर ओडेसीउस के पुत्र, हेलेमाकूस को प्रेरित करती है कि वह जाकर अपने बहुत दिनो से खोये हुए पिता की खोज करे और यदि वह न मिल सके तो उसकी अनुपस्थिति मे जो अवाञ्छनीय स्थिति उत्पन्न हो गई है उसको सम्हाले।

ओडेसीउस की अनुपस्थिति मे इथाका के बहुत से राजकुमार और आस-पास के द्वीपो के दूसरे प्रेमी लोग पेनेलोप को ब्याहने के लिए उसके महल को घेरे रहते है। देवताओ के इस सम्मेलन मे इन्ही प्रेमियो के विनाश का उपाय ढूँढा जाता है।

होमर बडा दूरदर्शी था। उसने नाटक-गृह बनने के पहले ही नाटको की उत्पत्ति की थी। उसकी रचनाओ को पढकर विश्वास होता है कि वह एक महान् कथाकार था। इसमे सदेह नही कि वह साहित्य की खान था, जिसमे से अगणित रत्न विश्व मे निकल चुके और निरन्तर निकलते रहेगे।

---

# यूनानी नाटककार

यूनानी रगमच अपने विकास की चरम सीमा पर पहुँचकर एक राज्य-सचालित सस्था बन गयी थी। वहाँ दासो और निम्न समाज के लोगो के लिए समान रूप से मनोरजन का साधन प्रस्तुत होता था। यह इसकाईलस, साफोक्लीज, यूरिपिडीज और ऐरिस्टोफिनीज आदि नाटककारो का युग था। प्रत्येक व्यक्ति नाटक के टिकट के लिए दो ओबोल (आठ आने के लगभग) देने मे समर्थ होता था। यदि कोई असमर्थ होता तो वह नगर के खजाची से मिलकर प्रार्थना करता था कि उसका शुल्क माफ हो। यही एथेस के नगर-राज्य का नियम था।

एथेस का सबसे पहिला रगमच एक्रोपोलिस की ढाल पर डिओनिसस एल्यूथीरिउस वाला रगमच था। इसका अवशेष अब तक सुरक्षित है। सबसे पहली सीटे लकडी की बनी थी और रगमच भी लकड़ी का ही बना था। डाक्टर फिलकिगर के अनुसार सम्भवत इसकाईलस, साफोक्लीज, यूरिपिडीज के दु खान्त और ऐरिस्टोफिनीज के सुखान्त नाटको को दर्शको ने इन्ही लकडी की सीटो पर बैठकर देखा होगा। एथेस का रगमच सम्भवत. लिकरगस नाम के वित्त मत्री के समय मे बनकर तैयार हुआ था, जिसका कार्यकाल ३३८ से ३२६ ई पू तक था। इस बात का प्रमाण है कि एथेस का प्राचीन रगमच बाजार की समतल भूमि पर था। इस कथा के अनुसार यह इमारत इसकाईलस, प्राटिनास और कीरिलस के बीच के एक सघर्ष

मे टूट गया था और इससे बहुत से लोग मर गये थे। इस पर यह निश्चय हुआ कि रगमच की सीटो के लिए कोई प्राकृतिक पहाडी जैसी जगह होनी चाहिए।

यह सम्भव है कि आरम्भ मे यूनानी नाटक धार्मिक उत्सवो के अवसर पर खेले जाने के लिए रचे गये हो, पर वे तत्वत. कभी धार्मिक न रहे। नाटक सर्वथा धर्म-निरपेक्ष होता था और धार्मिक भावना के ठीक विपरीत पडता था। ये नाटक-प्रतियोगिताएँ दिसम्बर या जनवरी के लिनीयन त्यौहार के अवसर पर और मार्च या अप्रैल मे होनेवाले डायोनिसियन त्यौहार के अवसर पर वर्ष मे दो बार होती थी। ये धार्मिक पर्व हुआ करते थे। यहाँ धार्मिक का अभिप्राय धर्म से नही है। वास्तव मे ये धार्मिक पर्व तब आरम्भ हुए जब यूनानियो ने धार्मिक मान्यताएँ ही छोड दी थी। डायोनिसस के पर्व के अवसर पर उसकी प्रतिमा मन्दिर से उठाकर रगमच पर ले जाकर रखी जाती थी, जिसका अभिप्राय यह था कि उस अवसर पर वह अपने मन्दिर से छुट्टी लेकर जनता से मिलता था। इस अवसर पर काम-धाम बन्द हो जाता था। दास अपने स्वामी से समता के आधार पर मिलता था, और सब एक दूसरे से मजाक करने मे स्वतन्त्र थे और गाली देने की पूरी छूट होती थी। बिना ऊँच-नीच के भेद-भाव के, इस अवसर पर, हर एक को शराब पीने तथा खुलकर प्रेम करने की अनुमति होती थी।

इसकाईलस के काल मे दुखान्त नाटक पूर्वी भूमध्यसागर की एक कला हो चुकी थी। शताब्दियो से लोगो का यह विश्वास हो चुका था कि ऐतिहासिक या दुखान्त घटनाएँ ही दर्शको के सामने घटा करती थी। रगमच पर केवल एक वक्ता होता था और उसकी वाणी और क्रियाओ को समझाने के लिए 'कोरस' हुआ करता था। इसकाईलस ने इस कला में नवीनता की उद्भावना की थी। इसकाईलस, साफोक्लीज और यूरिपिडीज ने ऐसी कला-कृतियाँ प्रस्तुत की जो उन परिस्थितियों मे अनिवार्य होने के साथ ही उनकी मौलिक कृतियाँ थी। उनसे पहले या बाद की कला को देखने पर यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि उनकी कृतियाँ बेजोड है। उनमे त्रुटि नाममात्र के लिए भी नही दिखाई पडती है।

होमर की रचनाओ मे भी त्रुटि नही दिखाई पड़ती। पर उसकी वर्णनात्मक शैली अनिवार्यत उसकी कथा-वस्तु का सूत्र अविच्छिन्न नही छोड पाती। इस दृष्टि से इनमे यूनानी दुखान्तो की कथा-वस्तु की एकसूत्रता नही दिखाई पडती, तथापि इलियड, और कुछ हद तक ओडेसी ने भी

तीनो दुखान्त नाटककारो को किसी न किसी रूप मे प्रभावित किया था। यदि उस घाटी मे बन्धन मे रखे गये प्रोमेथिउस के मौन की तुलना एचिलिज के मौन से करे, जब पेट्रोक्लस का शव उसके तम्बू मे लाया जाता है, तो दोनो मे एक बहुत बडा मेल दिखाई पडता है। इस प्रकार इलियड मे विशेष अन्वेषण करने पर ऐसे बहुत से उदाहरण दिये जा सकेंगे।

होमर की रचनाएँ यूनानी बाइबिल समझी जाती थी, इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि यूनानी नाटककार उसकी दोनो रचनाओ से ही अपनी कथा-वस्तु चुना करते थे। महाकाव्य वाली शैली प्रत्येक जाति के इतिहास मे किसी न किसी समय आवश्यक होती है। किन्तु जब वह एक बार पूर्ण विकास को प्राप्त कर लेती है तो दूसरी शैलियो का विकास अनिवार्य हो जाता है। महाकाव्य एक ही स्वर मे इतिहास विशेष को गाता है। यदि इसको उपमा देकर समझाना चाहे तो यह कह सकते है कि जब मनुष्य एक समूह मे किसी यात्रा के लिए निकल पडता है, तब मार्ग मे विविध गानो और सामूहिक गानो से उसका मनोरजन हो पाता है, किन्तु जब वह किसी नगर मे बस जाता है, तब उसे किसी स्थायी मनोरजन के साधन की आवश्यकता पडती है। ई० पू० १००० से ई० पू० ५०० तक भूमध्य-सागर के पूर्वी तटो और द्वीपो मे यही बात हुई। पहले तो होमर की शैली के गीत थे जिन्हे एक ही पात्र गाता था। बाद मे, बीच-बीच मे, सामूहिक गान सम्मिलित किये जाने लगे।

यूनानी नाटको की उस अवस्था मे इलियड और ओडेसी जैसी कथाओ को नाटक का रूप देना असम्भव था। धीरे-धीरे नृत्य और अपेक्षाकृत विकसित 'कोरस' आदि जोडने से यूनानी नाटक विकसित होते गये। इसकाईलस से पहिले यूनानी नाटक धार्मिक पर्वों के अवसर पर की जाने-वाली एक पूजा के रूप मे था। उस समय के उच्च वर्ग वाले इन नाटको के द्वारा श्रमिक वर्ग मे यह धारणा बनाना चाहते थे कि उनको (श्रमिको को) उच्च वर्गो की सेवा—अनुशासन और आज्ञाकारिता के साथ—करनी चाहिये, क्योकि वे ओलिम्पस के देवताओ के अश है।

यूनानी दुखान्त और सुखान्त नाटको मे सभी विषयो, यथा नैतिक, राजनीतिक, सामाजिक, या फिर साधारण बातचीत का भी समावेश रहता था। एथेंस के यूनानी लोग अपने इतिहास के एक बहुत बडे समय तक, बडे विवादप्रिय और बकवादी लोग थे। इसका कारण उनका प्रजातान्त्रिक और साम्यवादी सघटन था जहाँ प्रत्येक नागरिक को अपने

समय का कुछ भाग अगोरा या असेम्बली की बहस मे लगाना पडता था। दास प्रथा होने के कारण भी प्रत्येक व्यक्ति को कुछ अवकाश के क्षण प्राप्त हो जाते थे। इसके अतिरिक्त, उचित शिक्षा-व्यवस्था के कारण उनके मस्तिष्क और बुद्धि का अच्छा विकास हो गया था। पुरुषो को गार्हस्थ्य कार्यो से मुक्ति मिली हुई थी, क्योकि यह कार्य सर्वथा स्त्रियो का उत्तरदायित्व समझा जाता था।

यद्यपि समय-समय पर युद्ध होता रहता था और राजनीतिक प्रश्न कभी कभी सर्वाधिक महत्त्व के प्रश्न हो जाते थे, किन्तु बीच-बीच मे इन बातो से अवकाश मिल जाया करता था। ऐसे समय मे जीवन, जगत् की प्रकृति, लेउस के परिवार के भाग्य या वश-परम्परा पर बहस हुआ करती थी। इसके अतिरिक्त, इस पर विचार किया जाता था कि इसका-ईलस शराबी है या नही। इसी प्रकार दूसरे नागरिको के गुण-अवगुण की चर्चा हुआ करती थी।

यूनानी नाटको मे सबसे उल्लेखनीय नाटककारो की स्वतत्रता है। केवल स्वतत्रता ही नही, अपितु स्वच्छन्दता भी है। वे साधारण मानहानि तक ही नही रुकते थे। उदाहरणत- ऐरिस्टोफिनीज को राज्य के अधिनायक आलसिबियाडीज और क्लिअन की कडे से कडे शब्दो मे आलोचना करने मे कोई झिझक नही होती थी। इसका कारण यह था कि सभी राजनीतिक, सामाजिक या व्यक्तिगत विषयो मे जनमत का बडा महत्त्व था। यूनानी नैतिकता की आधार-शिला यह प्रश्न था कि जनता क्या समझेगी? जनमत का महत्त्व इतना था कि ऐसे तार्किक शिक्षको का एक सम्प्रदाय ही खडा हो गया जो सोफिस्ट नाम से प्रसिद्ध हुए। इनका काम यह था कि ये जनता को जीवन का ढग सिखावे, ठीक वैसे ही जैसे आजकल पश्चिमी देशो की व्यापारिक सस्थाएँ व्यापार-मनोविज्ञान की शिक्षा दिया करती है।

यूनान मे, आरम्भ मे, 'कोरस' ही नाटक का एक रूप था। कोरस मे एक ही व्यक्ति अपनी भावनाओ को गीत के रूप मे उपस्थित करता था। यह गीत दुखान्त ही होता था। आनन्दातिरेक मे ही एक अभाव की वेदना की पुकार छिपी रहती है। यूनानी पर्वो मे मानव-प्रकृति भावुक और सवेदनशील होती हुई सी जान पडती है। नशे मे चूर लोगो के ये गीत प्राचीन यूनान मे अश्रुतपूर्व थे। डायोनिसस का सगीत विशेष रूप से भय और आतक उत्पन्न करता था। जो सगीत आपोला-कला के नाम से ज्ञात था, वह स्वर-लहरी भर था जो बाद मे एक व्यवस्थित रूप मे आया।

आपोला का सगीत जहाँ शिल्प से अधिक सम्बन्ध रखता था वहाँ डायोनिसस का सगीत मानव की भावनाओ को अभिव्यक्त करने मे समर्थ होता था।

गीतिकार की प्रतिभा चित्रो और प्रतीको के एक जगत् के प्रति जागरूक रहती है, यह उसकी आत्म-विस्मृति और एकता का परिणाम होता है। इस अवस्था मे एक अपूर्व रग, एक अपूर्व घटना और तीव्रता होती है। यह दूसरे कलाकार और महाकवियो मे नही मिलती। महाकवि अपने कथा-नायको मे ही रमे रहते है। इसके ठीक विपरीत, गीतिकारो के चित्र उनकी आत्मा के चित्र होते है। निस्सन्देह, इनमे और दूसरे जीवित प्राणियो मे अन्तर होता है। इन कवियो का व्यक्तित्व आधारिक होता है। जर्मन दार्शनिक शोपेनहावर के अनुसार गीति, गीतिकार की अपनी इच्छा होती है, कभी-कभी अतृप्त इच्छा जो भावुकता, आसक्ति या मन की एक विशेष प्रवृत्ति परिलक्षित कराती है। इसलिए गीतियो मे गीतिकार की व्यक्तिगत इच्छा और उसके वातावरण के प्रभाव का एक अच्छा मिश्रण मिलता है। इस मेल के लिए भिन्न-भिन्न सम्बन्धो की कल्पना की जाती है। गीतिकार की इच्छा उसके वातावरण को अपने रग मे रँग लेती है, उसी प्रकार से वातावरण भी गीतिकार की इच्छा को अपने रग मे रँग लेता है। वास्तविक गीति इन्ही दोनो तत्त्वो के सम्यक् मिश्रण की अभिव्यक्ति होती है।

यूनानी नाटको मे दु खान्त का उपयोग कैसे हुआ ? इस सम्बन्ध मे एक प्राचीन कहानी है—राजा मिडास बहुत दिनो तक जगलों मे बुद्धिमान् सिलेनस को खोजता रहा जो डायोनिसस का साथी था। जब वह उसके अधिकार मे आ गया तब राजा मिडास ने उससे पूछा कि मनुष्य के लिए सबसे उपयोगी वस्तु क्या है ?

स्थिर और मौन होकर उस किन्नर ने कोई उत्तर नही दिया।

जब राजा ने हठ किया तो वह ठहाका मारकर हँसा और कहने लगा—अरे मरणशील मनुष्य-जाति, दुर्दैव और विपत्ति की सन्तान ! क्यो मुझसे ऐसे प्रश्न का उत्तर चाहते हो, जो तुम्हारे लिए न सुनना अधिक श्रेयस्कर होगा ! जो सबसे अच्छी वस्तु है वह तो सदैव तुम्हारे लिए अप्राप्य रहेगी। वह है, जन्म न लेना, अस्तित्व मे न आना, 'कुछ नही' रहना। पर इसके बाद तुम्हारे लिए जो अच्छी वस्तु है, वह मृत्यु है। इस रहस्य को यूनानी दु.खान्त नाटको की कुजी समझना चाहिए। यूनानी लोग, जीवन अस्तित्व मे आने के दु ख को जानते थे। यही तथ्य यूनानी दुःखान्तो के विभिन्न पात्रो से प्रकट होता है।

# इसकाईलस

(५२५–४५६ ईसा पूर्व)

इसकाईलस यूनान का प्रथम नाटककार था। अपनी युवावस्था मे उसने भिन्न-भिन्न प्रकार की कविताएँ लिखने का प्रयत्न किया था। पच्चीस वर्ष की अवस्था मे उसने दु खान्त लिखने का प्रथम प्रयास किया था। अब उसके लिखे नाटक नही मिलते और उसके सम्बन्ध मे भी विशेष पता नही लगता। इतना ज्ञात है कि अपने नाटक के प्रदर्शन मे इसकाईलस स्वय उसमे एक पात्र बना था। इसके बाद इस्काईलस मराठन के युद्ध मे एक सैनिक के रूप मे आता है। वह अपने को एक नाटककार की अपेक्षा सैनिक अधिक मानता था। मराठन के युद्ध के दस वर्ष बाद उसने सलामिस के युद्ध मे भाग लिया था और उसके पश्चात् प्लेटिया मे एथेस की सेना मे भर्ती हुआ था। दोनो युद्धो के बीच और उनके बाद वह व्यग्य नाटक और दु खान्त नाटक लिखता रहा। यह निश्चित रूप से ज्ञात नही कि इन व्यग्य नाट्यो की वास्तविक रूपरेखा क्या थी। पर इतना मालूम है कि कुछ ऐसे दृश्य थे, जिनमे शब्द और सगीत होते थे। इसके पात्र बकरे की खाल के से कपडे पहनते थे, नकाब और पूँछ लगाते थे।

व्यग्य नाटको और दु खान्तो मे मुख्य अन्तर यह था कि दु खान्तो के चरित्र अधिक परिष्कृत होते थे। ठीक वैसे ही जैसे व्यग्य नाटक 'कोमस' नाट्यो से अधिक परिष्कृत थे।

४७२ ई० पू० मे डायोनिसस के उत्सव के अवसर पर इसकाईलस को उसके नाट्य-चातुर्य्य के लिए एक पुरस्कार मिला था। उस समय की रचनाओ मे केवल 'परसी' अब तक उपलब्ध है। यदि अरस्तू को प्रमाण माने तो यह मानना पडेगा कि अपनी इस रचना के समय तक इसकाईलस ने दु खान्त नाटको मे क्रान्ति उपस्थित कर दी थी। उसने न केवल एक पात्र से अधिक वाले नाटक लिखे, अपितु नाटक की कथा-वस्तु समसामयिक ऐतिहासिक घटनाओ से ली थी। यह अभूतपूर्व प्रयत्न था। इसकाईलस ने सालामिस के युद्ध मे भाग लिया था, जिसमे फारस के आक्रामको की शक्ति छिन्न-भिन्न हो गयी थी और कुछ समय के लिए एथेस की प्रमुखता स्थापित हो गयी थी। इसकाईलस के नाटक का आरम्भिक दृश्य फारस के राजा

जरक्सस के दरबार मे उद्घारित हुआ था। उसमे पूर्व की सारी सजधज दिखाई गई, दारियस की प्रेतात्मा का आवाहन किया और वीरोचित वैशिष्ट्य के साथ पूर्व और यूनान के बीच का सघर्ष दिखाया गया था।

इसकाईलस के व्यक्तिगत जीवन की कोई बात ज्ञात नही हो सकी है, यद्यपि उसकी असहिष्णुता का उल्लेख प्राचीन पुस्तकों मे मिल जाता है। कहा जाता है कि उसकी सभी रचनाएँ शराब के नशे मे लिखी गई है। जो भी हो, उसकी उच्च धारणाओ में कुछ नशा अवश्य मिलता है, चाहे वह शराब का हो या किसी अन्य वस्तु का। लेकिन यह प्रचलित धारणा अतिरञ्जित जान पडती है कि इसकाईलस नशे मे चूर रहता था और उसे मालूम नही होता था कि वह क्या लिख रहा है। नाटककार साफोक्लीज उसके सम्बन्ध मे कहता था—इसकाईलस उचित काम कर जाता है, यद्यपि वह यह नही जानता कि ऐसा क्यो करता है।

इसकाईलस का प्रोमिथीउस बाउण्ड यद्यपि एक गम्भीर दुखान्त नाटक है, तथापि वह नास्तिकवादी ढग से जीउस के अत्याचार और मानव की उच्चता की घोषणा करता है।

इसकाईलस ने अपने जीवन मे सत्तर दुखान्त नाटको की रचना की थी। उनमे से अधिकाश रचनाएँ लुप्त हो गई है। केवल सात पुस्तके प्राप्य है, जिनमे 'ओरेस्टिया' नाम की एक ट्रायलाजी भी है। ट्रायलाजी उसे कहते है, जिसमे एक कथा-वस्तु के सूत्र से तीन नाटको को आबद्ध किया जाय।

इसकाईलस की मृत्यु उनहत्तर वर्ष की अवस्था मे हुई थी।





# साफोक्लीज

(४९५–४०५ ईसा पूर्व)

साफोक्लीज का जन्म ऐथेस से एक मील दूर के एक गाँव मे हुआ था। उसका पिता धनी था। वह शस्त्रो के कारखाने का मालिक था। युवावस्था मे साफोक्लीज अपने सौन्दर्य के लिए प्रसिद्ध था। कहा जाता है कि जब सालामिस के युद्ध मे विजय प्राप्त हुई तो वह विजयोत्सव मे सम्मिलित होनेवाले युवको का नेता बनाया गया था। उसने अपने समय की सबसे ऊँची शिक्षा प्राप्त की थी। साफोक्लीज ने पच्चीस वर्ष की अवस्था मे अपना प्रथम नाटक प्रस्तुत किया था। यह उस समय की बात है, जब साइमन ने जीसिउस के अवशेषो को साइरोस से एथेस लाने का आदेश दिया था।

यह युवक नाटककार प्रसिद्ध और वृद्ध नाटककार इसकाईलस की प्रतिद्वन्द्विता मे खडा हुआ था। इस प्रतियोगिता मे पुरस्कार साफोक्लीज को ही मिला। कहा जाता है कि इस पुरस्कार-वितरण मे अन्याय हुआ था। साधारणतया दर्शको के मतानुसार पुरस्कार देने की प्रथा थी, लेकिन उस अवसर पर साइमन और उसके नौ जनरल जजो ने ही पुरस्कार-वितरण के सम्बन्ध मे निश्चय कर लिया था। इसलिए लोगो को सन्देह था। यदि इसकाईलस और साफोक्लीज के वे नाटक आज उपलब्ध होते जो उन लोगो ने उक्त प्रतियोगिता मे प्रस्तुत किये थे तो पता चल सकता था कि पुरस्कार-वितरण मे वस्तुत न्याय हुआ था या अन्याय।

इस विजय ने साफोक्लीज को एक सफल नाटककार के रूप मे आगे बढाया। वह तिरसठ वर्षो तक रगमच के लिए लिखता रहा। उन्नीस बार

उसे प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ। द्वितीय पुरस्कार तो उसे प्राय मिल जाया करता था, तृतीय पुरस्कार उसे मिलने का कभी अवसर ही नही आया था। साफोक्लीज नाटको के अतिरिक्त, अपने हथियारो के कारखाने को भी देखता था। सत्तावन वर्ष की अवस्था मे सामोस के विरुद्ध छेडे गये युद्ध मे उसे जनरल का पद दिया गया था। वृद्धावस्था मे वह वीर आलोन के मन्दिर का पुजारी नियुक्त हुआ था। उसके जीवन-काल मे यूनान अत्यन्त शान्त और सम्पन्न था। वह एक सम्पन्न, धार्मिक और प्रिय नागरिक के रूप मे आदृत था।

उसके जीवन के अन्तिम दिनो मे कुछ घटनाएँ हुई, जिनसे उसको बडी चिन्ता हुई। पेलोपोनेशियन युद्ध के बाद ही गृहयुद्ध छिड गया था और एथेस मे अशान्ति और अव्यवस्था फैल गई थी। इसके अतिरिक्त, साफोक्लीज का गृह-जीवन कलहपूर्ण हो गया था। कुछ समय से थेओरिस नामक एक स्त्री के प्रति उसकी सहानुभूति हुई। उसको वह आर्थिक सहायता देने लगा। इसका परिणाम उसकी शान्ति मे बाधक हुआ। उसके पुत्र आयोफोन ने उस पर मुकदमा चलाकर यह सिद्ध करना चाहा कि वह उन्मादग्रस्त्र है और अपनी धन-सम्पत्ति की सुव्यवस्था नही कर सकता। उसे इस बात की आशका थी कि उसके पिता की सम्पत्ति थेओरिस के हाथ लग जायगी। वृद्ध साफोक्लीज ने अपने नवीन नाटक का कुछ रोचक स्थल न्यायाधीश के सम्मुख पढकर सुनाया, जिससे उसका उन्मादग्रस्त होना सिद्ध न हो। इस प्रकार उस मुकदमे का अन्त हुआ।

साफोक्लीज की मृत्यु उस समय हुई जब लासोडिमोनिया के लोग एथेस पर आक्रमण कर रहे थे। एथेस के सुख के दिन बीत चले थे और वहॉ क बुद्धिजीवियो मे नये विचार जन्म ले रहे थे।

साफोक्लीज की एक ट्रायलाजी—जिसमे तीन नाटक किङ्ग ओडियस, ओडियस एट कोलोन्यूस और एन्टिगोन है—मैने पढा है। ये नाटक इतने रोचक है कि उन्हे समाप्त करके ही उत्सुकता शान्त होती है। लेखक की वर्णन-शैली और घटनाओ का क्रम इतनी कुशलता से उपस्थित किया गया है कि पढकर आश्चर्य होता है। ऐसा विश्वास होता है कि २४,२५ सौ वर्षो के बाद भी आजकल के नाटक-लेखक साफोक्लीज की कला से आगे नही बढ पाये है।

'किङ्ग ओडियस' के अन्त मे 'कोरस' मे अन्तिम अश यह है—यह स्मरण रखो कि मरणशील मनुष्य को सदैव अपने अन्त के विषय मे सोचते रहना

चाहिए। जब तक मनुष्य अपने आनन्द को लेकर अपनी कब्र की शान्ति मे मिल नही जाता, तब तक उसे सुखी नही कहा जा सकता।

'ओडियस एट कोलिन्यूस' मे एक स्थान पर कोरस मे कहा गया है—जब जीवन अधिक लम्बा हो जाता है तब दुख बढता जाता है, कही आनन्द नही रह जाता । अन्त मे जब मृत्यु बिना सगीत, नृत्य या गीत के साथ आती है, तब शान्ति मिलती है। जीवन का अन्त जितना ही शीघ्र हो उतना ही अच्छा है।

लेखक के इन वाक्यो में मृत्यु का रहस्य प्राचीन सेलेन्यूस की कहानी के अनुसार ही माना जाता है।

'एन्टिगोन' की कथा-वस्तु पर विचार करे। एन्टिगोन और इस्मीन पोलिनिसीज की बहने है। पोलिनिसीज राज्य के विरुद्ध विद्रोह का नेतृत्व करते हुए मारा जाता है। थीनीज के राजा क्रिअन का आदेश होता है। कि उसकी लाश दफनायी न जाकार कुत्तो द्वारा नोची जाने के लिए छोड दी जाय, जिससे देशद्रोहियो को शिक्षा मिले । यूनानियो के विश्वास के अनुसार यदि किसी शव का उचित सस्कार नही हुआ तो वह न तो मृतको के लोक मे ही जा पाता है और न पुण्यवानो के लोक मे ही उसे स्थान मिलता है। इसके विपरीत उसकी प्रेतात्मा वायु मे मँडराती फिरती है

विशेष कर युद्ध मे पूरी तरह से दफनाना सर्वथा सम्भव नही होता, इसलिए मरे हुए व्यक्ति के शव पर कुछ मिट्टी छिडक दी जाती थी और प्रार्थना की जाती थी। आज भी ईसाइयो मे यह प्रथा प्रचलित है।

एन्टिगोन अपने भाई को बहुत चाहती है, अत वह अपनी बहन इस्मीन के सहयोग से राजा क्रिअन के आदेश की अवहेलना करने का निश्चय करती है। इस्मीन राजा के आदेश से भयभीत होती है। एन्टि-गोन रक्षको की आँख बचाकर अपने भाई पोलिनिसीज के शव पर मिट्टी छिडकती है और पकडी जाती है। साथ मे उसकी बहन इस्मीन भी पकडी जाती है, यद्यपि वह उपर्युक्त शव-सस्कार मे भाग नही लेती है। दोनो पर कानून की अवहेलना करने का अभियोग लगाया जाता है।

अभियुक्ता एन्टिगोन का भाषण यूनानी दुखान्त नाटको मे सर्वश्रेष्ठ भाषण है। वह कानून की अवहेलना करने के बारह से अधिक कारण देती है। उसके सभी कारण उस समय की स्त्रियो और आज की स्त्रियो के लिए भी बड़े तर्कसगत जान पडते है। एन्टिगोन की बहन इस्मीन का विवाह उक्त राजा के पुत्र हीमेन से होनेवाला था। हीमेन इस मामले मे

दखल देता है। उधर राजा सकट मे पड जाता है। इधर राजा का बेटा एक अभियुक्ता का भावी पति है। उधर दोनो युवतियॉ राजा की भतीजी भी है। अस्तु, वह एन्टिगोन को बिना अन्न-जल के एक तहखाने मे बद कर देने का आदेश देता है। राजा के पुत्र हीमेन अपने पिता की आज्ञा की अवहेलना कर एन्टिगोन की मुक्ति के लिए आता है, किन्तु इससे पहले एन्टिगोन फॉसी लगाकर आत्म-हत्या कर लेती है। इस पर राजा का बेटा हीमेन भी आत्म-हत्या कर लेता है।

इन नाटको मे भाग्य और नियति का चक्र सर्वत्र दिखाई पडता है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि मनुष्य के पुरुषार्थ और पराक्रम से अधिक महत्त्व-शाली भाग्य के विधान को ही समझना चाहिए।

# यूरिपिडीज

(४८०–४०६ ईसा पूर्व)

यूरिपिडीज, साफोक्लीज से पन्द्रह वर्ष छोटा था। वह उस पुराने युग के अन्त मे प्रौढ हुआ। वह नवीन युग का शिशु था। उसका जन्म एक मध्यवर्गीय परिवार मे हुआ था। यह सालामिस पर यूनान की विजय का समय था। सुखान्त नाटककार ऐरिस्टोफिनीज की धारणा थी कि यूरिपिडीज की मॉ मास तथा तरकारी बेचती थी। प्रोफेसर मूरे का कहना है कि वह मास बेचनेवाली न होकर एक कुलीन परिवार की लडकी थी।

यूरिपिडीज की मॉ जब एक सुन्दरी युवती थी तब राज्य के एक प्रमुख अधिकारी और जमीदार नेसारपिडीज ने उससे विवाह कर लिया था। कई शताब्दियो के बाद सिकन्दरिया के वैयाकरण और समालोचक, फिलोकोरस ने उसके सम्बन्ध मे अन्वेषण किया तब इस धारणा ने बल प्राप्त किया कि वह एक कुलीन परिवार की लडकी थी, और प्रोफेसर मूरे ने इसे ही प्रामाणिक माना। प्रोफेसर मूरे के अनुसार वह अपने पुत्र को बहुत चाहती थी और उस पर उसका बहुत प्रभाव था। इसी लिए यूरिपिडीज के नाटको मे मातृ-प्रेम का तत्त्व दिखाई पड़ता है।

यूरिपिडीज जब प्रौढ होने लगा उस समय उसका पिता समृद्ध हो गया

था, क्योकि उसका शिक्षक प्रोडिक्स था, जिसकी फीस बहुत अधिक हुआ करती थी। वह आनाक्सागोरस और प्रोटग्गोरस नाम के दार्शनिको का भी शिष्य था। यूरिपिडीज के युवक मित्रो मे सुकरात भी था। वह भी आनाक्सागोरस का शिष्य था। यद्यपि इसके लिए कोई आधिकारिक प्रमाण नही है, तथापि अरस्तू के ग्रन्थ मे एक स्थल पर लिखा हुआ है कि सुकरात मूर्तिकार और दार्शनिक होने के साथ ही साहित्यकार भी था। उसने ही कथोपकथन को जन्म दिया, जिसे जेनोफोन और अफलातून ने विकसित किया था। इन लोगो ने इसके द्वारा लूसियन द्वारा चित्रित साधारण जीवन के दृश्यो को चित्रित किया।

अनुमान है कि पहले यूरिपिडीज ने पहलवान बनने का निश्चय किया था और सत्तरह वर्ष की अवस्था मे इलूसिनियन और थीसिमन की प्रतियोगिताओ मे वह विजयी हुआ था, किन्तु सत्ताईस वर्ष की अवस्था मे उसने अपने व्यग्य नाटक प्लाइआडीज के लिए वार्षिक नाट्य प्रतियोगिता मे तृतीय पुरस्कार प्राप्त किया था। यह नाटक अब उपलब्ध नही है, लेकिन अनुमान है कि उसमे युवावस्था की जोशीली उच्छृखलता भरी रही होगी। यूरिपिडीज के जीवन की वृत्ति शेक्सपीयर से मिलती-जुलती है।

यह ध्यान देने की बात है कि उसके द्वारा प्रस्तुत प्रथम नाटक दु खान्त न होकर व्यग्य नाटक था। कुछ समालोचक जो यूरिपिडीज के नाटको को नही समझ पाते है, उसका कारण यह है कि वे उन नाटको को व्यग्य नाटक न समझकर दु खान्त नाटक समझते है। इसके अतिरिक्त वे यह समझते है कि यूनानी दु खान्त नाटक आरम्भ से अन्त तक शोक और गाम्भीर्य से भरे रहते है। यह भ्रम यूरिपिडीज के 'मिडिया' और 'एलेक्त्रा' तथा साफोक्लीज के 'फिलोक्टेटीज' जैसे दुःखान्तो के कई स्थलो से दूर हो जाना चाहिए। ये स्थल दु खान्त की गम्भीरता से मुक्ति के लिए हास्य के रूप मे आते है।

जिस प्रकार ऐरिस्टोफिनीज को यह मालूम था कि किस प्रकार अपने नाटको मे हास्य का पुट देना चाहिए जिससे दर्शको के हास्य से खेल मे विघ्न न उत्पन्न हो, उसी प्रकार दु खान्त नाटककार भी, उपसहार से पहले, बीच मे हास्य का पुट देकर दु खान्त के गाम्भीर्य के आतिशय्य को हलका करते थे। आजकल के कुशल नाटककार जानते है कि हास्य का पुट दिये बिना तृतीय अक तक आते-आते दु खान्त नाटक स्वय अपने उदेश्य को नष्ट कर देते है, इससे दर्शक ऊब जाते है। इसी प्रकार यदि किसी सुखान्त नाटक के प्रथम और द्वितीय

अक मे बहुत हास्य भर दिया जाता है तो वह तीसरे अकमे आकर दर्शकों को निराश कर देता है।

यूरिपिडीज का व्यक्तिगत जीवन चिन्तापूर्ण था। उसने अपनी पहली स्त्री मेलिनो को दुराचार के कारण तलाक दे दिया था। उसकी दूसरी स्त्री भी दुर्भाग्यवश वैसी ही निकली और उसे भी उसने तलाक दे दिया था। उसकी इस व्यक्तिगत भावना का उसके नाटको पर निश्चय ही प्रभाव पडा था। उसने अपने नाटक 'ओरिस्टीज' मे हेलेन के नाम से अपनी पहली स्त्री का और आगामेनन के नाम से अपना ही चित्रण किया है। आगामेनन क्लाइटेमनेस्त्रा का पति है। क्लाइटेमनेस्त्रा अपने पति की अनुपस्थिति मे दूसरे से प्रेम करती है और बाद मे अपने प्रेमी से मिलकर अपने पति की हत्या कर देती है। यह ध्यान देने की बात है कि आगामेनन को वह आदर्श के रूप मे प्रस्तुत नही करता। यूरिपिडीज किसी को देवता के रूप मे नही देखता। वह हेलेन के पति मेनेलाउस को एक मिलनसार, अदृढ, अशक्त और कुछ हास्यास्पद व्यक्ति के रूप मे चित्रित करता है। हेलेन एक बार अपने पति, मेनेलाउस को मूर्ख बनाती है, किन्तु मेनेलाउस उसे फिर से रख लेता है और यह प्रकट कर देता है कि वह बार-बार हेलेन को अपने पास रखने को तैयार रहेगा।

यूरिपिडीज पहला नाटककार है, जिसने स्त्रियो की बुद्धि और उनकी भावनाओ तथा यौन सम्बन्ध के प्रति सूक्ष्मता से विचार किया है। 'ओरिस्टीज' मे हेलेन और एलेक्त्रा के बीच एक विवाद का दृश्य दिखाया जाता है। हेलेन रात को चुपके से मेनेलाउस के महल मे जाती है, यद्यपि वह इससे पहले पेरिस के साथ भाग गई थी। वह यह भली भाँति जानती है है कि मेनेलाउस उसे फिर रख लेगा। वह प्रयत्न करती है कि स्पार्टा की स्त्रियाँ उसे मेनेलाउस के यहाँ लौटते न देख ले; क्योकि उसे ज्ञात है कि वे स्त्रियाँ उसके सम्बन्ध मे अच्छी सम्मति नही रखती। एलेक्त्रा नाम की एक स्त्री से उसकी भेट हो जाती है जो स्वभाव से उजड्ड और बडी पवित्र होने का दम भरती है। वह हेलेन के सम्बन्ध मे अपना मत प्रकट कर देती है। दोनो मे वाग्युद्ध होने लगता है। हेलेन उत्तर मे कहती है कि तुझे भी तो एक पुरुष की आवश्यकता है। यदि तुझे अवसर मिलता तो तू स्वय पेरिस के साथ भाग जाती, लेकिन तू कुरूपा है और तुझे कोई नही पूछता।

यह झगडा चलता रहता है। उधर पास के कमरे मे एलेक्त्रा का भाई

ओरिस्टीज ठहरा रहता है। एलेक्त्रा ने उसे भड़काया है कि वह अपनी व्यभिचारिणी माता की हत्या करे। हेलेन जानती है कि मेनेलाउस उसे फिर से रख लेगा, इसलिए वह जमकर एलेक्त्रा को गाली देती है। उधर एलेक्त्रा भी यह बात जानती है फिर भी वह हेलेन और अपनी माँ जैसी स्त्रियो के चरित्र की बड़े कडे शब्दो मे निन्दा करती है।

इस वर्णन से यह महत्त्वपूर्ण विषय स्पष्ट होता है कि अपनी दोनो स्त्रियो से प्राप्त अनुभव के आधार पर यूरिपिडीज स्त्री-प्रकृति को समझने मे समर्थ हुआ। हेलेन के प्रति उसकी सहानुभूति है। हेलेन 'ओरिस्टीज' नाटक की नायिका है। वह शरारती, खूब सोचने-समझनेवाली, आत्मविश्वासी, कुटिला और स्वार्थी है। किन्तु वह सुन्दर, आकर्षक और मोहनेवाली भी है। वह जानकर किसी को कोई दुख नही पहुँचाती है। यह दूसरी बात है कि उसकी अपने मन की करने की प्रकृति से यूनानी स्त्रियो को अगणित दुख झेलने पडते है।

हेलेन और एलेक्त्रा मे स्त्रियो का सूक्ष्म विश्लेषण है। यूरिपिडीज पुरुषो के चित्रण मे भी समान रूप से सफल है। यूरिपिडीज की सर्जन-शक्ति के युग मे साफोक्लीज के नाटक विद्यमान थे, जिनमे आदर्शमय जीवन का आलेखन मिलता था। उसको इससे बडा विरोध था। उसका विश्वास था कि जीवन का मिथ्या अग मनुष्य को कलुषित बनाता है और वास्तविक यश और आत्मसमन्वय नष्ट हो जाता है। एथेस की जनता वर्षो से इसकाईलस और साफोक्लीज के नाटको को देखने की अभ्यस्त हो गई थी। लोग नाटको को देखते थे और अपने नगर की वास्तविक स्थिति को समझते थे। जिन युद्धो का इन नाटको मे बढा-चढाकर वर्णन था, उनसे राजकीय कोष खाली हो गया था। अधिकाश लोग भिखमगे बन गये थे। शासन मे अव्यवस्था फैल गई थी। लोभी मनुष्य मीठी-मीठी बातो से जनता को लूट रहे थे। यह सब उन कवियो के कारण जो झूठे और भ्रामक वर्णनो से जनता को ठग रहे थे।

यूरिपिडीज ने न केवल सामाजिक, यौन और गार्हस्थ्य समस्याओ पर विचार करने की प्रचुर सामग्री प्रस्तुत की, अपितु उसने भ्रष्ट जनतन्त्र की कलुषित राजनीति, राजाओ और अधिनायको के स्वार्थ, राज्य के अधिकारियो की मूर्खता और तथाकथित जननेताओ की कुटिलता पर प्रकाश डाला है।

नागरिको की भ्रष्ट सभा उसको फँसाना चाहती थी। उस पर अधार्मिकता का अभियोग लगाया गया, लेकिन वह छोड दिया गया। क्रुद्ध

होकर वह एथेस से आरचीलाउस चला गया। वहाँ उसके सगीतज्ञ, चित्र-कार, इतिहासकार और दूसरे मित्र विद्यमान थे। ये सब एथेस के असह्य वातावरण से क्षुब्ध होकर वहाँ चले गये थे। इस घटना के बाद ही सम्भवत उसने 'बाच्ची' की रचना की थी।

'बाच्ची' मे केवल व्यग्य भरा हुआ है। एक साथ उसमे पाँच-छ विषयो पर विचार किया गया है। फिर भी उसमे कोई नायक नही है। उसमे चित्रित सभी पात्रो पर व्यग्य का प्रहार किया जाता है। यहाँ तक कि तिरिसियस और काडमस, जिनके प्रति कवियो और नाटककारो ने सदैव नम्रता दिखाई है, पर भी व्यग्य किया गया है। नाटक के आराध्य देव डायोनिसस को भी नही छोडा गया है। मादक द्रव्यो का सेवन न करने की प्रतिज्ञा करनेवाला टेनेथिअस, जिसे कुछ लोग इस नाटक का नायक समझते है, अत्यन्त हीन कोटि का कपटी मनुष्य है। वह डायोनिसस के पीछे-पीछे जानेवाली स्त्रियो के विरुद्ध भडका दिया जाता है। डायोनिसस मादक द्रव्यो के एशियाई यज्ञ मे सलग्न दिखाया जाता है। काम-क्रीडाओ मे व्यस्त स्त्रियो को देखकर उसे भी एक झाँकी ले लेने की इच्छा होती है।

पवित्र काडमस और अन्धा पैगम्बर तिरिसियस रगमच पर शराब के नशे मे चूर दिखाये जाते है। उनके सफेद बालो मे अगूर के पत्ते और हाथो मे थाईमस दिखाया जाता है, जो डायोनिसस के यज्ञ के लिए आव-श्यक होते है। दोनो उन स्त्रियो की मद्यपान-क्रिया मे सम्मिलित होने के लिए व्यग्र है। काडमस तिरिसियस को मार्ग दिखलाता है। पेथियस की माता स्वय उन शराबी स्त्रियो के बीच दिखाई जाती है। पेथियस एक वृक्ष पर चढकर उसकी डालियो मे छिपकर इन स्त्रियो को देखता है। और उन स्त्रियो ने उसे जब देखा तो उस वृक्ष को उखाड दिया और पेथियस को पकडकर चीर दिया। पेथियस की माँ अपने बेटे के धड से अलग हुए सिर को लेकर समझती है कि वह एक सिह का सिर है।

अन्तिम दृश्य मे यह शोकपूर्ण दृश्य दिखाया जाता है। पेथियस की माँ अपने बेटे का सिर लेकर लडखडाती जबान मे कहती है कि उन लोगो ने एक सिंह मारा है। अन्त मे डायोनिसस उसे हिलाकर होश मे लाता-है, तब वह समझ पाती है कि उसके हाथ मे उसके बेटे का सिर है।

साफोक्लीज का कथन था—यूरिपिडीज मनुष्य के रूप का यथावत् चित्रण करता है, मै उसका यथोचित चित्रण करता हूँ।

यूरिपिडीज 'एटिक' दु खान्त नाटको और इसकाईलस के समय से प्रच-

लित नैतिक नाटको के विरुद्ध था। उस समय ऐसे सैकडो नाटक प्रचलित थे, किन्तु उनमे से केवल दो-चार नाटक आज उपलब्ध हो सकते है।

इसकाईलस से साफोक्लीज तक के दुखान्त नाटको का विकास ध्यान देने योग्य है। इसकाईलस मे मनुष्य देवताओ को ही अपने दैव का विधान करनेवाला समझता है। साफोक्लीज तक आते-आते मनुष्य ही मनुष्य के दैव का निश्चय करता हुआ पाया जाता है। 'प्रोमिथिउस' और 'ओरिस्टीआ' मे देवताओ के प्रकोप दिखाये जाते है, अर्थात् वे आदेश देते है और वे आदेश ही इन नाटको मे चित्रित चरित्र के भाग्य बन जाते है।

साफोक्लीज मे आकर मनुष्य दुर्दैव का शिकार तो होता है, पर वह दुर्दैव दैवी शक्ति से प्रेरित न होकर जीवन की क्रूर घटनाओ से प्रेरित होता है। उदाहरणत इडियस के दुर्भाग्य को देखे। वह बच्चे के रूप मे परित्यक्त था। बाद मे एक राजा ने उसे पाला और उसे बताया गया कि वही उसका पिता है। वह अपने वास्तविक पिता की हत्या करके अपनी माता को अपनी स्त्री बना लेता है और उससे चार बच्चे उत्पन्न होते है—एन्टिगोन, इस्मीन और उनके दो भाई।

साफोक्लीज मे मानव और मानवता ही सर्वप्रधान है। देवताओ का हस्तक्षेप घटनावश होता है। उसके मानव पात्र अपने पैरो पर खडे होते है और यद्यपि उनके भाग्य अत्यन्त विषम होते है तथापि वे हमारी सहानुभूति से वचित नही हो सकते। वे अपने सामने की विपत्तियो को उसी प्रकार ग्रहण करते है, जैसे एक डूबते हुए जहाज का कोई यात्री उत्ताल तरगो से तरगित समुद्र मे साहस के साथ तैरता जाता है। इसी प्रकार विपत्तियो के पहाड को पार करते-करते वे समाप्त हो जाते है, पर व्यर्थ का रोना नही रोते।

अरस्तू के अनुसार साफोक्लीज ने यूनानी नाटको मे कोई नई उद्भावना नही की, सिवा इसके कि उसने रगमच के पृष्ठभाग की यवनिका का प्रयोग आरम्भ कराया। इसकाईलस वास्तविक प्रतिभावान् रहा और उसे दुखान्त नाटको का जनक कहा जाता था। उसने एक वक्ता पात्र और सामूहिक गान (कोरस) से दो वक्ता पात्रो का विधान किया और इस प्रकार नाटक केवल किसी एक व्यक्ति का पाठ और सगीत मात्र न रहकर क्रिया से युक्त होने लगा। साफोक्लीज ने इस कला को सुविकसित किया।

यूरिपिडीज ने नवीन उद्भावनाएँ दी। उसके नाटक अधिक जीवन्त, यथार्थ और रगमच के लिए क्रान्तिकारी हुए और आगाथन, मेनान्डर और

दूसरे नाटककारो ने उसका अनुकरण किया। उसने रगमच मे यथार्थता का समावेश किया और साफोक्लीज की काल्पनिकता फिर लौट न सकी।

यूरिपिडीज तक आते-आते यूनानी दु खान्त नाटक और मानव की ओर उतरता हुआ दिखाई पडता है। साफोक्लीज मे जो दैवी हस्तक्षेप दिखाई पडता था, वह वहाँ तक पहुँचते-पहुँचते समाप्त हो गया था। उसकी कहानियो के पात्र मार्ग मे मिल सकते है। उसका प्रत्येक पात्र या तो स्वभाव से भावुक है या हृदय-हीन या फिर भावुकता और हृदय-हीनता, दोनो से युक्त। इसके अतिरिक्त यूरिपिडीज की विचार-धारा किसी भी भाषा मे अनूदित की जा सकती है, क्योकि उसने जो भी विचार प्रकट किये है वे समसामयिक जगत् के प्रत्येक वर्ग के लोगो के लिए आज भी सत्य है। समाज के इस यथार्थ चित्रण और देवताओ के प्रति अश्रद्धा के कारण निर्णायको को भय था कि उसकी रचनाएँ कही क्रान्ति न उपस्थित कर दे। इसी लिए दु खान्त नाटको की प्रतियोगिता मे उसे केवल पाँच ही बार पुरस्कार प्राप्त हुआ था।

यूरिपिडीज का अन्तिम जीवन मक्दूनिया मे ही व्यतीत हुआ था। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे वह कोमल, मधुर और प्रिय हो गया था। वही रहकर उसने अपने रोमैंटिक और विवादरहित नाटक हेलना और आड्रोमेडा की रचना की थी। यह ध्यान मे रखना चाहिए कि एथेस के दु खान्त, आधुनिक नाटक से नही बल्कि नाट्य-सगीत से मिलते-जुलते है। लेखक को स्वय नाटक और उसका सगीत तैयार करना पडता था। प्राय नाटककार ही नाटक का प्रमुख पात्र बनता था। इस प्रकार इसकाईलस ने 'प्रोमोथिउस बाउड' मे प्रोथिउस का काम किया था। साफोक्लीज और यूरिपिडीज ने अपनी युवावस्था और मध्य अवस्था मे अपने लिखे हुए नाटको मे अभिनेता के रूप मे कार्य किया था।

यूरिपिडीज सम्पूर्ण यूनान मे बहुत प्रसिद्ध था। जनता उस पर विशेष श्रद्धा करती थी। यही कारण था कि यूनानी सेनाओ ने दो बार एथेस पर आक्रमण किया था। यूरिपिडीज की मृत्यु के बाद उसका शव मक्दूनिया से एथेस लाया गया और उस समय जनता ने यह जोरदार माँग की कि अन्तिम बार के लिए नाटक-प्रतियोगिता का उस वर्ष का पुरस्कार उसे दिया जाय। यह सम्भवत एथेस की जनता की स्वतन्त्रता का अन्तिम सघर्ष था।

कहा जाता है कि साफोक्लीज ने १२३ नाटक लिखे, यूरिपिडीज ने ९३, इसकाईलस ने सौ से अधिक और मेनान्डर ने १०९ नाटक लिखे थे।

एथेस के पुरस्कृत नाटककारो मे एरिटिआस, थेओडेक्टास, एचीअस, आके-रियस, यूटीज, नोथिम्पस, पोलू फ्रासमन, क्रेटिनस और कारसिनस थे।

ई० पू० ४८६ का वर्ष यूनानी साहित्य मे महत्त्वपूर्ण वर्ष समझा जाता है ; क्योकि इसी वर्ष सुखान्त नाटक को सरकारी मान्यता मिली और उसके लिए पुरस्कार का विधान किया गया। यह ऐरिस्टोफिनीज के जन्म से तीस वर्ष पूर्व की बात है।

पहले के दु खान्तो मे एक ही विषय पर चार नाटक होते थे । प्रथम तीन दु खान्त और अन्तिम व्यग्यात्मक या हास्यात्मक। इसी से उन दु खान्तो का नाम 'टेट्रालाजी' पडा। इसके साथ ही ऐसा प्रतीत होता है कि विधाता ने यूनान के चार महत्त्वपूर्ण लेखको की भी रचना की थी । आगे चलकर यूनान के इन महान् चार नाटककारो ने योरोपीय नाट्य-साहित्य का पथ-प्रदर्शन किया।

लिनीयन पर्व के अवसर पर हास्य-नाटक वर्जित थे और दु खान्त प्रचलित थे। इसमे सन्देह नही कि उक्त पर्व डायोनिसस के पर्व से अधिक गम्भीर होता था। लीनस, बाचस के अनेक नामो मे से एक है। डायोनिसस भी ऐसा ही नाम है, पर अधिक सम्भव यह है कि लीनस १२०० ई० पू० के एक कवि और गायक 'लिनस' का बिगडा हुआ रूप है, जिसके सम्बन्ध मे यह प्रसिद्ध है कि उसे कुछ दिव्य ज्ञान प्राप्त हो गया था। होमर के अनुसार अगूर के चयन करनेवाले लोग लिनस के एक गीत को शोक-गीत के रूप मे गाया करते थे। वह कोई वेदना-युक्त सगीत रहा होगा। गाथाओ मे लिनस का वर्णन एक सुन्दर युवक के रूप मे मिलता है, जिसे कुत्तो ने फाड डाला था। जैसा कि गाथाओ मे परस्पर विरोधी बाते मिला करती हैं, लिनस के सम्बन्ध मे भी यह बात कही गई है कि इस कवि और सगीतज्ञ ने अपने शोकगीत और उसके गाने के ढग को स्वय ही निर्मित किया था। लिनस के ये शोकगीत वसन्त ऋतु के शोक मे भी गाये जाते थे। होमर की रचना मे, लिनस का यह शोकगीत एक लडका वीणा पर गाता था और उसके साथ मे अगूर की टोकरी लिये स्त्रियाँ रहती थी। इस गीत का अन्त इस चिल्लाहट के साथ होता था— ऐ ! लिनिस !

ऐसा विश्वास होता है, और अरस्तू का भी यही मत है, कि इसका-ईलस के नाटको मे पाये जानेवाले 'डिथिरेम्ब' (बाचस की स्तुति मे गाया जानेवाला एक गीत ) लिनस के गीत का ही विकास है। इसको साफो-क्लीज और यूरिपिडीज ने एक सामूहिक गान की शैली मे परिणत कर दिया था।

यह सब तो अनुमान ही है, क्योकि दु खान्त और हास्य नाटको के सबध मे हमे विशेष बाते मालूम नही है। केवल अरस्तू ने कुछ कल्पनाएँ की है। कुछ विद्वानो का मत है कि हास्यनाटक का आविष्कार छठी शताब्दि ई० पू० मे थेस्पिस ने किया था। एथेस के एक गॉव 'इकारा' मे उनका जन्म हुआ था। उस समय तक बाचस के त्योहार मे हंसी-मजाक और तरह-तरह के दूसरे हास्यात्मक खेल प्रचलित थे। लोग अनेक प्रकार की वेशभूषा पहनते थे और तरह-तरह के रूप बनाते थे। इनमे से बकरे की खाल वाली पोशाक सर्वाधिक प्रिय हुई। अनुमानत पहले-पहल उन अवसरो के हास्य और गीत पहले से तैयार नही किये जाते थे। बाद मे इन गाली-गलौज और हास्यगीतो ने एक व्यवस्थित रूप धारण किया और वे सामूहिक गान के रूप मे गाये जाने लगे।

यह भी अनुमान किया जाता है कि थेस्पिस एक नट, सगीतज्ञ और नर्तक था और उसी ने उक्त हास्यगीतो और दूसरे मजाको को एक खेल का रूप दिया था। उसने उसे खेलने के लिए लोगो को तैयार किया और स्वय गीत लिखे। बीच-बीच मे उसने अपने खेल मे नृत्य और हास्य जोड दिया। फीनिक्स थेस्पिस का शिष्य और इसकाईलस का समसामयिक था। उसने थेस्पिस के इस खेल मे सुधार कर उसे और गम्भीर बनाया जिसका आधार सम्भवत· डिथिरेम्ब था।

इस प्रकार यह सम्भव जान पडता है कि दु खान्त और हास्य-नाटक का विकास साथ-साथ हुआ था।

# ऐरिस्टोफिनीज

( ४४८–३४७ ईसा पूर्व )

पुराने हास्यनाटको का युग समाप्त हो चुका था। ऐरिस्टोफिनीज और उसके समसामयिक नाटककारो के नवीन नाटको मे उस युग की उच्छृखल प्रवृत्तियाँ हास्यनाटको मे प्रधान रूप से उपस्थित की जाती थी। इसका प्रमुख कारण यह भी था कि उक्त प्रवृत्तियो का अनिवार्य परिणाम असख्य अविहित यौन सम्बन्ध था। इसका परिणाम यह हुआ कि अगणित नाजायज बच्चे उत्पन्न होते थे, जिससे गार्हस्थ्य-जीवन और उसकी आर्थिक स्थिति विषम बन जाती थी।

एरिस्टोफिनीज ने कभी दु खान्त लिखने का प्रयत्न नही किया। उसने कुछ निम्न स्तर के हास्यनाटक भी लिखे जो केवल पुरुषो के लिए होते थे और पृथक् रगमच पर खेले जाते थे। यह उसके 'दी क्लाउड्स' (बादल) से मालूम होता है। 'दी क्लाउड्स' मे दर्शको को सम्बोधित कर नाटककार ने जो भाषण दिया, उससे पता चलता है कि उसने 'केवल पुरुषो के लिए' दो व्यग्य नाटक लिखे थे, जिनका नाम 'दी यग मैन' और 'दी देबोशे' (व्यभिचारिणी) है।

उस युग मे नाटक-प्रतियोगिता मे भाग लेने के लिए लेखक की तीस वर्ष की अवस्था होना आवश्यक था, किन्तु ऐरिस्टोफिनीज ने उस अवस्था से पहले दूसरे नाम से हास्यनाटक प्रस्तुत किये थे। उसने स्वय लिखा था कि तीस वर्ष की अवस्था होने के बाद जब उसने 'दी नाइट्स' लिखा तो न केवल अपने नाटक की शैली मे सुधार कर लिया था, अपितु हास्य को प्रेरित करनेवाले दूसरे नाटककारो की प्रणालियो मे भी उसने पर्याप्त सुधार कर लिया था।

वास्तव मे ऐरिस्टोफिनीज ने हास्य के लिए निम्न प्रयोगो को नही अपनाया जो उसके समय के नाटककार अपनाते थे और आज के हास्य-नाटककार भी अपनाते है। उसका हास्य परिष्कृत है। उसका व्यग्य अत्यन्त खरा होता था और उसका हास्य मानव-प्रकृति के गम्भीर अध्ययन पर आधृत होता था। साधारण परिवर्तन के बाद उसके नाटक आज भी दर्शको मे लोकप्रिय हो सकते है।

कुछ आलोचको का कथन है कि ऐरिस्टोफिनीज सुकरात का शत्रु था और उसके कारण ही यूरिपिडीज को एथेस छोडना पडा था। अपने लिखे नाटक 'दी क्लाउड्स' मे ऐरिस्टोफिनीज ने सुकरात पर तीव्र व्यग्य किया था, किन्तु इस सम्बन्ध मे यह भी विवरण मिलता है कि जब वह नाटक प्रथम बार खेला गया था तो स्वय सुकरात ने उसे अन्त तक देखा था और उसके व्यंग्य का आनन्द लिया था।

एथेस के लोगो की मुकदमेबाजी की प्रकृति पर व्यग्य करते हुए ऐरि-स्टोफिनीज ने 'दी वास्प्स' (बर्रे) की रचना की थी। युद्ध की मनोवृत्ति पर आक्रमण करते हुए उसने 'दी पीस' (शान्ति) और 'लिसिस्ट्रा' की रचना की थी। 'दी प्लूटस' और दूसरे दो व्यग्य नाटको मे उसने उन बूढो पर व्यग्य किया है जो नई जवानी प्राप्त करने के लिए उत्सुक रहते थे। उसने 'दी बर्ड्स' मे काल्पनिक हास्य और कविता का पुट दिया।

'थेसमो कोरिआ जुसो' मे उसने स्त्रियो की मुक्ति और 'एल्के ज्याजूसे' मे मताधिकार के लिए लडनेवाली स्त्रियो का चित्रण किया है।

ऐरिस्टोफिनीज की मृत्यु वृद्धावस्था मे ही हुई थी। अन्तिम समय मे उसने अपने पुत्र पर दो नाटक पूरा करने का काम छोडा था, किन्तु यह ज्ञात नही है कि उसके पुत्र ने उसे पूर्ण किया अथवा नही। उसके अन्तिम समय मे एथेस पराधीन हो चुका था और वहाँ की कला का भी अन्त हो चुका था।

---

# यूनानी दार्शनिक

दर्शन की दृष्टि से योरोपीय साहित्य मे यूनान ही सर्वप्रथम महत्त्व रखता है। यूनान मे दर्शन का उल्लेखनीय आरम्भ ईसा पूर्व पाँचवी शताब्दी मे हुआ था। केवल डेढ सौ वर्षों मे वह चरम विकास की अवस्था मे पहुँच गया। वह मानव बुद्धि की उच्चता और हीनता से उच्चतम शिखर पर पहुँचकर एकदम नीचे गिर गया। लेकर आकिया—जिसके प्रति योरोप और अमेरिका अपने धर्म का स्वरूप प्राप्त करने के लिए कृतज्ञ है—ने ही दर्शन के कोमल वृक्ष को उत्पन्न किया और उसे सीचा। यूनान के उस सुन्दर तट पर बसे उपनिवेशो ने अपनी मातृभूमि मे अपने यहाँ उत्पन्न दर्शन को प्रेषित किया।

मिलेटस के थेलीज, मितिलेन के पिटकास, प्रियेन का बायास, लिन्डस के क्लिओबुलस और दूसरे विद्वान् उस युग के महान् बुद्धिमान् माने जाते थे। वे लोग न केवल अपने देशवासियो को उपदेश दिया करते थे, किन्तु उनके दुर्गुणो को न्याय द्वारा नियन्त्रित करते थे। वे नैतिक शिक्षा से जनता के स्वभावो को परिवर्तित कर देते थे और महत्त्वपूर्ण तथा कठिन अन्वेषणो द्वारा उनका ज्ञान बढाया करते थे।

धर्म-निरपेक्ष नैतिक दर्शन का प्रथम प्रयत्न ईसोप की कहानियो मे दिखाई पडता है। मनुष्य के आरम्भिक समाज के लिए ये कथाएँ बहुत गम्भीर और महत्त्वपूर्ण रचनाएँ समझी गई है। इतिहास का क्षेत्र सीमित था। मिथ्या विश्वास के कारण उत्पन्न भ्रष्टाचारो के चलते देवताओ के अनुकरण की बात हीनता समझी जाने लगी। मनुष्य, जो प्राकृतिक जीवन

की सादगी से बहुत सामीप्य रखता था, कुछ पशुओ की स्वाभाविक बुद्धिमत्ता देखकर उपयुक्त शिक्षा प्राप्त कर सकता था, यही उन कथाओ का उद्देश्य था। आरम्भिक युग मे यूनान, रोम और दूसरे ऐसे देशो मे, जिनका लिखित इतिहास प्राप्त नही है, ऐसी कथाएँ कही जाती थी। उन कथाओ पर जनता का विश्वास था। इसका कारण यह है कि समाज मे मनुष्य शिशु होता है। इसके अतिरिक्त इन कथाओ मे वर्णित बाते उतनी काल्पनिक नही होती, जितनी कि हमारी धारणा के अनुसार ये आज्ञा करती है। रोमाटिक ढग की कल्पना—जिसने जगल और पवन को वाणी दी, वीरो को देवता के रूप मे परिवर्तित किया और देवताओ को निर्बल मनष्य के रूप मे स्वीकार किया—तब पशुओ को भी बुद्धि और वाणी प्रदान कर सकती थी।

नैतिक विज्ञान का दूसरा पग अधिक परिष्कृत और अरूप रहा। उसमें युग का सकेत करनेवाले कवियो के वाक्य रहते थे। इन निष्पक्ष उपदेशो और कहावतो को सभी देशो मे देख सकते है। ये किसी व्यवस्थित नैतिक विज्ञान के आविर्भाव से पहले दिखाई पडते है। यूनान मे सात ज्ञानियो के अपने सूत्र थे, जिनको वे मन्दिर और मनोरजन के स्थानो पर लिख दिया करते थे। यूनान के सप्त ऋषि के नाम से ये विख्यात है। ये दार्शनिक प्राय एक दूसरे से मिला करते थे और शासन तथा व्यक्तिगत जीवन के आनन्द के लिए आवश्यक कलाओ पर भी चर्चा किया करते थे।

एक दिन सोलोन थेलीज से मिलने मिलेटोस गया। अपनी वार्ता के मध्य मे सोलोन ने आश्चर्य प्रकट करते हुए पूछा कि थेलीज अपना विवाह क्यो नही करना चाहता ?

थेलीज ने उस समय कोई उत्तर नही दिया। एक दिन उसने एक चाल चली। यह प्रसिद्ध किया गया कि एथेस से कोई व्यक्ति आया है। यह सुनकर सोलोन को अपनी जन्म-भूमि के सम्बन्धित समाचार जानने की स्वाभाविक उत्सुकता हुई। उसे ज्ञात हुआ कि एथेस के एक प्रतिभाशाली युवक की मृत्यु से सपूर्ण नगर शोकाकुल है।

सोलोन ने दु.ख प्रकट करते हुए कहा—हाय, उसके पिता पर कितना बडा वज्रपात हुआ। फिर उसने मृत युवक का नाम पूछा। नवागन्तुक ने कहा—मुझे नाम बताया गया था, लेकिन मै भूल गया। मुझे केवल इतना स्मरण है कि लोग उसके ज्ञान और न्याय-बुद्धि की बडी प्रशशा कर रहे थे। सोलोन की चिन्ता बढ रही थी। उसने बडी उत्सुकता से पूछा—क्या उसके पिता का नाम सोलोन था ?

नवागन्तुक ने कहा—हाँ, बस यही नाम था।

यह सुनकर सोलोन अत्यन्त शोकमग्न हो गया। थेलीज यही अवसर खोज रहा था। उसने सोलोन का हाथ पकडते हुए कहा—धैर्य रखो मित्र, जो कुछ तुमसे कहा गया है सब कथा मात्र है। यह सब तुम्हारे उस प्रश्न का उत्तर है कि मैने विवाह करने का विचार क्यो नही किया।

एक दिन कोरिथ के राजा परियनडर के दरबार मे ये सातो दार्शनिक बैठे थे। वहाँ प्रश्न उठाया गया कि सबसे निर्दोष शासन कौन है?

वियास ने उत्तर दिया—वह, जिसमे कानून से श्रेष्ठ कोई वस्तु न हो। थेलीज ने कहा—जहाँ के लोग न बहुत धनी है न बहुत निर्धन। आनाकारसिस ने कहा—जहाँ गुणो की पूजा और अवगुणो का अनादर होता है। पिटाक्स ने कहा—जहाँ गुणियो को मान दिया जाता है, अवगुणियो को नही। क्लिओबुलस ने कहा—जहाँ के नागरिक दण्ड से अधिक अपयश से डरते हो। चिलो ने कहा—जहाँ वक्ताओ से अधिक कानून का मान होता है। इन सबमे सोलोन का विचार अधिक मान्य समझा गया। उसने कहा—जहाँ प्रजा के निकृष्टतम व्यक्ति पर किये गये अत्याचार को सम्पूर्ण विधान का अपमान समझा जाता हो।

सोलोन वक्तृत्व-कला, काव्य और शासन-सम्बन्धी विषयो का विशिष्ट विद्वान् समझा जाता था। एक बार वह आनाकारसिस से शासन-सम्बन्धी सुधारो के विषय मे वार्तालाप कर रहा था। इस पर आनाकारसिस ने कहा—आपके सभी कानून मकडी के जाले की भाँति होगे। इसमे केवल निर्बल लोग फँसेगे और शक्तिशाली सदैव उसे तोडकर निकल जाया करेंगे।

एक समय लिबिया के राजा क्रीसस से सोलोन की भेट हुई। यह राजा एशिया माइनर मे सर्वसम्पन्न समझा जाता था। उसने उस यूनानी दार्शनिक के सामने अपनी सम्पत्ति का प्रदर्शन किया। उसने सब प्रकार के आभूषणो को सोलोन के सम्मुख रखकर पूछा—क्या इतनी बडी सम्पत्ति का स्वामी ससार का सबसे सुखी प्राणी नही है?

सोलोन ने उत्तर दिया—नही, मै एक इससे सुखी पुरुष को जानता हूँ। वह यूनान का एक निर्धन किसान है। सम्पन्न और विपन्न अवस्थाओ मे उसकी बहुत कम आवश्यकताएँ होती है और उसने उन आवश्यकताओ को अपने श्रम के द्वारा पूरा करना सीख लिया है।

इस उत्तर से उस राजा को प्रसन्नता नही हुई। वह तो एक ऐसे उत्तर की प्रतीक्षा मे था, जिससे उसके मिथ्याभिमान की सन्तुष्टि हो। अतएव

उसने फिर पूछा—क्या वह उसे सुखी नही समझता ? सोलोन ने उत्तर दिया—मृत्यु से पहले किसको सुखी कहा जाय ? सोलोन का बुद्धिमत्तापूर्ण उत्तर बाद की घटना से सत्य सिद्ध हुआ।

साइरस ने लिबिया के साम्राज्य पर आक्रमण किया, साम्राज्य ध्वस्त हो गया और क्रीसस बन्दी बना लिया गया। जब वह मृत्यु-दण्ड के लिए ले जाया जा रहा था, तब उसे सोलोन की वह बात स्मरण आयी। वध-स्तम्भ से वह सोलोन का नाम लेकर विलाप करने लगा। साइरस ने यह सुना और उसका रहस्य जानने के लिए उत्सुक हुआ। जब क्रीसस ने उसे उस दार्शनिक का वह वाक्य सुनाया तब साइरस स्वय अपनी भावी दशा के लिए चिन्तित होने लगा। उसने क्रीसस को क्षमादान दे दिया। उसे अपना मित्र बना लिया। इस प्रकार सोलोन को एक राजा के प्राण बचाने और दूसरे को सुधारने का श्रेय प्राप्त हुआ।

यूनान के उन सप्त ऋषियो मे से थेलीज ने आइओनिक सम्प्रदाय को चलाया। उसके सम्प्रदाय मे, बाद मे, आनाक्सिसेण्डर और आनाक्सिमेनीज सम्मिलित हुए। इन दोनो के पश्चात् पेरिक्लीज का शिक्षक आनाक्सागोरास और आरकेलाउस हुआ, जिसको प्राचीन लेखक सुकरात के गुरु मानते है। थेलीज के लगभग ५० वर्ष बाद, उसकी कल्पना को उसके अनुयायियो ने आगे बढाया।

थेलीज और उसके अनुगामियो ने अनेक महत्त्वपूर्ण तथ्यो का अन्वेषण किया जो सदैव मानव की उत्सुकता को जगाते रहेगे। उनके सिद्धान्त अमान्य भी हुआ करते थे। वे किसी भी तत्त्व को प्रकृति का प्रथम तत्त्व मानकर चलते थे। सब एक स्वर से बुद्धि के विभ्रम और मिथ्याविश्वास की अनावश्यकता को स्वीकार करते थे। तथापि ससार के उद्भव और लय के इनके सिद्धान्तो, विभिन्न ग्रहो के स्थान और उनके विस्तार के विषय मे इनकी कल्पनाओ को अन्वेषणशील पुरुषो के स्वप्न ही समझना चाहिए। इनमे से प्रमुख ल्यूसिप्पस के सिद्धान्त थे, जिनको डेमोक्रिटस ने विकसित किया था। बाद मे एपिक्यूरस ने भी उसे स्वीकार किया और उसके दर्शन को ल्यूक्रिटियस ने पर्याप्त विशद रूप से समझाया है।

आनाक्सागोरास ने एक और विशेषता प्रकट की। उसने धर्महीन जगत् को सर्वप्रथम एक निरपेक्ष और पूर्ण मन के अस्तित्व की घोषणा की, जो उसके अनुसार इस भौतिक जगत् का कर्ता और करण है। थेलीज, पिथागोरास और उनके अनुगामियो ने इस जगत् के साथ आत्मा के अस्तित्व

को स्वीकार किया था। उन लोगो ने मन और भौतिक तत्त्वो को इस तरह से मिला दिया था कि वे एक अविभाज्य इकाई बन गये, आत्मा और शरीर को मनुष्य के अन्योन्याश्रित अग समझा। दूसरी ओर आनाक्सागोरास के अनुसार, सृष्टि और बाह्य ज्ञान को ससार की आत्मा से पृथक् समझना चाहिए, जिसको वह केवल उस कर्ता की कृति के नियमो की काव्यमय अभिव्यक्ति समझता था।

# सुकरात

(४६९–३९९ ईसा पूर्व)

सुकरात का जन्म पेलोपोनेसियन युद्ध के चालीस वर्ष पूर्व एथेस नगर मे हुआ था। उसके पिता का नाम सोफ्रोनिस्कस था। उसकी पैतृक सम्पत्ति बहुत साधारण थी। वह मूर्तिकार का काम करता था, इसलिए कुछ लेखको ने उसके जन्म के विषय मे प्रकाश नही पडने दिया है, परन्तु यह ध्यान मे रखना चाहिए कि यूनानी जन-तन्त्रो मे जन्म की उच्चता आदि का विचार बहुत कम हुआ करता था।

युवावस्था मे उसने आरकेलाउस का पदार्थविज्ञान और थियोडोरस के रेखागणित का अध्ययन किया और दूसरे शिक्षको से तत्कालीन सभी प्रचलित वादो का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। परिणाम-स्वरूप वह सृष्टि-सम्बन्धी भिन्न-भिन्न कल्पनाओ की हँसी उडाने लगा और उन पर व्यग्य करता रहा। वह धर्म मे विश्वास करनेवाले आनाक्सागोरास के अनुसार बुद्धि को प्रकृति और मानव जीवन को नियन्त्रित करनेवाली शक्ति मानता था। उसने निम्न बौद्धिक तत्त्वो को अस्वीकार नही किया जो उन दिनो जन-श्रद्धा के विषय थे। वह स्वप्न और भविष्यवाणियो मे दैवी तत्त्व के अस्तित्व को मानता था और अपने देश के धार्मिक कृत्यो को स्वीकार करता था। यदि हम एथेस के इन दार्शनिको को साधारण जनता के स्तर से देखे तो यह स्वीकार करना पडेगा कि वे सर्वथा मिथ्या-विश्वासो से मुक्त नही थे। वे यह विश्वास करते थे कि वे दुष्ट बुद्धि या सुबुद्धि द्वारा नियन्त्रित थे, जिनके प्रभाव मे आकर वे वासनाभिभूत हो जाते थे। ये बुद्धियाँ

उनके स्वभावो को प्रभावित करती थी। इसमे सन्देह नही कि इन दार्शनिको पर विश्वास विशेष का प्रभाव रहा करता था।

यदि हम सुकरात जैसे दार्शनिक के सत्तर वर्ष के दोष-रहित जीवन को देखे, अपने देश के कानूनो का उसका विरोध देखे, उसकी तपस्या, गम्भीरता, सभी स्थितियो को प्रसन्नतापूर्वक सहन कर लेने की उसकी अतुल क्षमता देखे तो हम इस निष्कर्ष पर पहुँचेगे कि ऐसे दार्शनिको मे दिखाई पडनेवाला थोड़ा-बहुत विश्वास—या मिथ्याविश्वास ही कहे—इनके दोष नही गुण ही है।

सुकरात के व्यक्तिगत प्रभाव का चाहे जो भी क्षेत्र हो, पर वास्तव मे उसका दर्शन अधिक पूर्ण और प्रसिद्ध तब हुआ जब नाट्य-कलाओ मे नाटककारो ने उसके दार्शनिक सिद्धान्तो को सम्मिलित करना आरम्भ किया। इन कलाओ ने सभी देशो मे, विशेष कर यूनान मे, राष्ट्रीय विचारो और चरित्रो के गठन मे अपूर्व कार्य किया था। यूनान मे नाट्य-कला सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वस्तु समझी जाती थी। विशेषत इसी क्षेत्र मे सुकरात के दार्शनिक सिद्धान्तो का अधिक समावेश हुआ, फलत' सुकरात के दर्शन ने जन-जीवन मे प्रसार पाया और उसे बहुत प्रभावित किया।

जिन दिनो फारस मे यूनान का यश गाया जा रहा था, उन दिनों एथेस मे उसका अपना यश क्षीण हो रहा था। गृह-सघर्ष के बाद कुछ शान्ति हुई किन्तु विद्वेष के बीज वर्त्तमान थे। सुकरात विद्वेष और जनता के पारस्परिक मतभेद का पहला शिकार हुआ। उसने सदैव नम्रता, साहस और बुद्धिमत्ता का परिचय दिया। उसने युद्ध मे आलसिव्याडीज की प्राण-रक्षा की थी और छ जनरलो को दिये जानेवाले मृत्युदण्ड मे उसने अपनी सम्मति देना अस्वीकार किया था। उसने उन तीस अत्याचारियो का सामना किया और खुलकर अन्याय का विरोध किया। मानवता के प्रति उसके हृदय मे असीम प्रेम था। वह दूसरो के दुर्गुणो पर दया करता था। वह यूनानी जनतन्त्र का जनक था। उसका एकमात्र सुख यूनानी जनता का सुख था।

सुकरात ने विचार किया कि वृद्धो का सुधार करना कठिन है, इसलिए उसने युवको को शिक्षा देना आरम्भ किया। उसका अपना कोई विद्यालय नही था। वह सभी स्थानो और अवसरो पर उपदेश दिया करता था। चलते-फिरते, भोजन के समय की बातचीत मे, सेना मे, जनता की सभा मे, सभी जगह वह निर्भय होकर बोलता था। उसका व्यक्तित्व विशाल

था, फिर भी उसके विरोधियो का दल चिरकाल से उसकी हत्या का अवसर ढूंढ रहा था।

वह विरोधियो का व्यग्य और अपशब्दो का प्रयोग बडी सरलता से सहन करता था। वह अपने युग का महान् दार्शनिक था।

एक बार हास्यनाटककार ऐरिस्टोफिनीज रगमच पर सुकरात की हँसी उडाने मे व्यस्त था। उसने 'क्लाउड्स' नाम की एक रचना प्रस्तुत की, जिसमे एक दार्शनिक एक टोकरी में बैठकर अनर्गल वक्तव्य देता है। सुकरात भी वहाँ उपस्थित था, किन्तु अपनी हँसी उडायी जाती देखकर भी उसपर कोई प्रभाव नही पडा। दर्शको में से कुछ अनजान व्यक्ति व्यग्य के वास्तविक पात्र को जानना चाहते थे, इसलिए सुकरात रगमच पर आकर स्वय सबको अपना परिचय देने लगा। यह सुकरात पर पहला आक्रमण था। इसके बीस वर्ष बाद मेलिटस ने खुले रूप से उस पर अभियोग लगाया। उसके अभियोग मे दो आरोप थे, पहला यह कि वह जनतन्त्र द्वारा स्वीकृत देवताओ को नही मानता और नये देवो की आराधना सिखाता है। दूसरा यह था कि वह एथेस के युवको को पथभ्रष्ट करता है। अन्त मे निश्चित हुआ कि सुकरात को मृत्युदण्ड दिया जाय।

सुकरात एथेस के मिथ्याविश्वासो और बहु देवो को हास्यास्पद समझता था। उसकी भिन्न-भिन्न वार्ताओ से यह ज्ञात होता है कि वह एक ईश्वर मे विश्वास करता था। कुछ लोग उसके जीवन के उदाहरणो से उसे ईसाई दार्शनिको की कोटि मे रखते है। जब सुकरात के विरुद्ध किये गये षड्यन्त्र का पता चला तब उसके अनेक मित्रो ने उसके पक्ष से लडने की तैयारी की। सिलियास उस समय का सबसे समर्थ वक्ता था। उसने सुकरात को अपना तैयार किया हुआ भाषण दिया। उसमे उसने सुकरात के तर्कों और सिद्धान्तो को बडे सबल ढग से प्रस्तुत किया था। बीच-बीच मे उसमे ऐसी भावुकता भरी हुई थी कि वह किसी को भी द्रवित करने की शक्ति रखता था, किन्तु यह भाषण केवल भाषण-कला से युक्त था। उसमें एक दार्शनिकोचित सबलता का अभाव था। इसी लिए सुकरात ने उसे पसन्द नही किया। लिसियास के पूछने पर कि फिर कैसे भाषण से उसको सन्तोष हो सकता है, सुकरात ने बडी सरलता से उत्तर दिया कि कोई कुशल शिल्पी मेरे लिए उत्तम सोने से मढा हुआ जूता लाकर दे सकता है, पर यह सम्भव है कि वह मेरे पैर के लिए ठीक न हो। उसने किसी भी ऐसे साधन का उपयोग नही किया, जिससे लोग उस पर दया

करे और उस पर लगाये गये अभियोग को पृथक् छोड दे। उसने न्यायाधीशो के सम्मुख किसी प्रकार की प्रार्थना अथवा ऐसा कोई प्रयत्न नही किया, जिससे उनका हृदय द्रवित हो। उसने व्यक्तिगत रूप से अपने अभियोग के विरोध मे अपनी सफाई दी। उसमे पुरुषोचित साहस के साथ दार्शनिकोचित साधुता और नम्रता, पर विचारो की स्वतन्त्रता, भी थी। उसके भाषण का आभूषण केवल सत्य था।

अफलातून भी उस समय वहाँ उपस्थित था। उसने सुकरात के भाषण को उसी के शब्दो मे प्रस्तुत किया था, जिसका शीर्षक उसने सुकरात की क्षमा-याचना दिया। यह प्राचीन सर्वश्रेष्ठ कृतियो मे से एक है।

सुकरात ने अभियोग का उत्तर देते हुए कहा था—मुझ पर यह आरोप लगाया गया है कि मै युवको को भ्रष्ट कर रहा हूँ, उनमे भयकर विचारो का प्रसार कर रहा हूँ, लेकिन एथेस के लोग जानते है कि मेरा व्यापार शिक्षा देना नही है। चाहे लोग मुझसे कितना भी द्वेष करे किन्तु वे मुझ पर अपना ज्ञान बेचने का आरोप नही लगा सकते। इसका स्पष्ट प्रमाण मेरी निर्धनता ही है। . . ऐ एथेस के निवासियो, मुझे दण्ड दो। मै अपना विचार और आचरण नही बदल सकता ...मुझ पर भयभीत होने का आरोप किया गया है, लेकिन मै युद्धभूमि मे लडा, असेम्बली मे अकेले ही मैने उन छ. कप्तानो को दिये गये मृत्युदण्ड का विरोध किया .. ...

सुकरात ने दृढता से और अबाध स्वर मे अपना यह भाषण दिया। उसकी आकृति, क्रिया आदि से अभियुक्त का कोई भी लक्षण प्रकट नही हो रहा था। अपनी आत्मा की उच्चता के कारण वह अपने न्यायाधीशों का स्वामी प्रतीत होता था। भाषण मे आरम्भ से अन्त तक सुकरात ने दार्शनिकोचित नम्रता का प्रमाण दिया। लेकिन सुकरात का भाषण युक्ति-युक्त तर्को के औचित्य से पूर्ण था। इस पर भी उसका विरोधी दल उसकी हत्या के लिए तुला हुआ था। सुकरात मे हर समय और हर किसी के अत्याचार और अन्याय का विरोध करने की जो प्रवृत्ति थी, उससे बहुतो मे उसके प्रति द्वेष और दुर्भावना जाग्रत हो गई थी।

सुकरात ने अत्यन्त शान्त रूप से अपने दण्ड की आज्ञा सुनी। उसका एक शिष्य आपोलोडोरस अत्यन्त क्रुद्ध होकर गाली देने लगा और वह रोकर कहने लगा—मेरा स्वामी निरपराध होकर भी मृत्युदण्ड पा रहा है।

इस पर सुकरात ने कहा—क्या तुम अपराधी के रूप मे मेरी हत्या होते देखना चाहते थे?

मृत्युदण्ड के पश्चात् भी सुकरात उसी दृढता और विश्वास के साथ अत्याचारियो पर आतक जमाये रहा। मृत्युदण्ड से पहिले एक महीने तक वह जेल मे था। वहाँ भी उसके मित्र और अनुगामी उससे बराबर मिलते रहते थे।

सुकरात जब जेल मे था, एक दिन कोई सगीतज्ञ वशी की ध्वनि पर गीतात्मक कविता गा रहा था। उसने उसे सुनकर उससे अनुरोध किया कि वह उसे भी वह गीत सिखा दे, जिससे वह उस 'अनन्त-गान' मे विलीन होने के पहले गा सके।

सगीतज्ञ ने उत्सुकता से पूछा—एक मरणशील व्यक्ति के लिए इसकी क्या आवश्यकता है?

सुकरात ने उत्तर दिया—इसलिए कि मै सौन्दर्यमय ज्ञान को लेकर जीवन से बिदा होऊँ।

मृत्यु के दिन सुकरात अपने मित्रो से बातचीत करता रहा। वार्ता का विषय आत्मा की अमरता था। अफलातून का कथनोपकथन 'फीडन' सुकरात की इस वार्ता का परिणाम है।

# अफलातून

(४२७–३४७ ईसा पूर्व)

अफलातून सुकरात का सबसे प्रमुख शिष्य था। उसका जन्म उसी वर्ष हुआ जिस वर्ष पेलोपोनेसियन युद्ध छिडा था। वह एथेस के एक प्रसिद्ध और सम्पन्न परिवार मे उत्पन्न हुआ था। उसकी शिक्षा उसके उच्च परिवार के अनुकूल ही हुई थी। काव्य और रेखागणित से उसका मस्तिष्क विकसित हुआ, उसे न्याय-बुद्धि और कल्पना मिली। बीस वर्ष की अवस्था मे सुकरात से उसका परिचय हुआ। काव्यक्षेत्र को छोडकर वह दर्शन की ओर आकृष्ट हुआ। आठ वर्ष तक वह सुकरात का अध्ययनशील श्रोता बना रहा। इसके पश्चात् कुछ समय तक वह 'मैगना ग्रेसिया' आदि नगरो मे, ज्ञान की खोज मे, भ्रमण करता रहा।

अफलातून एक बार अपने मित्र और शिष्य डीयन के आग्रह पर डायोनिसियस से मिलने गया। पहले ज्ञान की चर्चा होती रही, फिर न्याय का

विषय छिडा। अफलातून ने न्यायी की प्रसन्नता और अन्यायी की विकृत अवस्था पर प्रकाश डाला। डायोनिसियस स्तब्ध रह गया। इस सम्बन्ध मे वह एक शब्द भी न बोल सका। अन्त मे झुँझलाकर उसने अफलातून से पूछा कि यहाँ सिसली मे आने का उसका क्या उद्देश्य है?

अफलातून ने उत्तर दिया—मै यहाँ एक ईमानदार पुरुष की खोज मे आया हूँ।

इस पर डायोनिसियस ने कहा—तब ऐसा प्रकट होता है कि तुम्हारा परिश्रम सार्थक नही हुआ।

डीयन ने समझा कि उसका क्रोध यही तक शात हो जायगा, किन्तु जब अफलातून वहाँ से चला गया, तब डायोनिसियस ने पोलिस को बुलाकर आज्ञा दी। उसने कहा—इस दार्शनिक का सिद्धान्त है कि सच्चा आदमी किसी भी स्थिति मे सुखी रहता है, इसलिए यूनान जाते समय मार्ग मे ही उसकी हत्या कर देना अथवा दास के रूप मे उसे बेच देना। आदेशानुसार पोलिस ने वैसा ही किया। उसने अफलातून को एजिना मे बेच दिया। अफलातून उस स्थिति मे भी कुछ समय तक सन्तुष्ट और प्रसन्न रहा।

अफलातून जब एथेस लौटा, उस समय देश की स्थिति बदल गई थी। यूनानी जनता आलसी और निष्क्रिय हो गई थी। अब वह समय नही रह गया था कि कोई व्यक्ति अपने विचारो का प्रचार कर कोई क्रान्ति उपस्थित कर दे। इसलिए अफलातून ने एक बगीचा खरीदा और वही लोग आकर उससे शिक्षा लेने लगे। वह निरन्तर चालीस वर्षो तक वहाँ रहकर अपने शिष्यो को शिक्षा देता रहा। बीच मे केवल उसने सिसिली की यात्रा की। वहाँ कुछ समय रहकर उसने 'डायलॉग' की रचना की, जिसके लिए प्राचीन और अर्वाचीन दार्शनिक उसके ऋणी थे और है।

अफलातून की इन रचनाओ के पढने पर उसके और उसके गुरु सुकरात के सिद्धान्तो का परिचय मिलता है। अफलातून की रचनाएँ दार्शनिक दृष्टि से गूढ होते हुए भी आकर्षक है। उसकी रचना-शैली इतनी प्रभावशाली है कि पढते समय उपन्यास जैसा रोचक प्रतीत होता है। उसका चरित्र-चित्रण और घटना-क्रम इतना सजीव है कि आँखो के सम्मुख वह सब दृश्य उपस्थित हो जाता है। इसमें सन्देह नही कि दार्शनिक विचारो के अतिरिक्त उसने साहित्य मे भी उन्नत शैली और प्रणाली प्रस्तुत की थी। मेरा तो अनुमान है कि आगे के लेखको को उपन्यास प्रस्तुत करने मे अफलातून की रचनाओ से बहुत कुछ प्रेरणा मिली होगी।

अफलातून का दर्शन सम्पूर्ण विज्ञान से सम्बद्ध है। उसके पूर्व के विद्वान् कुछ ही विषयो पर विचार करते थे। अफलातून के विचार से विज्ञान, प्राकृतिक और नैतिक, दो भागो मे विभक्त हो चुका था, जिसको वह दैवी और मानवी कहता था। तर्क का उदय हो चुका था। इसके आधार पर न केवल उसने नैतिक और राजनीतिक विचारो को परिवर्तित किया अपितु प्राचीन धर्मशास्त्रो को भी परिवर्तित कर दिया था।

अफलातून के 'डायलॉग' मे इतने विषय आ चुके है कि सक्षेप मे उनकी पूरी व्याख्या करना कठिन है। कही-कही तो उसके और उसके गुरु सुकरात के विचारो मे बडा अन्तर दिखाई पडता है। प्रश्नकर्ताओ की सख्या इतनी अधिक है कि कुछ प्रश्नो और उनके उत्तरो को लेकर कुछ स्थिर करना कठिन हो जाता है। लेकिन जेनोफोन के ग्रन्थो से अफलातून के विचारो से सुकरात के विचारो को पृथक् करना सरल हो सकता है।

इस प्रकार यह ज्ञात होता है कि अफलातून का उद्देश्य प्राकृतिक और नैतिक शक्तियो का एक ऐसी सरकार के साथ समझौता करना था, जो स्वय खडी हो और एक अपरिवर्तनीय उद्देश्य लिये हुए हो। अफलातून मानव मस्तिष्क का उद्‌भव और उसकी प्रकृति को समझना चाहता था। साथ ही वह मानव मस्तिष्क की विभिन्न शक्तियो—यथा, इच्छा और ज्ञान शक्ति—की व्याख्या करना चाहता था और इस प्रकार वह एक ऐसी नैतिक व्यवस्था की स्थापना करना चाहता था कि मनुष्य न केवल इस जीवन मे पूर्णता और सुख प्राप्त करे अपितु वह भावी जीवन मे भी सुखी रह सके।

अफलातून कहता है कि ससार की प्रत्येक वस्तु उत्पन्न होती है, विनष्ट होती है, और फिर उसके स्थान पर दूसरी वस्तु उत्पन्न होती है। समय पर उसमे भी क्रान्ति होती है। एक वस्तु दूसरी को गतिमान् करती है, दूसरी तीसरी को, पर गति का प्रथम कारण इनमे से किसी एक मे नही होता। नक्षत्रो की नियमित क्रिया, ऋतुओ का सुन्दर क्रम, स्थावर और जगमो की प्रशसनीय रचना, एक रचयिता का सकेत करती है। इस दिव्य-शक्ति का पता लगाना कठिन है और शब्दो से उसका वर्णन असम्भव है, लेकिन उसकी रचनाओ से उसकी शक्ति, ज्ञान और कृपालुता का प्रमाण प्रस्तुत होता है।

अपनी कृपालुता के कारण इस 'देव' ने सभी सम्भव जीवो की रचना की और सनातन काल के लिए यह एक अनियमित गति से नियन्त्रित रहेगी। इस सिद्धान्त को अफलातून ने ससार का असगत दुर्गुण कहा है।

इसके प्रमाण-स्वरूप उसके सामने प्रकृति के भिन्न-भिन्न उलट-फेर वर्त्तमान थे। मनुष्य की वासनाओ, उसके शारीरिक और नैतिक दुर्गुणो, को वह प्रकृति का अनिवार्य तत्त्व समझता था और उसके अनुसार इनको सदा के लिए उन्मूलित करना असम्भव था।

अफलातून के काल्पनिक सिद्धान्त के अनुसार इन अपरिष्कृत तत्त्वो से ईश्वर ने चार तत्त्वो की सृष्टि की। उसने आकाश और पृथिवी का निर्माण किया। सभी वस्तुओ की सृष्टि कर ईश्वर ने बौद्धिक दुर्गुण भी उत्पन्न किया। सूर्य, चन्द्रमा और दूसरी दिव्य शक्तियो की रचना करने के बाद उसने अदृश्य देवो और दानवो की सृष्टि की। इन देव-दानवो की प्रकृति का वर्णन अफलातून बडी श्रद्धा के साथ करता है और इस वर्णन को अपने देश के लिए एक धर्म के रूप मे वह स्वीकार कराना चाहता है। इसके बाद देवो के देव, ईश्वर ने तीन प्रकार के जीवो (जल, स्थल और नभ के जीवो) की सृष्टि की। मनुष्य का दुर्गुण, जगत् के बौद्धिक दुर्गुण से ईश्वर ने बनाया। पहले तो दुर्गुण दानवो के रूप मे रहे और इन्हे सूक्ष्म शरीर प्राप्त थे। लेकिन ये अपने कर्त्तव्य से च्युत हुए और ईश्वर ने इन्हे दण्ड स्वरूप स्थूल शरीर दिये और इन्हे शाप दिया कि वे अपनी दैवी शक्ति का उपयोग न कर सके। अफलातून का दर्शन काल्पनिक है।

आदर्श स्वरूपो और मानव-मस्तिष्क की आदिम अवस्था अफलातून के दर्शन के स्तम्भ है। अपने कर्त्तव्य-पालन से च्युत होने से पहले मनुष्य को दिव्य दृष्टि प्राप्त थी और वह अपने 'कर्त्ता' के रूप का दर्शन कर सकता था, पर बाद मे वह ससार की वस्तुओ से ठगा जाकर अपने कर्त्तव्य से च्युत हुआ और तभी से उसकी दिव्यता जाती रही। मनुष्य चाहे कितना भी गिर जाय, ईश्वर की दृष्टि से वह ओझल नही होता। ईश्वर अपनी उच्चतम और निम्नतम रचना पर दृष्टि रखता और उसे नियत्रित करता है। अपना कर्त्तव्यपालन करके ही मनुष्य पुन. अपने 'कर्त्ता' की कृपा प्राप्त कर सकता है। यह भ्रान्त धारणा है कि ईश्वर बडे-बडे उपहारो से प्रसन्न होता है। धर्म कोई व्यापार की वस्तु नही। हम देवताओ को उनकी दी हुई वस्तुओ के अतिरिक्त क्या दे सकते है? उनकी दी हुई वस्तुओ को उनको लौटाने के लिए क्या वे हमे धन्यवाद देगे?

अफलातून के दर्शन का रहस्य नीचे लिखे वाक्यो मे प्रकट होता है—

हमारी स्मृति मे जो वस्तुएँ एकत्र है, उन्ही के बाह्य रूपो का ज्ञान हमारी इन्द्रियो के द्वारा हमे प्राप्त होता है। इस ज्ञान से भिन्न-भिन्न रूप

से कल्पना सम्बद्ध रहती है। पूर्वज्ञान का उदाहरण देते हुए अफलातून मैनो के दासो का उल्लेख करता है, जिन्होने सुकरात के पूछने पर उनकी सख्या और आँकडो के अनेक तथ्य स्मरण करके बताये थे, यद्यपि उन्हे गणित या ज्यामिति विज्ञान की शिक्षा नही प्राप्त थी। इस प्रकार अफलातून के अनुसार सभी विज्ञान स्मृति—प्रकृति की आदिम स्मृति—पर निर्भर करते है। उसका कथन है कि मनुष्य को भौतिक जगत् से बौद्धिक जगत् की ओर जाना चाहिए। मनुष्य की प्रकृति इसी के मेल की है। इसी उद्देश्य की पूर्ति उसके दर्शन का उद्देश्य था।

इनमे से एक प्रकार की वासनाओ का सम्बन्ध अभिमान और उपेक्षा से है। इनका स्थान मनुष्य का हृदय है। दूसरे प्रकार की वासनाएँ सुख प्राप्त करने की इच्छा से सम्बद्ध है। इनका स्थान शरीर का निम्नतम भाग, उदर है। ये दोनो ही घातक है। यदि इन पर उचित नियत्रण न होगा तो मनुष्य-रूपी जन-तन्त्र अव्यवस्थित और दु खपूर्ण हो जायगा।

अफलातून के अनुसार उक्त दोनो प्रकार की भावनाएँ, मनुष्य की शरीर-रचना के लिए, आवश्यक है। यदि इनको नियत्रित कर लिया जाय तो ये अच्छी वस्तु बन सकती है। मनुष्य की प्रकृति मे प्रतिकूल तत्त्व रहते है और वह जागरूक होकर दु ख और विपत्ति से बचता है। जब मनुष्य शरीर की आवश्यकता से अधिक इन्द्रिय-सुख मे लीन हो गया तब तप आदि का प्रचलन हुआ है। न्याय का जन्म उस समय हुआ जब तर्क नियामक था और वासनाएँ नियन्त्रित थी। शासन करने की शक्ति मे बुद्धिमत्ता का गुण अन्तर्निहित था। बुद्धि और ज्ञान का प्रयोग करता हुआ मनुष्य अपने कर्ता की भाँति हो गया था और वह समझ गया था कि उसका वास्तविक उद्देश्य क्या होना चाहिए। बुद्धिमान् मनुष्य मस्तिष्क को शरीर की तुलना में रख सकता है, इस प्रकार वह असीम को ससीम और धर्म को इन्द्रिय-सुख की तुलना मे रख सकता है। मस्तिष्क की इस अवस्था को प्राप्त किये बिना वह कभी सद्गुण और आनन्द नही प्राप्त कर सकता।

अफलातून के अनुसार ज्ञान का मन्दिर ऐसी चट्टान पर है, जहाँ कुछ ही व्यक्ति पहुँच सकते है। इस सामर्थ्य-भिन्नता के कई कारण है। मानव-रचना के समय सबके मस्तिष्क समान रूप से सुविकसित और श्रेष्ठ नही थे। इसी प्रकार रचना-काल से पहले उनमे हिंसक प्रवृत्तियाँ भी नही थी। मनुष्य-शरीर भिन्न-भिन्न प्रकार से रचे गये है, कुछ सबल और दूसरे निर्बल। प्राचीन सस्थाओ और भिन्न-भिन्न उदाहरणो से मनुष्यो के बीच

मतभेद उत्पन्न हुए। वास्तव मे शिक्षा और स्वभाव की शक्ति इतनी बडी है कि मनुष्य की भूलो और पापो का उत्तरदायित्व उस पर न होकर उसके माता-पिता, रक्षक और शिक्षक पर होना चाहिए। साथ ही कितनी ही अच्छी परिस्थितियाँ हो तो भी मस्तिष्क विकार की ओर प्रवृत्त होता है। इसलिए शरीर को निरन्तर व्यायाम आदि से पवित्र करना चाहिए और मस्तिष्क को दर्शन आदि के अध्ययन से निर्मल बनाना चाहिए। इसके बिना मनुष्य अपने स्वभाव के उच्चतम विकास तक नही पहुँच सकता, और पहुँच जाने पर भी, इसके बिना वह उस स्थान पर निश्चल रूप से ठहर नही सकता।

अफलातून ही प्रथम दार्शनिक है, जिसने पुर्नजन्म के सिद्धान्तो का समर्थन किया। इस सम्बन्ध के उसके तर्क इतने युक्ति-युक्त थे कि विचारशील विद्वानो पर भी उनका प्रभाव पडता था। मस्तिष्क के तत्त्वो की परीक्षा से वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि जिन तत्त्वो से ये बने है वे अत्यन्त सरल और अविनाशशील है। उसने मानसिक शक्ति पर इतना जोर दिया कि सिसरो और बफ्कन भी उससे आगे नही बढ सके। वह मनुष्य के दुर्गुणो को जीवन और गति के लिए आवश्यक समझता था, इसलिए वह इस बात को असगत समझता था कि शारीरिक रोग और मृत्यु उसके स्वाभाविक गुणो को हर सकती है। वह समझता था कि मृत्यु के बाद जीव या तो उच्चावस्था को या निम्नावस्था को प्राप्त होता है।

इस पुनर्जन्म के विचार से आशान्वित होकर अफलातून ने एक उच्च कल्पना की और उसमे ससार के नाशवान् पदार्थो के प्रति वैसी घृणा न रही जो दूसरे दार्शनिको मे दिखाई पडती थी। उसने एक दोष-रहित 'राष्ट्र-मण्डल' की योजना निर्धारित की थी। अफलातून का सच्चा जनतन्त्र उसके कानून के ग्रन्थो मे वर्णित है। उनमे उसने स्पष्ट रूप से समाज के आरम्भ और क्रान्तियो को समझाया है। उसने स्पार्टन आदर्श पर ही एक जनतन्त्र के निर्माण की योजना की थी।

अफलातून की व्यावहारिक नैतिकता, जिसे उसने सुकरात से प्राप्त किया था, उसके 'डायलॉग' मे सब जगह बिखरी मिलती है। अफलातून ने अपने कुछ शिष्यो को आरकाडियन, एलियन और स्निडिन लोगो के आग्रह पर उनके जनतन्त्रो को सुधारने के लिए भेजा था। उसके ही एक शिष्य अरस्तू से सिकन्दर ने अच्छी सरकार के शासन की व्यवस्था करवानी चाही थी।

# अरस्तू

(३८४–३२२ ईसा पूर्व)

अरस्तू की प्रसिद्धि विश्वविख्यात है। अफलातून के विचारो का उस पर विशेष प्रभाव पड़ा था। ऊपर से अरस्तू उन विचारो को स्वीकार करने मे हिचक दिखाता था, किन्तु वास्तव मे हृदय मे उसे उन विचारो से सन्तोष था।

सुकरात वास्तविकता के अधिक निकट था, किन्तु उसका शिष्य अफलातून इस वास्तविकता के साथ कल्पना को भी जोड देता था। सुकरात सत्य और प्रकृति के पथ से चला, पर उसका शिष्य कल्पनाओ के परो पर उडकर अपने ही रचे हुए काल्पनिक जगत् मे भ्रमण करता हुआ दिखाई पडता है।

अरस्तू का जन्म मक्दूनिया के एक प्रान्तीय नगर स्टागिरा मे हुआ था। उसकी शिक्षा पेल्ला के दरबार में हुई थी। उसका पिता वही राज-चिकित्सक था। युवावस्था मे वह एथेस भेज दिया गया। यहाँ वह बीस वर्षो तक अफलातून का एक अध्ययनशील विद्यार्थी रहा। उस समय एथेस मे साहित्य और कला के अध्ययन मे लोग बडी सफलता प्राप्त कर रहे थे। दार्शनिक अध्ययन भी खूब होता था।

राजा फिलिप ने अरस्तू की प्रतिभा का आदर किया और अपने होन-हार पुत्र सिकन्दर की शिक्षा का भार उसे सौप दिया। इस प्रकार आठ वर्षो तक वह मक्दूनिया के दरबार मे रहा। अरस्तू की शिक्षा से सिकन्दर का चाहे जो कुछ लाभ हुआ हो, पर अरस्तू को सिकन्दर की कृपा से प्रभूत सुविधाएँ प्राप्त थी। सिकन्दर ही की कृपा से अरस्तू ने अपना एक निजी पुस्तकालय बनाया था, जो उसके और उसके बाद के युग मे भी एक अद्भुत वस्तु बना रहा। कहा जाता है कि केवल मिस्र और परगा-मेनी राजाओ के पुस्तकालय ही उसकी तुलना मे आ सकते थे।

सिकन्दर, अपनी युवावस्था मे, अरस्तू का विशेष सम्मान करता था। वह अपने पिता से कम श्रद्धा उस पर नही करता था। उसका विश्वास था कि अपने पिता से उसने जीवन पाया है और अपने गुरु अरस्तू से ज्ञान प्राप्त किया है। सिकन्दर ने अपने गुरु की भक्ति के कारण स्टागिरा नगर का पुन. निर्माण कराया और फिर से उसे बसाया।

अरस्तू ने अपने जीवन के अन्तिम चौदह वर्षो का अधिकाश समय एथेस मे ही व्यतीत किया था। वहाँ उसे मनुष्यो और पुस्तको से सभी प्रकार की सुविधाएँ मिली, जिससे वह अपने दार्शनिक अन्वेषणों को आगे बढा सका। सिकन्दर की अकालमृत्यु के पश्चात् अरस्तू के विरोध मे पादरी और सूफी लोग उबल पडे। एथेस की मिथ्याविश्वासी जनता का क्रोध अरस्तू के विरुद्ध भडक गया और सुकरात की हत्या के लिए उत्तर-दायी दुष्ट भावनाएँ अरस्तू के यश और उपलब्धियो को नष्ट-भ्रष्ट करने के लिए प्रकट होती हुई दिखाई पडी।

अरस्तू दण्ड से बचने के लिए चेलसिस प्रदेश मे चला गया। उसकी व्यक्तिगत सुरक्षा के विचार से उसका पलायन उचित हो सकता है, किन्तु वह स्वय अपने भागने से हीन भाव का अनुभव कर रहा था। उसको छिपाने के लिए उसने यह तर्क दिया कि वह इसलिए वहाँ से चला गया, जिसमे एथेसवालो को उसकी हत्या कर, दर्शन के विरुद्ध पापपूर्ण आचरण करने का पुन अवसर न मिले। ऐसा जान पडता है कि भागने के कुछ ही मास बाद उसकी मृत्यु हो गई। चिन्ता और क्रोध ने मानो उसके जीवन का अन्त कर दिया था।

बकन कहता है—अरस्तू उन राजकुमारो की तरह सोचता था कि जब तक वह अपने सहयोगियो का नाश न कर दे, तब तक वह शान्ति-पूर्वक नही रह सकता। उसकी साहित्यिक उच्चाकाक्षा ऐसी थी कि वह सभी कलाओ और विज्ञानो के क्षेत्रो मे फैल जाना चाहता था। वह भौतिक और आध्यात्मिक जगत् के सभी रहस्यो को समझने का प्रयत्न करता था। बुद्धि की चरम सीमा तक पहुँचकर वह मानव बुद्धि से परे की समस्याओ का समाधान ढूँढना चाहता था। वह बौद्धिक विवाद मे युद्धोचित उत्साह के साथ पड जाता था, किन्तु उसके शत्रु फारसियो से अधिक दृढ थे, इस लिए वह उनको अभिभूत करने मे अधिक सफल नही हो पाता था।

अरस्तू ने दर्शन को मनन और व्यवहार, ऐसे दो भागो मे विभाजित किया। दर्शन के मनन या अरूप भाग को सबसे पहले उसी ने (मेटा-फिजिक्स) अध्यात्म नाम दिया था। उसके दर्शन का यह भाग सम्पूर्णत रहस्यमय और कही-कही अज्ञातव्य है। वह उसके गुरु अफलातून के दर्शन से अपेक्षाकृत कम अमान्य है। उसके दर्शन के इस भाग मे न केवल जीवन, गुण, तत्त्व, जन्म और जातियो पर ही विचार किया गया, अपितु मन और आत्मा, विशेषत दिव्य-आत्मा के सम्बन्ध मे भी विशद विचार

किया गया। मानव आत्मा के विषय मे अरस्तू ने पृथक् रूप से विचार किया है। विद्वानो का कथन है कि इस सम्बन्ध मे खोज करने पर ज्ञात होता है कि अरस्तू ने नया अन्वेषण न कर केवल नये नाम जोडे है। अमरत्व के सिद्धान्त को अरस्तू ने कही भी स्पष्ट नही किया है, जितना कि उसके गुरु अफलातून ने किया है।

अरस्तू के भौतिक दर्शन को अध्यात्म-दर्शन कहना अधिक उपयुक्त होगा, क्योकि उसमे भौतिक जगत् के सिद्धान्तो की सूक्ष्म बौद्धिक तत्त्वो से तुलना की गई है। उसमे सूक्ष्म निरीक्षण और अनुभव नही दिखाई पडता। जब वह किसी वस्तु के विस्तार मे पहुँचता है तो नक्षत्रो की गति और उनके आकार-प्रकार के विषय मे बहुत-सी ऐसी भूले कर जाता है जो उसके पहले के दार्शनिको ने नही की थी। मनुष्य और पशु के शरीर-विज्ञान के विषय मे उसका ज्ञान अधिक पूर्ण था। उस युग मे अरस्तू के सम-सामयिक दूसरे दार्शनिक उक्त विषयो पर बहुत भ्रान्तिपूर्ण ज्ञान रखते थे। उस समय रसायन-शास्त्र की स्थापना नही हुई थी। बौद्धिक दर्शन के बाद प्रकृति का निरीक्षण प्राय नही होता था। इसलिए यह असम्भव था कि प्राकृतिक निरीक्षण और परीक्षण हो। गणित मे अरस्तू का ज्ञान अपने पूर्व के दार्शनिको—यथा, अफलातून और पिथागोरस—से कम था।

अरस्तू को अपने समसामयिक पायरो और एरिस्टिक्स के सन्देहवाद से स्वभावत. सत्य की परीक्षा की सूक्ष्मता मे जाना पडा। इस प्रकार उसने तर्क को उसके आदि तत्त्वो मे परिणत करने का दुष्कर कार्य अपनाया। उसने एक ही स्वयसिद्ध तथ्य पर प्रमाणो के द्वारा सम्पूर्ण सत्य को एक व्यवस्थित रूप मे रखने मे सफलता प्राप्त की। अरस्तू से पहले किसी ने ऐसे प्रयत्न मे सफलता नही प्राप्त की थी। उसके स्वयसिद्ध तथ्य के अनुसार जो एक जाति के विषय मे ठीक है वह दूसरी जाति और उसके व्यक्तिगत अग के बारे मे भी ठीक हो सकता है।

कुछ आलोचको का कथन है कि अरस्तू के रहस्यात्मक या अध्यात्म दर्शन के विषय मे व्यर्थ उसकी बुद्धि का दुरुपयोग हुआ है, किन्तु उसके आलोचनात्मक और नैतिक, इनसे भी अधिक उसके राजनीतिक ग्रन्थो मे अधिक सूक्ष्म और तीक्ष्ण बुद्धि का दर्शन होता है। इसमे महत्त्वपूर्ण और आवश्यक वस्तुओ पर विचार किया गया है। अरस्तू के समय की स्थिति और उसकी अपनी सुविधा, उसकी प्राकृतिक देन और उद्योग बुद्धि ने उसे इतनी ख्याति दी कि वह अपने और अपने बाद के युग मे भी स्मरण किया जाता है।

प्राचीन यूनान मे विद्या और दर्शन की शिक्षा सर्वसाधारण को नही प्राप्त हो सकती थी। कुलीन और योग्य व्यक्ति ही अधिकारी समझे जाते थे। उसका एक उदाहरण यह मिलता है कि अरस्तू ने गम्भीर विषय पर कुछ पुस्तके लिखी थी, जिनमे गम्भीरतापूर्वक जटिल प्रश्नो को सुलझाया गया था। उस विषय का रहस्य उस युग के अध्ययनशील शिक्षार्थियो को भी नही बताया जाता था। सिकन्दर उस समय एशिया मे था और उसको यह सूचना मिली थी कि अरस्तू ने इस गूढ विषय को सर्वसाधारण की शिक्षा के लिए उपस्थित किया है।

सिकन्दर ने अरस्तू के नाम एक पत्र भेजा, उसमे उसने लिखा—विज्ञान के एक्रोएमिटिक भाग को प्रकाशित कर आपने बुरा किया। यदि मुझे दी हुई शिक्षा सर्वसाधारण को मिल जायगी तो मुझमे विशेषता क्या रह जायगी! जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मैने शक्ति और राज्यो पर अधिकार करने से अधिक, ज्ञान के प्रमुख भागो मे अधिकाश मनुष्यो से अधिक विशेषता प्राप्त कर ली है।

अरस्तू ने उत्तर मे कहा कि उस ज्ञान के कुछ भाग प्रकाशित हुए है, कुछ नही। वास्तव मे उसके अध्यात्म-शास्त्र की वह पुस्तक इस प्रकार लिखी गई है कि न कोई उसे पढ़ सकता है, न पढा सकता है। वह केवल उन लोगो की स्मृति को जागरित करने का काम करती है, जिन्होने गुरु से उस विषय की शिक्षा प्राप्त कर ली हो।





# वर्जिल

(७० ईसा पूर्व–१९ ई०)

महाकवि वर्जिल का लैटिन मे पूरा नाम पब्लियस वर्जिलियस मारो था। उसके जन्मस्थान का नाम एनडेज था जो इटाली के मानटुआ नामक छोटे नगर से बहुत दूर नही था। उसका पिता खेती करता था और मधुमक्खी पालने का व्यवसाय भी करता था। उसने अपने पुत्र की शिक्षा पर विशेष ध्यान रक्खा। वर्जिल की आरम्भिक शिक्षा क्रेमोना और मिलान नगरो मे हुई थी। जब उसकी अवस्था १७ वर्ष की हुई तब उसके पिता ने उसे उच्च शिक्षा के लिए रोम भेज दिया। विश्वविद्यालय मे, आरम्भ मे, वह वक्तृत्व-कला की शिक्षा ग्रहण कर रहा था। उसका पिता चाहता था कि उसका पुत्र भविष्य मे एक कुशल राजनीतिज्ञ और वकील बने, किन्तु वर्जिल की उस ओर रुचि न थी। वह दर्शनशास्त्र की ओर प्रवृत्त हुआ और कुछ वर्षो तक उसने एपिक्यूरस मतानुयायी दार्शनिक सिरो से शिक्षा ग्रहण की। सिरो उस समय के धनी और उच्चाकाक्षी युवको मे प्रसिद्ध था। उसी के सत्सग मे वर्जिल ने भविष्य के राजनीतिक और दार्शनिक नेताओ से परिचय प्राप्त किया था।

वर्जिल बडी लज्जाशील प्रकृति का व्यक्ति था। इसी कारण कुछ लोग उसे 'कुमारी पारथिनियास' के नाम से पुकारते थे। वह बिरले ही मार्ग मे जाता दिखाई पडता था, किन्तु जब कभी वह निकलता तब लोग उसके पीछे चल पडते और वह अपनी लज्जालु प्रकृति के कारण आस-पास के घरो मे घुसकर छिप जाता था। वह ओगस्टस की मडली और जनता मे उतना ही विख्यात था, जितनी आजकल की सिनेमा-तारिकाएँ है।

यह कितने आश्चर्य की बात है कि ऐसी प्रकृति वाले व्यक्ति को ईसाई धर्मावलम्बियो ने महात्मा, चामत्कारिक और सिद्ध पुरुष की भाँति सम्बोधित किया। तेरहवी शताब्दी मे महाकवि दान्ते ने वर्जिल को अपना गुरु और पथप्रदर्शक माना। उन्नीसवी शताब्दी के साहित्य-समालोचक, कवि तथा विद्वानो ने एक स्वर से वर्जिल को रोम का सर्वोत्कृष्ट कवि स्वीकार किया है। महाकवि वर्जिल की गणना योरोप के पच महाकवियो मे होती है।

कहा जाता है कि वर्जिल ने अपनी कविता मे एक बालक के जन्म लेने तथा उसे शान्ति-युग का सस्थापक होने की भविष्यवाणी की थी। इस कथा की व्याख्या कर लोगो की यह धारणा हुई कि वर्जिल ने महात्मा ईसा के प्रादुर्भूत होने की पूर्वसूचना दी थी। पाश्चात्य विद्वानो का कथन है कि ऐसे समय मे, जब कि सत्साहित्य के समालोचन की प्रणाली प्रचलित न थी उस समय भी, वर्जिल की महाकवि के रूप मे प्रसिद्धि का प्रधान कारण उसकी उक्त भविष्यवाणी की धार्मिक भावना ही थी, जो सर्व-साधारण के मन मे प्रविष्ट हो गई थी। वर्जिल की मृत्यु के उन्नीस वर्ष बाद महात्मा ईसा का जन्म हुआ था।

आरम्भ मे वर्जिल ने रोम का इतिहास लिखने का प्रयत्न किया। उसने देखा कि इस सम्बन्ध मे उसका ज्ञान अत्यल्प है, अतएव उसने ग्राम्य विषयो पर कविता लिखना आरम्भ किया। उसकी प्रथम महत्त्वपूर्ण कृति 'एक्लोग्स' अथवा 'ब्यकोलिक्स' है। इस रचना के सम्बन्ध मे कुछ कहने से पहले वर्जिल के समय की स्थिति से परिचित होना आवश्यक है। अपनी रचनाओ मे वर्जिल ने तत्कालीन कुछ ही घटनाओ का उल्लेख किया है। जिस समय उसने मिनसियस और आल्प्स् की पहाडियो का दर्शन किया, उस समय के इटली के धनिक वर्गो का शासन, जो रिपब्लिक के नाम से प्रसिद्ध था, पतनाभिमुख था। उसके दूसरे दशक मे, जुलियस सीजर गोल मे युद्ध करते हुए, रोम मे अपने ऐतिहासिक अभियान करने के लिए तैयार हो रहा था। पाँच वर्ष बाद, सत्ता प्राप्त करने पर, जब सीजर की हत्या हुई, तब वहाँ का गृहयुद्ध बन्द होने की अपेक्षा अधिक बढ गया। उस समय वर्जिल की अवस्था छब्बीस वर्ष की थी। जुलियस के दत्तक पुत्र ओक्टेवियन को अपने पिता के हत्यारो को, उसके बाद अपने ही साथी और विरोधी एन्टोनी को अभिभूत करने के लिए तेरह वर्षो तक सघर्ष करना पडा था। ऐक्टियम के युद्ध (ई० पू० ३१) ने एन्टोनी के भाग्य

का निपटारा कर दिया और ओक्टेवियन के क्रूर शासन ने रोम मे शान्ति स्थापित की थी। ई० पू० २७ मे ओक्टेवियन ने अपने को 'प्रिसेप्स' (सर्व-श्रेष्ठ नेता) घोषित किया और ओगस्टस की पदवी धारण की। हम उसे इसी नाम से रोम के प्रथम सम्राट् के रूप मे जानते है।

इन विनाशकारी घटनाओ के प्रति वर्जिल की प्रतिक्रिया एक दार्शनिक और कवि की प्रतिक्रिया थी, राजनीतिज्ञ और पार्टी विशेष के समर्थक की प्रतिक्रिया नही थी। जुलियस सीजर के व्यक्तित्व के प्रति वह आकृष्ट था और उसके बाद ओक्टेवियन की प्रगति का वह ध्यान से अध्ययन कर रहा था।

वर्जिल अपने वीरो की पूजा विजेता या मनुष्य के रूप मे नही करता है। वह समझता है कि ईश्वर ने उन दैवी शक्तियो को भेजकर अशान्त ससार मे सुख और शान्ति की स्थापना की। वह युद्ध का भयानक वर्णन करता है। 'एक्लोग्स' मे वह दो बार ऐसी लेखनी की निन्दा करता है, जो युद्ध के वर्णन मे लगी हो।

वर्जिल ने यूनानी ग्राम्यगीत को लैटिनी-जगत् के साथ मे प्रस्तुत किया। उसके ग्राम्यचित्र असामयिक या केवल काल्पनिक नही थे। उनमे अशाति के समय मे किसानो के सघर्षो और विपत्तियो के स्पष्ट चित्र अकित है। इन बाह्य चित्रो के अकन के साथ-साथ उसने तत्कालीन विख्यात पुरुषो का भी चित्रण किया है। वर्जिल ने मनुष्य, वृक्ष, वन्य पशु और पर्वतो मे सामजस्य का दर्शन किया है। प्रकृति और मनुष्य तत्त्वत एक है, किन्तु राजनीति और युद्ध मनुष्य को प्रकृति से, वास्तविकता से, पृथक् कर देते है। केवल गडेरिये और उसकी भेडे ही प्रकृति के प्रेम और उसके विश्वास के पात्र है। वे ही वनो का सगीत और देवदार के वृक्षो की भाषा को समझ सकते है। वर्जिल ने एक शिशु की भॉति इन लोगो की वाणी सुनी है। वह कहता है कि इस जड़ कहलानेवाले जगत् मे सवेदनशीलता है। यहॉ की चट्टानो से सगीत और खेतो से वाणी गूँज उठती है। यहॉ वशी ही वशीवाले को सुर सिखाती है। भेड़े, प्रेमी की सहानुभूति मे, मौन खडी दिखाई पड़ती है और परियो को अपने क्रूर कृत्यो के लिए उलाहने मिलते है।

कवि इन दृश्यो को केवल शृङ्गार के आनन्द के लिए नही वर्णन करता, किन्तु इसलिए कि लोग उसकी रचनाओ के माध्यम से उद्घाटित किये हुए जगत् को यथार्थ रूप मे देखे। कवि का सत्य केवल श्रद्धा की

वस्तु नही है, उसमे वृक्षो और चट्टानो को द्रवित करने की शक्ति है। वर्जिल के दृष्टिकोण मे एक ऐसा दर्शन है, जिसका आधुनिक दर्शन भी उपेक्षा नही कर सकता।

वर्जिल की दूसरी प्रतिभापूर्ण कृति 'जिओर्जिक्स' है। इसमें भी किसानो, खेतो, पशुओ और वृक्षो का सगीत है। वर्जिल को ग्रामीण जीवन से अत्यधिक प्रेम था और इस सम्बन्ध मे उसकी निकट तया प्रत्यक्ष अनुभूति थी। वह मन्द गति से कार्य करता रहा। वह अपनी रचनाओ को प्रकट करने मे अत्यन्त लज्जालु था। अपने मित्रो के विशेष आग्रह पर ही उसने अपनी रचनाएँ प्रकाशित कराई। ओक्टेवियन के मत्री, मीसेनास ने उसे उसकी दूसरी कृति 'जिओर्जिक्स' प्रकाशित करने के लिए बहुत प्रोत्साहित किया था। वर्जिल की अवस्था ३१ वर्ष की हो चुकी थी, जब उसकी रचनाएँ जनता के सम्मुख आई। उसकी कविताएँ प्राय सभाओ मे पढी या गायी जाती थी। उसका यश पूर्णत स्थापित हो चुका था। कवि अपनी रचनाओ की सफलता से अत्यन्त अभिभूत सा था। कहते है कि रोम के शासक के समान महाकवि वर्जिल की भी जय मनायी जाती थी। वर्जिल काव्य के देवता की आराधना करता था कि वह उसके कण्ठ मे आकर बसे।

वर्जिल की तीसरी रचना 'इनियड' महाकाव्य है। उस समय कवि की अवस्था चालीस वर्ष की थी। वह रोम नगर मे आया था। उसने अपने मित्रो को यह सन्देश दिया कि वह एक ऐसा महाकाव्य लिख रहा है, जो पूर्ण हो जाने पर लैटिन साहित्य मे वही स्थान प्राप्त करेगा जो यूनानी साहित्य मे इलियड ने प्राप्त किया है। उस महाकाव्य का नायक इनियास होनेवाला था जो वेनस और आचिनीज का पुत्र था। उसमे ट्राय के पतन के पश्चात् इनियास के भटकने की कथा लिखी जानेवाली थी। किस प्रकार इनियास कार्थेज की रानी डिडो के दरबार मे पहुँचा था। उसकी इटली की यात्रा, टरनस के साथ उसका युद्ध, लावेनिया से विवाह, रोम का निर्माण, विकास और विजय, इन सभी विषयो का वर्णन उसके महाकाव्य मे होनेवाला था।

निरन्तर दस वर्षो तक वर्जिल इस महाकाव्य को लिखता रहा। उसे इतना अवकाश भी नही मिला कि वह उसका सशोधन कर सके। वर्जिल की इस रचना का किसी ने दर्शन नही किया था, फिर भी सबको उसके विषय मे बडी उत्सुकता थी। एक बार वर्जिल ने प्रोपर्टियस नामक कवि को

उसका कुछ भाग दिखाया। उसने यह बात फैला दी कि वर्जिल एक ऐसा महाकाव्य लिख रहा है, जिसका इलियड से भी अधिक महत्त्व हो सकता है। ओगस्टस ने भी यह समाचार सुना। उसे अत्यन्त उत्कण्ठा हुई। उसने वर्जिल के पास पत्र लिखकर आग्रह किया कि वह उसे सुनना चाहता है। वर्जिल ने उसके अनुरोध को अस्वीकार कर दिया। उसके अनेक पत्रो के उत्तर मे वर्जिल ने लिखा—आपके कई पत्र मिले। मेरा लिखा 'इनियड' यदि आपको सुनाने के योग्य होता तो मै उसे अवश्य आपको सुनाता। यह कार्य इतना विशाल है कि इसमे बहुत परिश्रम की आवश्यकता है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इसे आरम्भ करने के पहले मैने पर्याप्त विचार नही किया था।

एक वर्ष बाद जब ओगस्टस युद्ध से लौटा, तब वर्जिल अपने महाकाव्य का कुछ भाग लेकर राजमहल मे पहुँचा। उस समय ओगस्टस की बहिन ओक्टेविया भी वहाँ उपस्थित थी। वर्जिल अपने मधुर कण्ठ से 'इनियड' की पक्तियाँ सुना रहा था। उसके वर्णन मे ओगस्टस के पूर्व-पुरुषो का इतिहास था। ओक्टेविया का पुत्र मार्सेलस का देहान्त कुछ समय पूर्व हुआ था। ओगस्टस ने उसे अपना उत्तराधिकारी घोषित किया था। वह अत्यन्त उन्नतिशील प्रकृति का युवक था। उसकी मृत्यु केवल अठारह वर्ष की अवस्था मे हुई थी। वर्जिल के इस महाकाव्य के छठे भाग मे मार्सेलस की मृत्यु का वर्णन था। उस अश तक पहुँचते ही कवि की वाणी शक्तिशालिनी होनेपर भी इतनी कोमल हो गई कि ओक्टे-विया सुनकर सज्ञाहीन हो गई। शोकाकुल माता की आँखो के सम्मुख अपने प्रिय पुत्र की आकृति अकित हो उठी थी। कवि का स्वर रुद्ध हो गया था।

चेतना होने पर मुग्ध होकर ओक्टोविया ने वर्जिल को पुरस्कार दिया था। कहते है कि स्वर्णमुद्राओ की एक बडी निधि कवि को प्राप्त हुई थी।

इनियड समाप्त करने पर वर्जिल की कीर्ति सर्वत्र फैल गई। उसे अपने एक मित्र की उदारता से दस लाख स्वर्णमुद्रा प्राप्त हुई थी और रोम मे उसका निजी एक गृह भी था। उसके जीवन मे अर्थाभाव का कोई प्रश्न नही था। वह अधिकतर केम्पेनिया और सिसली मे ही रहा करता था।

वर्जिल को धन और सम्पत्ति के प्रति तनिक भी प्रलोभन न था। एक बार ओगस्टस उसे एक निष्कासित धनिक की सम्पत्ति देने लगा; किन्तु उसने उसे अस्वीकार कर दिया। उसकी आँखो के सम्मुख वही चित्र

उपस्थित हो गया, जब इसी तरह उसकी भी समस्त सम्पत्ति ओगस्टस द्वारा जब्त कर ली गई थी। बाद मे फिर वह उसे प्राप्त हो गई थी।

वर्जिल अपना महाकाव्य पहले गद्य मे लिखता था फिर उसे पद्य मे परिवर्त्तित कर देता था। उसने सम्भवत. 'इनियड' की रचना एक हार्दिक मित्र के आनन्द की दृष्टि से की थी। वह एक ऐसे मानव और दिव्य अशो से युक्त एक राजकुमार की सृष्टि करना चाहता था, जिस पर वह गर्व कर सके।

महाकवि ने जब इनियड समाप्त किया, उस समय उसकी अवस्था पचास वर्ष की थी। उसने निश्चय किया कि एथेस जाकर वह तीन वर्ष वही व्यतीत करेगा और वही निश्चिन्त होकर अपने महाकाव्य का सशोधन करेगा। लेकिन वहाँ कुछ ही महीने व्यतीत हुए थे कि ओगस्टस अपने पूर्वी राज्य से इटली लौटते समय उधर से गुजरा और वर्जिल से उसने आग्रह किया कि वह भी उसके साथ रोम चले।

वर्जिल का स्वास्थ्य उस समय समुद्र-यात्रा के लिए ठीक नही था, फिर भी उसने निमत्रण स्वीकार कर लिया। मार्ग मे ही उसे लू लग गई और तीव्र ज्वर के कारण ब्रिन्डसी पहुँचते ही उसका देहान्त हो गया।

मृत्यु के पहले वर्जिल ने अपने दो मित्रो को आदेश दिया था कि उसकी मृत्यु के पश्चात् वे लोग 'इनियड' को जला देगे क्योकि उसकी वह रचना उस स्तर की नही हो सकी जैसी कि वह लिखना चाहता था।

ओगस्टस ने उसकी इस मृत्युकालीन इच्छा की अवहेलना की और उसने उन दोनो मित्रो को आदेश दिया कि वे इनियड का सम्पादन और सशोधन कर दे, किन्तु अपनी ओर से उसमे कुछ न जोड़े। उन लोगो ने दूसरे भाग मे से बाईस पक्तियाँ काट दी और दूसरे और चौथे भागो मे स्थल-परिवर्तन कर दिया था, जहाँ इनियास और हेलेन का वर्णन था। वह स्थल परिवर्त्तन अब भी है, किन्तु उक्त कटी हुई पक्तियाँ फिर से जोड दी गई थी।

महाकवि वर्जिल जिस युग मे उत्पन्न हुआ था, वह भयानक अत्याचारो का युग था। पूँजीपति निर्धनो पर आतक जमाये थे। एक ओर विलासिता और व्यभिचार की चरम सीमा थी, दूसरी ओर जनता भूखी, नगी, त्रस्त थी।

सम्राटो की विश्व-विजय की कामना का जैसे अन्त होनेवाला था। ससार मे घोर अशान्ति और अन्याय का अन्त करने और मानवता को एक नूतन सन्देश देने के लिए महात्मा ईसा का जन्म होनेवाला था। वर्जिल की मृत्यु के १९ वर्षो के बाद ही ईसा का जन्म हुआ था।

यहाँ पर इनियड महाकाव्य की कथा का साराश दे देना उचित होगा, क्योकि आगे चलकर महाकवि दान्ते के महाकाव्य से भी इसका सम्बन्ध है।

## इनियड की कथा

इनियास ट्राय का राजकुमार है। आनचिसीज और वेनस देवी के सयोग से उसकी उत्पत्ति हुई थी। ट्राय का पतन हो चुका था। इनियास अपने पिता और छोटे पुत्र तथा अनेक अनुगामियो के साथ भाग जाता है। इस भगदड मे इनियास की स्त्री क्रेउसा कही लुप्त हो जाती है। उसका कुल-देवता पेनाटीज उसे आदेश देता है कि इटली मे उसके भाग्य का निर्णय होगा। समुद्र पर बहुत भटकने के बाद राजकुमार के पिता का देहान्त हो जाता है। उसके अनेक जहाज जूनो के द्वेष के कारण दुर्घटना-ग्रस्त हो जाते है, लेकिन समुद्र देवता नेपचून की कृपा से उसके सात जहाज बच जाते है और वे अफ्रिका के समुद्र-तट पर लगते है। यहाँ कार्थेज की रानी डिडो ट्राय वालो का विशेष स्वागत करती है।

रानी ने अपने मृत पति के प्रति जो भक्ति की प्रतिज्ञा की थी, उसकी उपेक्षा कर वह इनियास के प्रेम मे बँध जाती है। राजकुमार मर्क्यूरी के आदेशानुसार फिर इटली की यात्रा करता है। उस समय रानी डिडो आत्महत्या कर लेती है। इनियास सिसली पहुँचकर अपने मृत पिता आनचिसीज की श्राद्धक्रिया करता है और अपने कुछ अनुगामियो को वहाँ उपनिवेश बसाने के लिए छोड देता है। राजकुमार अपने शेष साथियो के साथ कूमे पहुँचता है। सिविल द्वारा पथ प्रदर्शित किये जाने पर वह हेडीज मे उतरता है और वहाँ वह पापियो को दण्ड प्राप्त करते और पुण्यात्माओ को शान्तिपूर्वक जीवन व्यतीत करते देखता है। पुण्यात्माओ मे वह अपने पिता से मिलता है, जो उसे बताता है कि वह रोमन जनता का पूर्व-पुरुष बनने वाला है, जो विश्व के साम्राज्य पर शासन करेगा। (यह वर्णन वर्जिल के महाकाव्य इनियड के छठे भाग मे वर्णित है। यही से दान्ते ने अपने 'इन्फरनो' के लिए पर्याप्त भूगोल और यन्त्र सम्बन्धी सामग्री प्राप्त की थी।)

इसके बाद राजकुमार इनियास तिबर पहुँचकर फिर लेटियम मे उतरता है। यहाँ पर दैववाणी होती है कि ट्राय वालो के भाग्य मे लिखी हुई यात्रा यहाँ पर समाप्त होती है। उस देश का राजा लेटिनस राजकुमार का स्वागत करता है और अपनी लडकी लेविनिया का विवाह उससे कर देता है। पहले इस लडकी का विवाह स्तूली के राजकुमार टरनस से

निश्चित हुआ था। फ्यूरी एलेकटो की सहायता से जूनो ट्राय और लैटिन वालो के बीच युद्ध भड़का देता है और कई युद्धो के बाद, जिनमे दोनो ओर से मित्र-राष्ट्र सम्मिलित होते है, स्तूलियो की पराजय होती है। टरनस इनियास को द्वन्द्व-युद्ध के लिए ललकारता है। अन्त मे जूनो जुपिटर से समझौता कर लेता है कि इनियास इस शर्त पर विजेता होगा कि वह लेटियम का नाम नही परिवर्तित करेगा। इस प्रकार इनियास और लेविनीया के सयोग से ट्राय और लेटिन का मेल होता है और रोम नगर और साम्राज्य की आधार-शिला स्थापित हो जाती है।

इसमे सन्देह नही है कि वर्जिल ने होमर के महाकाव्य 'इलियड' से ही अपने महाकाव्य का सूत्र पाया था। लेकिन वर्जिल ने अपनी कल्पना और प्रतिभा का पूर्ण कौशल अपनी रचना मे प्रदर्शित किया है। होमर के इलियड की उत्पत्ति आरम्भिक युग की बर्बरता की भूमि से हुई है और इनियड की उत्पत्ति उस युग मे हुई थी जब सभ्यता अपने विकास मे आगे बढ चुकी थी। कहा जाता है कि इनियास और डिडो की प्रेम-कहानी का अकुर यूनानी कहानी जेसन और मेडिया से ही प्राप्त हुआ था, किन्तु लैटिन प्रेमी और यूनानी प्रेमी मे बड़ा अन्तर है। यूनानी प्रकृति मे जो भयानकता है, वह लैटिन मे नही है। होमर ने इलियड मे यूनानी जाति की वीरता की गाथा का इतिहास प्रस्तुत किया था और वर्जिल ने रोमन जाति के गौरव की गाथा एकत्र की थी। रोमन लोगो के इतिहास मे उनके पूर्वपुरुषो का वीरतापूर्ण विवरण नही था। वर्जिल ने अपनी प्रतिभा से उसे इतना महत्त्वपूर्ण रूप दिया जो विश्व मे उनकी जाति की गौरव-गाथा मे अत्यन्त सहायक हुआ। वर्जिल ने इनियड की रचना रोमन जाति के गौरव के उद्देश्य से ही की थी। इलियड मे मानव प्रकृति का स्पष्ट चित्रण है। इनियड में कवि की भावुकता और कल्पना का सजीव वर्णन है।

वर्जिल ने जिस विषय अथवा जिस अग का वर्णन किया है, उसमें विशेषतः अपने व्यक्तिगत अनुभव और ज्ञान का ही आधार लिया है। रणक्षेत्र और साम्राज्यो के भाग्य-निर्माण के अतिरिक्त कवि की प्रतिभा अपने घरेलू जीवन के चारो ओर बिखरी रहती थी। वह शान्ति का उपासक था। होमर का एक सैनिक कभी भी शान्ति से विजेताओ के साथ नही रहता है। वर्जिल की काल्पनिक मूर्तियाँ मुक्ति की भावना मे लीन एक अन्य परिचित ससार मे क्षण भर शान्तिपूर्वक विश्राम कर सकती है। ट्रोजन सैनिको के सम्मख नगर द्वार प्रवेश करते समय यह चित्र सामने

अकित होता है—चीटियाँ शरद्-ऋतु के आगमन की प्रतीक्षा मे इधर-उधर खेतो मे नष्ट और बिखरे हुए अन्न को एकत्र कर अपन स्वर्णमय सग्रह से अपने घर को भर रही है।

वर्जिल की रचना मे साधारण वस्तु के वर्णन से लेकर गूढ दार्शनिक तत्त्व भी भरे है। उन्हे खोजनेवाला चाहिए, जैसे महाकवि दान्ते ने उसके छठे भाग से अपने महाकाव्य का निर्माण किया और उसे अपना गुरु मानकर, उसके पथ-प्रदर्शन करने पर, नरक और स्वर्ग का वर्णन किया है।

---



# दान्ते
(१२६५–१३२१ ई०)

दान्ते केवल इटली का ही सर्वश्रेष्ठ कवि नही हुआ, प्रत्युत उसकी गणना योरोप के पाँच महाकवियो मे होती है।

दान्ते का जन्म इटली के फ्लोरेन्स नगर मे हुआ था। यह नगर अपने प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए योरोप मे प्रख्यात है। दान्ते का परिवार 'गुएल्फ' था और उसे शुद्ध फ्लोरेन्स के निवासी होने का गर्व था। इस परिवार की अपनी जमीन और गृह-सम्पत्ति आदि भी थी। दान्ते के पिता कानून-विशारद थे और राजनीति मे सक्रिय सहयोग करते थे। दान्ते के पिता की अभिलाषा थी कि वह अपने पुत्र को व्यवसायी न बनाकर साहित्य और कला की ओर प्रवृत्त करे।

दान्ते जब ५-६ वर्ष का था तभी उसकी माता का देहान्त हुआ। बारह वर्ष की अवस्था मे ही उसे पितृ-शोक मनाना पडा। दान्ते और उसके दो भाई सौतेली माँ के आश्रित छोड दिये गये।

दान्ते के बाल्यकाल मे ही एक ऐसी घटना हुई, जिसका प्रभाव उसके जीवन पर पडा। यह प्रभाव इतना अमिट और चिरस्थायी हुआ कि आज भी वह दान्ते की रचनाओ मे मिलता है। दान्ते की अवस्था जब नौ वर्ष की थी तब उसका पिता उसे एक मई त्योहार के अवसर पर अपने एक पडोसी के घर पर ले गया। पडोसी का नाम फोल्को-पोर्टनेरी था। उसकी एक आठ वर्ष की कन्या थी, जिसका नाम वियाट्रिस था।

इस भोज के अवसर पर दान्ते की दृष्टि उस बालिका पर पडी। उसके हृदय मे सर्वप्रथम प्रेम की अखण्ड ज्योति आलोकित हो उठी। दान्ते उस समय केवल एक बालक ही था, किन्तु उसके अन्तरतम मे वियाट्रिस की जो मूर्ति प्रतिष्ठित हुई, उसे वह जीवन पर्यन्त न विस्मृत कर सका।

उसे देखने पर दान्ते के हृदय मे जो भावनाएँ उत्पन्न हुई, उसके सम्बन्ध मे वह लिखता है—वह मुझे एक बहुत अच्छे रग के कपडे से सजी दिखाई पडी, बहुत अच्छा लाल रग, जो उसकी अवस्था के अनुकूल था।

दान्ते कहता है—उस समय मेरा हृदय कॉप गया और मैंने अपने आपसे कहा—लो, यह मुझसे अधिक शक्तिशाली है, यह मुझपर शासन करेगी।

दान्ते की आत्मा और उसकी बुद्धि आश्चर्य-चकित थी। वियाट्रिस उसकी आँखो से कहने लगी—लो, तुम्हारा आनन्द-स्रोत प्रकट हो गया।

वियाट्रिस का घर मे प्यार से पुकारने का नाम 'विसे' था। दान्ते के जीवनीकार बोकेचियो ने उसके सम्बन्ध मे लिखा है—इस बालिका की आकृति इतनी असाधारण सौन्दर्य-सम्पन्न थी कि उसे सहज ही देवलोक की कन्या सम्बोधित किया जा सकता था।

दान्ते ने स्वय अपनी प्रेम-कहानी कही है। उसमे कोई रोमाचकारी घटना नही है। जो महत्त्वपूर्ण घटना समझी जा सकती है, वह १२८७ ई० मे साइमन डिवार्डी नाम के युवक से वियाट्रिस का विवाह है। जैसा कि वह स्वय कहता है, उसका प्रेम अत्यन्त पवित्र था। विवाह से उसका कोई सम्बन्ध नही था। उन दिनो विवाह अधिकतर राजनीतिक सम्बन्ध के लिए किया जाता था।

दान्ते वियाट्रिस का दर्शन केवल इसलिए करना चाहता था कि उसे उसमें दिव्यता का दर्शन होता था। वियाट्रिस अठारह वर्ष की थी जब पहली बार वह मार्ग मे दान्ते से मिली थी। उस समय उसने दान्ते का ऐसा शिष्ट अभिवादन किया कि दान्ते ने अपने को असीम आनन्द मे मग्न पाया। दूसरी बार वियाट्रिस मिली और उसने उसका अभिवादन नही किया,

क्योंकि दान्ते को लेकर कुछ अफवाहे फैल गई थी। यही पर दान्ते को यह अनुभव हुआ कि प्रेम मे दुख और सुख दोनो ही होते है। तीसरी बार किसी मित्र के यहाँ दान्ते और वियाट्रिस की भेट हुई। दान्ते के अनुसार इस अवसर पर वियाट्रिस ने उसकी हँसी उडाई।

१२८९ ई० मे फोल्को-पोर्टीनेरी की मृत्यु हो गई और अपनी प्रेमिका के शोक की सहानुभूति मे दान्ते ने भी अश्रुपात किया। १२९० ई० मे वियाट्रिस का देहान्त, चौबीस वर्ष की अवस्था मे, हुआ। उस समय दान्ते को ऐसा प्रतीत हुआ कि उसकी जीवन-ज्योति बुझ गयी, मानो सारा फ्लोरेन्स नगर उसके मरने से सूना हो गया।

दान्ते अल्पावस्था से ही वियाट्रिस के सम्बन्ध मे गीत लिखने मे व्यस्त था। उसने अपने अनुभवो से अपनी प्रेम की दृष्टि विकसित की और अत्यन्त मधुर शैली मे अपने प्रेम के गीत गाये। दान्ते के पूर्व के 'दरबारी प्रेम' और उसके इन प्रेम-गीतो मे स्पष्ट अन्तर है। दान्ते की सर्वप्रथम कृति का नाम 'विटा नु ओव्हा' (नवजीवन) है। इसकी रचना अठारह वर्ष की अवस्था मे उसने की थी। १२९० ई० के पूर्व की उसकी कविताएँ प्रेमरस की है। इसके बाद की रचना प्रेमरसपूर्ण कविताओ से रहित है। अपनी प्रेमिका के निधन के एक वर्ष पर्यन्त दान्ते सभी कार्य त्याग कर शोकपूर्ण रचना मे प्रवृत्त हुआ। आत्मविस्मृति के हेतु दान्ते का जीवन पूर्ववत् उच्च स्तर पर न रह सका। इस सम्बन्ध मे उसने स्वय लिखा है—तेरा वह मुख-मण्डल मृत्यु के आवरण मे मेरे नेत्रो से दूर हो गया, इसलिए कुछ काल तक मै ससार के तुच्छ सुख मे निमग्न होकर तुझसे विलग हो गया था।

'नवजीवन' मे कवि और वियाट्रिस के प्रेम का सम्पूर्ण इतिहास वर्णित है। बाल्यावस्था में पहले-पहल वियाट्रिस और उसके मिलन, उनमे प्रेम का बीजारोपण एव विकास तथा स्वप्नावस्था मे उसकी मृत्य के चित्र अत्यन्त मार्मिक और सजीव है। इस कृति मे उसने गद्य मे अपने गीतो की व्याख्या भी की है।

युवावस्था मे ही दान्ते ने प्रोवेंस की भाषा और साहित्य से परिचय प्राप्त कर लिया था। वह अपनी लैटिन भाषा को परिष्कृत करने लगा और अपना क्षेत्र विस्तृत करने लगा। उसने दर्शन, धर्मशास्त्र, विशेष कर ज्योतिष, प्राचीन काव्य आदि का अध्ययन किया। उसने अपने ढग से सम-सामयिक रचनाओ का दर्शन-परीक्षण किया। वह बहुत पढता था। उसकी एकाग्रता की शक्ति अद्भुत थी। यह प्रसिद्ध है कि एक बार एक दूकान के

पास खडे-खडे पॉच-छ घटे तक एक पुस्तक पढने मे वह इस तरह व्यस्त हो गया कि उधर से एक बडा जलूस निकला और उसे पता तक नही चला। वह इतना अधिक अध्ययन करता था कि पढते-पढते उसकी ऑखो के सामने अन्धकार छा जाता और अन्त मे नेत्रो पर ढडे पानी की पट्टी देनी पडती थी। यह सब होने पर भी वह अपना सामाजिक और नागरिक सम्बन्ध बनाये रहता था। वह कवि होने के साथ ही चित्रकार और गायक भी था।

दान्ते ने जिस समय अपने साहित्यिक जीवन का आरम्भ किया, उस समय योरोप की काव्यभाषा लैटिन और ग्रीक थी। उच्च वर्ग तथा विद्वान् इन भाषाओ के काव्यो का आनन्द ले सकते थे, किन्तु सर्वसाधारण जनता इनसे अधिकाशत वचित रहती थी। अत. दान्ते के हृदय मे यह भावना उत्पन्न हुई कि क्यो न इटालियन भाषा मे ही साहित्य का निर्माण किया जाय। अतएव उसने अपनी रचनाओ द्वारा अपनी आकाक्षा को प्रत्यक्ष रूप दिया। दान्ते की मातृभाषा लैटिन से निर्मित 'टसकन डायलेक्ट' थी। अपने विश्व-विख्यात महाकाव्य 'डिवाइन कामेडी' को दान्ते ने इसी फ्लोरेन्स की मुहावरेदार लोक-भाषा मे लिखा। बोकेच्चियो तथा पेटरार्क ने भी उसके बाद इसी जन-साधारण की भाषा मे साहित्य की रचना की। फल-स्वरूप इटालियन भाषा साहित्यिक माध्यम-भाषा के सम्मानित पद पर प्रतिष्ठित हुई। वास्तव मे इटालियन भाषा को उत्कृष्ट साहित्यिक रचनाओ के निर्माण द्वारा अलकृत एव आदरणीय बनाने का सम्पूर्ण श्रेय महाकवि दान्ते को ही है।

वियाट्रिस के देहान्त के बाद दान्ते का जीवन इतना शोकमय हो गया था कि उसके सम्बन्धियो और मित्रो को यह आशका हुई कि कही इस तरह वह अपने जीवन का अन्त न कर दे। वेदना की गम्भीरता के कारण दान्ते बहुत दुर्बल हो गया था। अतएव उन लोगो के दबाव और आग्रह के कारण दान्ते को अपना विवाह जेम्मा नाम की युवती से करना पड़ा। उस समय दान्ते की अवस्था तीस वर्ष की थी।

जेम्मा से दान्ते को दो पुत्र और दो पुत्रियाँ उत्पन्न हुई। दान्ते के कुछ जीवनीकारो का कथन है कि उसका पारिवारिक जीवन कलहपूर्ण था। दान्ते और उसकी पत्नी अलग-अलग घरो मे निवास करने लगे। जेम्मा को विश्वास हो गया था कि उसका पति किसी अन्य से प्रेम करता है, किन्तु बोकेच्चियो के अनुसार दान्ते अपनी पुस्तको मे इतना व्यस्त रहता था कि उसके घर के लोग और उसकी स्त्री बडी दुखी हो जाती थी। बाद मे यह जानकर कि दान्ते का स्वभाव ही ऐसा है, किसी को कोई शिकायत न रही।

कला, अध्ययन और गार्हस्थ्य के अतिरिक्त दान्ते का नागरिक कर्तव्य भी था। नागरिक अधिकार प्राप्त करने की अवस्था हो जाने पर उसने राजनीति मे प्रवेश किया। तत्कालीन जनतान्त्रिक विधान के अनुसार कोई ऊँचा सरकारी पद प्राप्त करने के लिए किसी बडे नगर के सघ का सदस्य होना आवश्यक था। दान्ते ने डाक्टरो और रासायनिको के सघ मे अपना नाम लिखा लिया। इस सघ मे सुवर्णकार, चित्रकार और पुस्तक-विक्रेता (उन दिनो रासायनिको के यहाँ पुस्तके बिका करती थी) भी होते थे। उस समय फ्लोरेन्स की सरकार मे एक न्यायाधीश और छ. प्रमुख जज हुआ करते थे। ये प्रति दो मास मे नगर-सघो से चुने जाते थे। नगर के प्राचीन ग्रन्थ-सग्रहालयो मे बहुत से ऐसे पत्र मिलते है, जिनसे दान्ते द्वारा मतदान, समिति विशेष मे सम्मति-दान या फिर समिति मे भाषण देने का उल्लेख है। १३०० ई० मे दान्ते राजदूत निर्वाचित हुआ। जो प्रमाण प्राप्त है, उससे ज्ञात होता है कि दान्ते ने अपने इस राजदूतपद को सफलतापूर्वक निभाया। इसके पश्चात् वह न्यायाधीश भी बनाया गया।

प्रत्येक देश की राजनीति मे विभिन्न दल होते है और उनके अपने चक्र चला करते है। १३०१ ई० मे दान्ते का विरोधी राजनीतिक दल प्रभुत्व मे आया। इस परिवर्तन के परिणाम-स्वरूप दान्ते और दूसरे चार प्रमुख व्यक्तियो पर जाल, भ्रष्टाचार, चार्ल्स पोप के विरुद्ध षड्यत्र करने और फ्लोरेस नगर की शान्ति भग करने के लिए मुकदमा चला। १३०२ ई० मे दान्ते की समस्त सम्पत्ति पर सरकारी अधिकार हो गया और उसे राज्य-निष्कासन की आज्ञा मिली। दान्ते की पत्नी और उसकी सन्तानो को विशेष कष्ट का सामना नही करना पडा था, क्योकि जेम्मा की अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति थी, जिसके द्वारा उसने अपने पुत्रों को अच्छी शिक्षा प्रदान की और पुत्रियो का विवाह सम्पन्न घराने मे किया। निर्वासन के पूर्व से ही जेम्मा और दान्ते अलग रहते थे, अतएव दोनो को इस वियोग से विशेष दु ख नही सहना पडा होगा।

दान्ते ने अपने निबन्धो की एक पुस्तक की भूमिका मे अपनी स्थिति प्रकट की है—अपनी भाषा के सभी क्षेत्रो और प्रदेशो मे मै एक भिक्षुक की तरह भटकता रहा हूँ। अनिच्छा से मै सम्पत्ति-जन्य दु खो को सबके सामने प्रकट करता रहा हूँ। वस्तुत मै बिना पाल और पतवार के जहाज मे एक से दूसरे तट और बन्दरगाह मे भटकता रहा हूँ, जो दरिद्रता की सूखी हवा से चलता रहा है।

अपने देश से विलग होकर दान्ते योरोप के विभिन्न राज-दरबारो मे याचक के रूप मे परिभ्रमण करता रहा, किन्तु उसके कुछ अन्य आलोचको का मत है कि वह राजदरबारो मे विलास-वैभव के साथ जीवन व्यतीत करता था। जो कुछ भी हो, निर्वासन के बाद दान्ते पेरिस गया। वहाँ से वह एक नगर से दूसरे मे भटकता रहा। दान्ते के हृदय मे अपनी जन्म-भूमि लौटने की तीव्र इच्छा थी। इस कार्य मे सफल होने के लिए उसने अनेक राजाओ तथा राजनीतिक दलो से सहयोग स्थापित किया। १३०८ ई० मे लक्जम्बर्ग का काउण्ट हेनरी रोम का राजा हुआ। दान्ते ने उससे पत्रव्यवहार किया और उसी को सम्बोधित करते हुए 'डी मार्नकिया' नाम का महान् राजनीति-शास्त्र लिखा। हेनरी पर 'डी मार्नकिया' का अधिक प्रभाव पडा। उसने इस महान् ग्रन्थ के साथ आल्प्स् पर्वत पार किया और अपने साम्राज्य को पुनस्सघटित करने का स्वप्न देखा। प्रारम्भ मे हेनरी को सफलता मिली, किन्तु जब उसने फ्लोरेस नगर मे कर लेने के लिए सेना भेजी तो वहाँ उसका सघटित विरोध हुआ। परिणाम-स्वरूप हेनरी की सेना पराजित हुई और साथ ही साथ पवित्र रोमन-साम्राज्य नाम की जो भ्रमात्मक राजसत्ता थी, उसका सदैव के लिए अन्त हो गया। सभ्यता और उन्नति सम्बन्धी जो दान्ते के सिद्धान्त थे उनका प्रचार हुआ, मध्य युग की सकुचित भावनाओ का अन्त हुआ।

दान्ते की 'डी मार्नकिया' नामक पुस्तक योरोपीय राजनीति-शास्त्र मे आज भी बडे सम्मान की दृष्टि से देखी जाती है। इस पुस्तक मे उसने अपने राजनीतिक सिद्धान्तो को अभिव्यक्त किया है। इसमे मनुष्य-समाज, साम्राज्यवाद और विश्व-शान्ति के सम्बन्ध मे उसने अपने विचार प्रकट किये है। उसके सिद्धान्तानुसार जनशक्ति ही सम्राट् के प्रभुत्व का प्रधान कारण होती है।

अरस्तू और दान्ते की नीति मे पर्याप्त साम्य दिखाई पडता है। अरस्तू के अनुसार मनुष्य एक सामाजिक जीव है, इसलिए ससार मे शान्तिपूर्वक जीने के लिए और उसकी प्राकृतिक शक्तियो के विकास के लिए उसे एक सामाजिक व्यवस्था और सभ्यता आवश्यक है। किन्तु सम्पन्न और अभावग्रस्त लोगो के पारस्परिक विरोध के कारण राज्यो मे निरन्तर युद्ध चलता रहता है। इसलिए एक राजतन्त्र की—एक केन्द्रीय विश्व-शासन-व्यवस्था की—आवश्यकता होती है, जो शान्ति और न्याय स्थापित कर सके। सक्षेप मे यही दान्ते का अपना मत था। उसने एक ऐसे अधिकारी शासन

की कल्पना की जो नि स्वार्थ, दृढ और अजेय हो और वह अत्याचारो को दूर कर प्रत्येक मनुष्य को शान्ति, स्वतन्त्रता और न्याय पूर्वक जीने का अवसर दे।

दान्ते ने रोमन साम्राज्य को इस कार्य के लिए उपयुक्त समझा, क्योकि उसने उस समय तक प्राय ऐसी व्यवस्था स्थापित कर ली थी। वह सम्पूर्ण विश्व पर शासन करे। उसका वह शासन शक्ति या जातीय श्रेष्ठतागत शासन न होकर न्याय का शासन होता। दान्ते विश्व-राज्यतत्र को रोम के अधीन होना उपयुक्त समझता था।

साम्राज्य का अधिकार शक्ति के द्वारा नही, अपितु कानून के द्वारा स्थापित होता है और कानून जनता की भलाई के लिए बनाये जाते है, जनता कानून के लिए नही होती। अत सरकार जनता की सेवक है, वह उसकी स्वामिनी नही हो सकती। तथापि दान्ते का मत था कि राजा को अधिकार-सम्पन्न होना चाहिए, क्योकि अधिकार के बिना कानून का प्रयोग करना असम्भव है।

दान्ते का मत है—मानव की अन्त शक्तियो का जागरण अथवा विकास ही उन्नति का मूल है। किस जाति-विशेष अथवा राष्ट्र मे विकास का क्रम क्या होगा, यह कहना कठिन है। जो राष्ट्र आज बर्बर है वही कल उन्नतिशील बनेगे। ससार की सामाजिक और राजनीतिक स्थिति का सघटन उस पद्धति-विशेष से होना चाहिए, जिससे प्रभावान्वित हो प्रत्येक नर-नारी का बौद्धिक विकास स्वाभाविक ढग से हो सके। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए 'विश्व-शान्ति' की आवश्यकता है। ससार के किसी प्रदेश मे युद्ध आरम्भ होते ही यह समझ लेना चाहिए कि मानवी उन्नति अभी अपूर्ण है।

विश्व-शान्ति के लिए दान्ते ने एक ऐसी सत्ताधारी सार्वभौम शक्ति की कल्पना की है जिसके परिणाम-स्वरूप युद्ध का अन्त हो जाय और स्वार्थो का सघर्ष न होने पावे।

दान्ते की सबसे महत्त्वपूर्ण रचना 'डिवाइन कामेडी' है, जिसके कारण छ शताब्दियो के बाद भी आज समस्त ससार के साहित्य-प्रेमियो द्वारा वह असीम आदर और सम्मान से स्मरण किया जाता है और महाकवि माना जाता है।

'डिवाइन कामेडी' का नायक स्वय कवि है। दान्ते की कविता सकेतात्मक एव प्रतीकमयी है। यह महाकाव्य इनफर्नो (नरक), पर्गेटेरियो (कर्म-

भूमि) और पैराडाइजो (स्वर्ग) नामक तीन खण्डो मे विभाजित है। विद्वानो के मतानुसार दान्ते ने प्रथम और तृतीय खण्ड की रचना के पश्चात् द्वितीय खण्ड लिखा था। कुछ पाश्चात्य समालोचक इस महाकाव्य के तीन खण्डो मे पर्गेटेरियो को सर्वोत्कृष्ट मानते है। इसमे तनिक भी सन्देह नही है कि दान्ते की यह रचना विश्व के महान् ग्रन्थो मे है और विश्व-साहित्य मे अमर रहेगी।

सक्षेप मे कामेडिया का कथासार इस प्रकार है—सर्वप्रथम कवि एक विकट वन मे पथ भूलकर भटकता है। उस पथविहीन वन में कवि को अरुणाभायुक्त एक उत्तुङ्ग पर्वत-शिखर दिखाई पडता है। यही स्वर्ग है। कवि उस पर पहुँचने का प्रयत्न करता है, किन्तु उसके निकट पहुँचते ही काम, क्रोध, लोभ और अभिमान के मूर्तिमान् पशु उस पर आक्रमण करते है। कवि मूर्च्छित होकर गिर पडता है। इस मर्मान्तिक वेदना की व्याकुल कर देनेवाली दशा मे उसे प्रेतात्मा दर्शन देती है। वह कवि को उपदेश देती है और उसे दिव्य दृष्टि प्रदान करती है। कवि फिर मुक्ति-मार्ग की खोज करता है। मुक्ति-मार्ग के परिशोध मे सर्वप्रथम उसे नरक लोक मिलता है। फिर कर्मभूमि आती है। इसी कर्मभूमि के अन्तिम द्वार पर उसे वियाट्रिस के दर्शन होते है। वियाट्रिस के परिशुद्ध प्रेम एव अलौकिक सौन्दर्य की स्निग्ध शीतल छाया मे वह स्वर्गलोक मे प्रवेश करता है। कवि का मार्ग-निर्देश करती हुई वियाट्रिस उसे सूर्यलोक की ओर सकेत कर अनन्त का रहस्य समझाती है।

यह सत्य है कि दान्ते ने उस अमर महाकाव्य की रचना मे अपने युग की समस्त ज्ञान-विज्ञान की बाते सम्मिलित कर अन्तर्निहित कर ली है। जब वह प्रेतात्माओ का वर्णन करता है तो सभी पापियो, पुण्यात्माओ तथा वरदानप्राप्त लोगो का समस्त इतिहास ऐसी सकेत एव सूत्र शैली मे अभिव्यजित करता है, जो अत्यन्त आश्चर्योत्पादक है। इन्ही वैयक्तिक कथाओ के कारण इस महाकाव्य मे असाधारण मानवीय आकर्षण उत्पन्न हो गया है। विशेषत नरक मे जहाँ कि पुण्यात्माओ की जीवन-कहानियो से पापियों की कथा कही अधिक नाटकीय है। दान्ते ने पापियो को कठोर दण्ड की व्यवस्था का वर्णन किया है। इनफर्नो (नरक) के पचम सर्ग मे भावुकता अपनी चरम सीमा तक पहुँच गयी है। पोलो और फ्रैनसेस्का की कहानी वर्णनात्मक कविता मे अद्वितीय आकर्षण की है। आश्चर्य की बात तो यह है कि यही कवित्व-शक्ति सम्पूर्ण काव्य मे दृष्टिगत होती है, जिस

समस्त मानव एव ईश्वर के साथ उसके सम्बन्ध का रूपक नियोजित किया गया है। इस स्वप्न-यात्रा का अन्त उस समय होता है जब कि देवता के दर्शन होते है और व्यक्ति की आत्मा का उस प्रेम से सम्मिलन होता है, जो सूर्य, चन्द्र तथा तारकमण्डल के चतुर्दिक् विस्तीर्ण है।

कवि दान्ते ने उक्त लोक का दर्शन पाठको को कराने का प्रयत्न किया है। असत् पक्ष से सत् पक्ष की ओर मार्ग-निर्देश किया है। प्रत्येक पक्ति मे कवि ने शब्दो को गम्भीर अर्थ मे गुम्फित कर दिया है। अनेक आलोचको ने इस विषय मे बहुत तर्क-वितर्क किया है कि वियाट्रिस, जो स्वर्ग मे उसका पथ प्रदर्शन करती है, वस्तुत स्त्री है अथवा प्रतीक है, जिसके मुख पर आवरण डालकर कवि ने अपनी उद्देश्य-पूर्ति की है।

दान्ते ने कामेडिया मे यह प्रमाणित करने का प्रयत्न किया है कि मानव अपने पौरुष और पराक्रम द्वारा नरक से कर्मभूमि मे प्रवेश कर सकता है, जहाँ से विशुद्ध विमल स्वार्थ-रहित प्रेम की शीतल और सुखदायिनी छाया उसे स्वर्ग तक पहुँचा सकती है।

दान्ते का अभिमत है कि पाप से मुक्ति पश्चात्ताप द्वारा होती है। आत्मा की परिशुद्धि के लिए पश्चात्ताप परमावश्यक है। इस प्रायश्चित्त द्वारा पतित पुरुष अपनी बुद्धि और इच्छा शक्ति को निर्बन्ध करता है। इसी के द्वारा वह पुण्य-सग्रह तथा स्वर्ग-प्राप्ति की चेतना जागरित करता है। पाप के पर्वत को दान्ते ने सात खण्ड का माना है, जो क्रमश एक-एक कर विध्वस्त होते है। कामेडिया के अन्तिम खण्ड 'पैराडाइजो' मे नित्यता (इटर्निटी) और कर्म-साफल्य के सिद्धान्त का प्रतिपादन हुआ है। जहाँ गति नही, जो अविनाशी एव नित्य है वही परमात्मा है। इसी अनन्त का रहस्योद्घाटन करने के लिए कवि को वियाट्रिस के दर्शन हुए। दान्ते का मार्ग-निर्देश करती वियाट्रिस उसे सौर मण्डल मे ले जाती है और इगित करती है कि वह ग्रह नक्षत्र परिक्रमा कर रहे है, भूत, वर्त्तमान और भविष्य का इसी स्थल पर विकास हुआ है। जहाँ हम है यहाँ काल की कोई अवधि नही, केवल नित्य, विशुद्धस्वभाव काल का ही यहाँ निवास है। काल से जो परे है, वही अनन्त है। मानव की इच्छा-आकाक्षा एव मनोभाव जब परमेश्वर के अधीन हो जायँगे उसी क्षण जीवन के वाछित फल की प्राप्ति होगी।

दान्ते अपने निर्वासन-काल मे इधर-उधर भटकने के बाद १३१७ ई० के लगभग रावेन्ना नामक नगर मे आया। यहाँ उसे अपने रहने के लिए

एक घर मिला। अपने निर्वासन-काल मे सबसे अधिक सुखी और स्वतन्त्र जीवन उसने यही व्यतीत किया था। उसकी सन्ताने भी उसके साथ ही यहाँ थी। रावेन्ना मे ही दान्ते ने पर्गेटोरियो का अन्तिम भाग और सम्पूर्ण पैराडाइजो की रचना की थी।

मध्य-युग के सम्पूर्ण चित्र दान्ते के वर्णन मे दिखाई पडते है। वेनिस के युद्ध के कारखाने के जहाज बनानेवाले, भोजन पकाने मे व्यस्त रसोइये और बर्तन माँजनेवाले, पहाडियो पर विश्राम करनेवाले श्रमिक, घाटियो मे चमकनेवाले जुगनू, चिरकालीन तुषार से निर्विण्ण गडेरिये, स्वप्न-लोक मे विचरण करनेवाली कृषक-कुमारियाँ जो अनाज बटोरने मे व्यस्त है, अपने घोडे की नाल लगाने के लिए व्यग्र साईस, त्योहार के अवसरो पर रोम के यातायात का नियन्त्रण, चूल्हे मे जलनेवाले हरी लकडी के कुन्दे, रात मे आग लगने से बच्चो को लिये भागनेवाली नगी माताएँ, मार्ग मे दिखाई पडनेवाले भिक्षुक, मध्ययुगीन अस्पतालो से आती हुई दुर्गन्ध, मछली पकड़ने, शिकार खेलने, नहाने, जुआ खेलने, प्रतियोगिता मे सम्मिलित होने की प्रवृत्तियाँ युद्धो से उपत्न्न होनेवाली भिन्न-भिन्न स्थितियाँ-- ये सब दान्ते की रचनाओ मे पूर्णत और स्पष्टत. अकित है।

इटली के रावेन्ना नगर मे ही दान्ते का देहान्त हुआ था।

---

# चौदहवीं शताब्दी के चार महान् साहित्यकार

चौदहवी शताब्दी के मध्यकाल तक आते-आते सम्पूर्ण साहित्य के क्षेत्र मे एक परिवर्तन आरम्भ हो गया था। आगामी एक शताब्दी मे इस परिवर्तन को पूरा हो जाना था।

१३५० ई० मे चोसर की अवस्था दस या बीस वर्ष की रही होगी। उसके जन्म के विषय मे विद्वानो मे मतभेद है। बोकेचियो की अवस्था सैंतीस वर्ष की थी और उसने अपनी रचना 'डेकामेरोन' का लिखना आरम्भ कर दिया था, जो १३५३ ई० मे प्रकाशित हुई। पेटरार्क की

अवस्था छियालिस और फ्रायसर्ट की बारह थी। योरोप के नवीन साहित्यिक युग के सर्वप्रथम निर्माता ये ही उक्त चार साहित्य-स्रष्टा थे। इनके अतिरिक्त 'विजन आफ पियर्स प्लावमैन' के लेखक लाग्लैड की अवस्था उस समय अठारह वर्ष की थी। विल्कीफ उस समय बाइबिल का अनुवाद करने की योजना बना रहा था।

यहाँ हम समझ ले कि चोसर आगे चलकर काव्य का जनक कहा गया। इटली मे बोकेचियो को गद्य का जनक माना गया। फ्रास मे फ्रायसर्ट को फ्रेच गद्य का पिता सम्बोधित किया गया। जर्मनी के तीन पादरियो के उपदेशो मे साहित्यिकता प्रचुर मात्रा मे होती थी। उनके उपदेशो को उत्तरी प्रदेशो के गद्य का आरम्भ समझा जा सकता है।

यह विचारणीय विषय है कि वर्जिल की मृत्यु से दान्ते के जन्म तक लेखक को अपेक्षाकृत कम राष्ट्रीय या सामाजिक गौरव या वैशिष्टच प्राप्त था। त्रूबादुरो और मिने-सिगरो को इस सम्बन्ध मे अपवाद-स्वरूप समझा जा सकता है। इन दोनो के सम्बन्ध मे भी लेखको की अपेक्षा उनकी साहित्यिक रचना अधिक महत्त्व की वस्तु समझी जाती थी। यह एक ऐसा साहित्य-सम्बन्धी प्रश्न है जो सामाजिक परिस्थितियो और युग के अनुसार परिवर्तित होता रहता है।

एक नियम से यह समझा जा सकता है कि महान् साहित्यिक व्यक्तित्व होने पर साहित्य मे शिथिलता आ जाती है और जब साहित्य उच्च स्तर का होगा तब महान् साहित्यिक व्यक्तित्व नही रहेगा। 'बरे त्रा दे बोर्न' नाम का त्रूबादूर महान् था, इसलिए नही कि वह 'सेरबेत' का रचयिता था, अपितु इसलिए कि राजनीतिक और सैनिक दृष्टि से उसका महत्त्व अधिक था। उसने प्राय. उस समय के सभी राजाओ से युद्ध किया था। दूसरे त्रूबादूर लोग एक बडे साहित्यिक आन्दोलन के अग मात्र है। इस सम्बन्ध मे यह भी कहा जा सकता है कि जर्मनी का ग्राम्यगीत-सम्बन्धी साहित्य बहुत प्रसिद्ध था; किन्तु उन साहित्यकारो के नाम किसी को स्मरण नही है। इँग्लैण्ड मे भी 'विजन आफ पियर्स प्लावमैन' बहुत प्रसिद्ध रचना है, लेकिन उसके लेखक के सम्बन्ध मे निश्चित रूप से कुछ ज्ञात नही है। कुछ लोग विल्यम लाग्लैण्ड को इसका रचयिता कहते है, जो प्राय. चोसर का सम-सामयिक था।



# पेटरार्क

(१३०४–१३७४ ई०)

चौदहवी शताब्दी मे समस्त योरोप मे एक परिवर्तन आरम्भ हुआ और एक नवीन प्रकाश का दर्शन हुआ। इस आलोक से सर्वप्रथम इटली ही प्रकाशित हुआ। पेटरार्क ही पहला साहित्यकार है जिसने ग्रीक तथा लैटिन साहित्य का पुनरुत्थान किया। इसने प्रधानत लैटिन भाषा मे ही काव्य-रचना की है। पेटरार्क ने इटालियन भाषा मे जो 'गीत' लिखे है, वे इतने श्रेष्ठ और सुन्दर बन पडे है कि उनके चार सौ से अधिक सस्करण अब तक प्रकाशित हो चुके है। पेटरार्क दान्ते की अगली पीढी मे हुआ; किन्तु उसकी प्रसिद्धि एव यश उसके जीवन-काल मे ही तथा दो सौ वर्ष के अनन्तर भी दान्ते से कही अधिक व्यापक रहा।

पेटरार्क का पिता, दान्ते के साथ ही, फ्लोरेस नगर से निर्वासित हुआ था। युवावस्था मे पेटरार्क ने कानून की शिक्षा ग्रहण की थी, किन्तु साहित्य की ओर उसकी रुचि थी। उसने वर्जिल और सिरो की रचनाओ का अध्ययन किया। १३२७ ई० मे सेण्ट क्लेयर के गिरजाघर मे लूरा नाम की एक अत्यन्त सुन्दरी युवती पर पेटरार्क की दृष्टि पडी। तब से वह उसी की प्रेम-आराधना मे अपनी कविता लिखने लगा। लूरा से उसका प्रेम-सम्बन्ध दान्ते की वियाट्रिस की ही भाँति था। पेटरार्क ने फ्रास और जर्मनी का भ्रमण किया। उसकी ख्याति १३४१ ई० मे उच्च शिखर पर पहुँच गई थी और उसी वर्ष वह रोम का राज्य-कवि घोषित किया गया। १३४८ ई० मे वह इटली मे ही था जब लूरा के निधन का समाचार उसे

मिला। उसे यह समाचार ठीक उसी दिन मिला, जिस दिन वह प्रथम मिलन दिवस का वार्षिकोत्सव मना रहा था।

१३५० ई० मे वह रोम नगर मे दिखाई पडा था। इसके बाद एक नगर से दूसरे नगर मे वह भटकता रहा। अन्त में अरुआ नगर को (१३७० ई०) उसने अपना निवासस्थान निश्चित किया। इसी नगर में उसके जीवन का अन्तिम समय व्यतीत हुआ। पेटरार्क की लिखी गीतात्मक कविताओ मे ही उसकी ख्याति विश्राम कर रही है। उन कविताओ की विशेषता यह है कि कला की दृष्टि से कही अधिक वे पाठको के हृदय मे प्रकाश और भावनाओ के रूप मे अपना प्रभाव उत्पन्न करती है। अग्रेजी साहित्य मे उसके प्रसिद्ध गीतो के नाम ही 'पेटरार्कन' रख दिये गये है। वह केवल कवि ही नही था। वह सस्कृति का प्रचारक, मानवता का गायक तथा ग्रीक और लैटिन सभ्यता का प्रसारक भी था।



## बोकेचियो
(१३१३-१३७५ ई०)

बोकेचियो केवल इटालियन गद्य का जनक ही नही था। वह पहला व्यक्ति था, जिसे उसकी रचनाओ के लिए महान् कहा गया। इस प्रकार उसे प्रथम साहित्यिक महापुरुष कहा जा सकता है। दान्ते, चोसर और फ्रायसर्ट, सब के सब सक्रिय व्यक्ति थे। दान्ते एक प्रमुख राजनीतिज्ञ था, चोसर एक प्रमुख अधिकारी तथा नौकरशाह और फ्रायसर्ट भी एक प्रमुख राजनीतिज्ञ था। अपने प्रारम्भिक काल मे तीनो लडनेवाले सैनिक थे। चोसर युद्ध मे बन्दी बना लिया गया था और कहा जाता है कि अपने

बन्दी-जीवन के अवकाश के क्षणो मे उसने अपनी सर्वप्रथम रचना के रूप में 'रोमाउट आफ् दी रोज' का फ्रेंच से अनुवाद किया था।

बोकेचियो ने लिखने के अतिरिक्त कुछ नही किया। वह एक धनी व्यक्ति का अवैध पुत्र था, जिसे उसके पिता ने मान्यता दी और धन से उसकी बडी सहायता की। इस प्रकार बोकेचियो लिखने के बाद के अवकाश के समय को यो ही व्यतीत करता था, या यह कहना चाहिए कि उसने अपना समय अधिकतर मेरिया के प्रेम मे ही बिताया। वर्षो तक प्रेम के सुनहले स्वप्नो ने बोकेचियो के जीवन को रगीन बना दिया था, लेकिन यह स्थिति स्थिर न रह सकी। उसकी प्रेमिका ने एक अन्य पुरुष को अपने हृदय मे स्थान दिया। बोकेचियो के हृदय पर इसका गहरा आघात पहुँचा। दस वर्ष के उपरान्त, योरोप मे जो भीषण प्लेग फैला, उसी में उसकी प्रेमिका का देहावसान हो गया। बोकेचियो ने अपनी प्रेयसी की सेवा अन्तिम समय मे बडी तत्परता से की और उसकी मृत्यु के पश्चात् भी उसकी कब्र के समीप बैठा हुआ वह अश्रुपात करता था।

प्रेमिका के अवसान के बाद ही बोकेचियो के पिता को भारी आर्थिक क्षति उठानी पडी। परिणाम-स्वरूप बोकेचियो के सम्मुख निर्धनता की समस्या आ खडी हुई। निर्धनता के आते ही मित्रो ने भी उसका साथ छोडा और बोकेचियो के सामने यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि किस प्रकार वह अपनी प्रतिभा का उपयोग करे। अनेक चिन्ताओ से शोक-सतप्त हो बोकेचियो ने महाकवि वर्जिल के समाधिस्थल की यात्रा की और वहाँ पर उसने साहित्य-साधना की दृढ प्रतिज्ञा की।

सच्चा प्रेमी जब अपनी प्रेम-साधना मे प्रियपात्र द्वारा उपेक्षित होता है तो वह अपने प्रेम की अभिव्यक्ति एव अभिव्यजना का एक न एक साधन अवश्य ही आविष्कृत कर लेता है। साहित्यकार बोकेचियो ने साहित्य को इसका माध्यम बनाया। यह स्वाभाविक ही था। अपनी प्रेमिका मेरिया-डी-एक्वीनो के प्रेम मे उसने अपनी प्रथम कृति 'फिलोस्टेटो' नामकी कविता लिखी। 'फिलोकोलो' नामक क्लिष्ट एव लम्बी गद्य-रचना भी उसने उसी उद्देश्य से प्रणीत की। 'टी साइड' शीर्षक वर्णनात्मक कविता मे बोकेचियो ने पालमन-आस्काइट की मैत्री तथा एक ही प्रेमिका के प्रति आकर्षण का मार्मिक चित्रण किया है।

बोकेचियो ने स्वय अपनी कहानी, रूपक मे, 'एमटो' नाम की गद्य-रचना मे प्रस्तुत की है। महाकवि दान्ते के छन्द मे उसने जिस लम्बी कविता का

प्रणयन किया है, उसका नाम 'एमोरोसा विजन' है। इसका भी प्रतिपाद्य मेरिया का प्रेम ही है। 'फायमेटा' बोकेचियो की ख्यातिलब्ध रचना है। इसमे उस पत्नी के भावो का सजीव चित्रण है, जिसके पति ने उसे तिरस्कृत कर त्याग दिया है। विद्वानो का कथन है कि योरोप मे लिखा गया यह सर्वप्रथम मनोवैज्ञानिक उपन्यास है।

अपनी प्रेमिका की मृत्यु के कुछ समय बाद बोकेचियो फ्लोरेस नगर लौटा और वही उसने विश्वविख्यात कृति 'डेकामेरन' लिखना आरम्भ किया। १३४८ ई० मे भयकर प्लेग ने प्रलयकारी स्वरूप धारण कर लिया था और सर्वत्र उसका आतक छाया हुआ था। योरोप की तीन चौथाई जनसख्या वर्षभर मे ही काल-कवलित हो गई थी। इसी वर्ष लेखक ने इस महान् रचना को लिखना आरम्भ किया था और पाँच वर्षो मे, १३५३ ई० मे, लिखकर समाप्त किया था।

'डेकामेरन' मे दस कहानी कहनेवाले शरणार्थी है, जिनमे सात महिलाएँ और तीन पुरुष है। इनकी कहानियाँ दस दिनो मे पूर्ण होती है। इन कहानियो मे सकटग्रस्त लोगो को नये ढग से जीवन आरम्भ करने की प्रेरणा प्राप्त हुई है। मनुष्य अपनी विभिन्न परिस्थितियो मे रहकर सुख-सन्तोष की साँस ले और अपनी कष्ट तथा अभाव की स्थिति मे भी जीवन के प्रति मोह न छोडे, ऐसी प्रेरणा प्रदान करनेवाले मार्मिक चित्रण 'डेकामेरन' मे भरे पडे है। यह एक ऐसी प्रौढ और उत्कृष्टतम रचना है, जिसके पठन-पाठन मे मानव सदा-सर्वदा आनन्द का अनुभव करता आया है और भविष्य मे भी करता रहेगा। इस कृति ने बाद मे प्रभूत कथा-साहित्य को जन्म दिया है। सक्षेप मे 'डेकामेरन' मे मनोरजक कहानियाँ है, प्रेम की चर्चा है, विनोद व्यग्य है और इसमे यत्र-तत्र सर्वत्र सुखान्त घटनाओ के कथानक बिखरे हुए है। एक शब्द मे यह सर्वजनप्रिय रचना कही जा सकती है। इसमे चौदहवी शताब्दी के सजीव इटालियन चित्र भरे पडे है।

गियोवानी बोकेचियो के जीवन का अन्तिम समय दुःख और दारिद्र्य मे व्यतीत हुआ। पेटरार्क का प्रभाव उसपर विशेष रूप से पडा था। वह उसे अपना साहित्यिक गुरु मानता था। पेटरार्क के निर्धन हो जाने पर बोकेचियो ने कहा—अब तो निर्धनता-दीनता के दिनो मे जीने का सहारा भी चला गया। अब जीकर क्या होगा ?

पेटरार्क के निधन के एक वर्ष बाद बोकेचियो जब बीमार पडा तब फिर वह शय्या से न उठ सका और, ६२ वर्ष की अवस्था में, उसके जीवन का अन्त हो गया।

# फ्रायसर्ट

(१३३७–१४०० ई०)

साहित्यिक परिस्थितियो के उस अन्त.काल मे पेशेवर साहित्यिक बहुत कुछ अपने आश्रयदाताओ पर निर्भर करते थे। उनकी रचनाओ से आश्रय-दाताओ का मनोरजन हो जाता था। उस समय के लिए यह स्वाभाविक था कि राजा, राजकुमार और उनके बडे अधिकारी लोग कविता सुनने मे अपना समय व्यतीत करते थे। यह इसलिए कि उस समय समाचारपत्र नही थे, वार्ता-वहन के दूसरे साधनो का अभाव था। जाडे के लम्बे महीनो मे न युद्ध ही होता था और न खेल-कूद, तब ऐसी कला-कृतियो का मान होना स्वाभाविक ही था।

फ्रास के फ्रायसर्ट को भी राजदरबारो से सम्मान और सम्पत्ति अत्य-धिक मिली। उसने फ्रास से स्काटलैण्ड, वहाँ से इँग्लैण्ड, फिर बरगण्डी और उसके बाद आलामेन की यात्रा की। सब जगह राजाओ और राज-कुमारो ने उसका स्वागत-सम्मान किया और मान-प्रतिष्ठा दी। फ्रायसट की समसामयिक साहित्यकार 'क्रिस्त्रीन दे पिसा' को न उतनी सम्पत्ति मिल सकी न सम्मान। इसका सबसे बडा कारण यह था कि वह स्त्री होने के कारण राजदरबारो मे राजदूत के कामो मे नही जा सकती थी। फलत. उसे अपनी लेखनी का ही सहारा था।

उन दिनो फ्रास मे वैसे तो प्रत्येक युवक यौवन के मद मे भरा हुआ अपनी कविता लिखता था और उसके उत्तर मे कोई युवती अपना गीत लिख भेजती थी। उन दिनो कवि-सम्मेलनो के अच्छे आयोजन हुआ करते थे, जिनमे कवियो का आदर होता था और उन्हे पुरस्कार एव मार्ग-व्यय भी दिया जाता था। इस तरह के छ सौ कवि-कवयित्रियो के नाम बरगण्डी के इतिहास मे पाये जाते है, जिनकी कविताओ की आज एक पक्ति भी मिलना कठिन है।

# चोसर

(१३४० ?–१४०० ई०)

साहित्य के इस सक्रमण-काल की एक विशेषता यह भी है कि इसमे कल्पनात्मक कविताएँ पीछे छूटी दिखाई पडती है और कथा कहने की प्रवृत्ति स्पष्ट दिखाई पडती है। इसका कारण गद्य का आविर्भाव, दुख और कठिनाइयो के कारण जन-कलाओ का अन्तर्भाव ही है।

१३३० ? या १३४० ? ई० मे चोसर के जन्म या १३३२ ई० मे लाग्लैण्ड के जन्म से टचूडरो के राजगद्दी पर जम जाने तक, इस काल के इँग्लैण्ड मे दरबारी, शास्त्रीय या जनसम्बन्धी साहित्य का कोई भी चिह्न नही दिखाई पडता।

जिस समय 'विजन आफ पियर्स प्लावमैन' का रचयिता लाग्लैण्ड और चोसर अपनी रचना कर रहे थे, उस समय इँग्लैड मे विदेशियो से युद्ध बन्द हो गया था, लेकिन देश मे विद्रोह का जोर बहुत था। वाट टाइलर और जान बोल के नेतृत्व मे किसानो ने विद्रोह कर दिया। उन लोगो ने (१३८१ ई०) लन्दन पर अधिकार कर लिया। चोसर ने अपनी 'कैन्टर-बरी टेल्स' की रचना १३८६ ई० के बीच की होगी। गावर की रचना 'कोफेसियो अमाटिस' १३९० ई० के आसपास लिखी गई।

यह भी एक ध्यान रखने की बात है कि १३८८ ई० मे ओटरबर्न या चेवीचेस का युद्ध हुआ था, जब कि डुग्लेस के अधीन स्कोटो ने लार्ड हेनरी पर्सी को हराया था और सम्भवत उसी समय सर्वप्रसिद्ध वीरगीतो की प्रथम रचना हुई।

रिचार्ड द्वितीय की हत्या करानेवाले हेनरी चतुर्थ ने १३९९ ई० मे सत्ता प्राप्त की और उसके अगले वर्ष चोसर और लाग्लैड, दोनो की मृत्यु हुई।

चोसर को साहित्यकार के रूप मे कविता के क्षेत्र मे ही स्वीकार करना चाहिए। वह उन दिनो के आरम्भ मे था जब कि पद्य को गद्य चुनौती देने लगा था। चोसर एक सच्चा कवि था। उसके चित्रित पात्र सब

के सब वास्तविक जीवन से अधिक सत्य जान पडते है। दूसरी ओर बोकेचियो केवल 'फायमेटा' और उसकी मित्र-मडली को सजीव रूप मे चित्रित करता है, किन्तु उसकी कहानियो के दूसरे चरित्र एक प्रकार से अस्तित्व-हीन है। सम्भवत इसका कारण केवल माध्यम हो। जब कभी बोकेचियो पद्य मे लिखता था तो वह अपने को एक बडा कलाकार प्रमाणित करता था। यदि चोसर ने अपनी कहानियाँ 'केन्टरबरी टेल्स' गद्य मे लिखी होती तो सम्भवत वे निम्न कोटि की उतरती।

वास्तव मे पद्य के बन्धन मे रहकर लिखनेवाले व्यक्ति को कदाचित् यह अनुमान होता है कि यदि वह गद्य को अपना ले तो वह खेत मे छोडे गये हिरन की भाँति सरपट दौड सकता है। लेकिन बात इसके विपरीत है। गद्य मे छन्द, मात्रा आदि साधन नही होते, जिनसे साधारणतया लोगो को श्रुतिसुखोपलब्धि होती है। बात यह है कि बोकेचियो ने तत्कालीन माँग की पूर्ति के लिए अपनी रचना 'डेकामेरन' गद्य मे लिखी। चोसर को ऐसी माँग की पूर्ति नही करनी थी।

चोसर की भेट फ्रास मे फ्रायसर्ट और इटली मे पेटरार्क और बोकेचियो से हुई। इसमे सन्देह नही कि इन चारो महारथियो को, एक दूसरे को समझने का पर्याप्त अवसर मिला होगा।

चोसर का पिता राज्य-कर्मचारी था। यही कारण था कि चोसर को बचपन से ही राजदरबार मे स्थान मिला। १३५९ ई० मे वह एक सैनिक के रूप मे फ्रास मे था, किन्तु वहाँ युद्ध मे वह बन्दी बनाया गया। एक वर्ष बाद उसे वहाँ से मुक्ति मिली। अनेक वर्षो तक चोसर फ्रास और इटली मे राजकीय कार्य से रहा। उसके जीवन मे सफलता का एक कारण यह भी था कि उसकी पत्नी की बहिन का विवाह जान आफ गाउण्ट से हुआ था। चोसर के जीवन मे ही उसे विशेष सम्मान मिला था। उसके जीवन मे अनेक ज्वार-भाटे आये।

चोसर को यह विदित था कि कैसी कहानियाँ पसन्द की जाती है और उनको कैसे कहना चाहिए। इसलिए जब उसके विश्राम के दिन आये तब उसने बैठकर अपनी केण्टरबरी की कहानियाँ लिखना आरम्भ किया। शेक्सपीयर से यदि चोसर की तुलना की जाय तो दोनों की भाषाओ मे अन्तर दिखाई पडेगा। शेक्सपीयर की भाषा अधिक पुष्ट और ढली हुई है। एक बात यह भी है कि शेक्सपीयर को पढकर हम इँगलैण्ड के एलि-

जाबेथ युग को देखेंगे, उसके सम्बन्ध मे कुछ जानेगे, लेकिन चोसर मे जिन मानवीय गुणो का आलेखन है वे सर्वकालीन हे, किसी युग विशेष के नही। चोसर को पढे बिना आग्ल सेक्सन कला की परम्परा ठीक-ठीक जानना असम्भव है। वह अग्रेजी कविता का प्रथम कवि है, जिससे आधुनिक अग्रेजी कविता का इतिहास आरम्भ होता है।

---

# विलन

(१४३१–१४८९ ई०)

फ्रास मे मध्यकालीन साहित्य का विकास चौदहवी शताब्दी मे उतना नही था, जितना पन्द्रहवी शताब्दी मे हुआ। जिस वर्ष फ्रास की विदुषी जोन-डी-आर्क ने धर्म के नाम पर अपना प्राण उत्सर्ग किया था, उसी वर्ष पेरिस मे फ्राकोइस विलन का जन्म हुआ था। विलन महान् कवि माना जाता है। उसका जीवन विलासिता, हत्या और चोरी मे इतना उलझा था कि उसकी जीवन-गाथा सुनकर आश्चर्यचकित हो जाना पडता है।

विलन जब पाँच वर्ष का था, उसी समय उसके पिता का देहान्त हो गया था। उसकी माँ दरिद्रावस्था मे असहाय होकर भटक रही थी। वह अपनी सन्तान को भूखो मरने नही देना चाहती थी। उसे अपने एक सम्बन्धी पादरी का ध्यान आया। विलन की माता अपने पुत्र को साथ लेकर पादरी के आश्रय मे गई। वह विश्वविद्यालय का अधिकारी और प्रोफेसर था। बालक को देखकर करुणा और स्नेह के भाव उसके हृदय मे उमड पडे। पादरी सन्ध्या समय विलन को कहानियाँ सुनाता और इन्ही कहानियो द्वारा उसने धीरे-धीरे लैटिन और फ्रेच कवियो की रचनाओ से उसे परिचित कराया।

चौदहवी शताब्दी के मध्य मे फ्रास बडी भयानक अवस्था मे था। राजा और सामन्तो द्वारा प्रजा लूटी जा रही थी। धर्म के नाम पर

पादरियो का ही आधिपत्य था। राजा और सामन्त उनके हाथो की कठ-पुतलियो की भाँति चलते थे। समूचे देश मे प्लेग और अकाल से हाहा-कार मचा था। इसके अतिरिक्त भूखे भेडियो के आक्रमण से नगर त्रस्त रहता था। ऐसे समय मे लोग लूट, हत्या और अत्याचार के अभ्यस्त हो गये थे। इटली का पोप अकर्मण्य था। उसकी छाया मे पादरी लोग कर एकत्र करते थे।

१३ वर्ष की अवस्था मे विलन विश्वविद्यालय मे अध्ययन करने लगा। १९ वर्ष की अवस्था मे उसने बी० ए० पास किया और तीन वर्ष बाद एम० ए० की उपाधि लेकर वह विश्वविद्यालय से बाहर निकला। पादरी की प्रेरणा से विलन एक कुशल कवि बन गया था और उसकी कविताएँ सर्वत्र आदर पाती थी।

विलन ऐसे युग मे उत्पन्न हुआ था जब शिक्षित समाज घोर आर्थिक कष्टो मे जीवन व्यतीत कर रहा था। यहाँ तक कि विलन के आश्रयदाता उस पादरी की आमदनी घट गई थी और विलन कुछ उपार्जित नही कर पाता था। अन्त मे वह चोरी करने के लिये बाध्य हुआ। वह भयानक आवारो का साथी बन गया।

विलन की कविताएँ प्रचलित हो रही थी। इसका एक कारण यह भी था कि वह गानेवाले, जादूगर और कविता पढनेवाले भाटो की मण्डली मे सम्मिलित हो जाता था और उसके व्यक्तित्व का उन लोगो पर प्रभाव पडता था। इस तरह वह चोर, डाकू, हत्यारे और आवारो के समूह से घिरा रहता था। उसका जीवन एक न एक घटना के साथ उलझ पडता था। मारपीट और चोरी मे वह अग्रसर हो जाता था।

परिणाम यह हुआ कि विलन लुक-छिपकर अपना दिन काटने लगा। उसे एक हत्या करने कारण फाँसी की आज्ञा हुई थी। पुलिस उसे खोजती फिरती थी। गिरफ्तार होनेपर उसके कई वर्ष जेल मे भी कटे थे। अन्त मे अपनी कविताओ के प्रभाव के कारण वह जेल से मुक्त हुआ। यहाँ तक कि फ्रास के बादशाह ने स्वय उसकी कविता की प्रतिलिपि उतारी। वह विलन की रचनाओ पर मुग्ध था और उसी की कृपा के कारण विलन मुक्त हुआ। फिर भी वह अपने जीवन को व्यवस्थित और सुखी नही बना सका।

विलन का अन्तिम प्रेम केथराइन नाम की एक स्त्री से हुआ था। उससे उसे घोर निराशा का अनुभव हुआ। वह उसके ऊपर सर्वस्व निछा-

वर कर चुका था, लेकिन वह सदैव उसके प्रति घृणा करती थी। उसके प्रेम के परिणाम मे एक बार विलन के नग्न शरीर पर बेतो का प्रहार हुआ था।

जीवन के कटु अनुभव ही विलन की कविताओ मे मिलते है। उसकी कविताओ मे आत्मा का नग्न चित्रण है। उनमे सत्यता और वास्तविकता का मिश्रण है। विलन अपनी रचनाओ मे निर्भयता से पूछता है कि क्या सच-मुच उन अपराधो का वह दोषी है, जिन्हे उसने किया था?

विलन की कविताओ को पढकर यही भावना मन मे उठती है कि परिस्थितियो के कारण ही सब कुछ हुआ, विलन की आत्मा कभी भी अपराधी नही थी।

जनवरी १४६३ ई० मे सहसा विलन लुप्त हो गया। उसके बाद उसका कोई निश्चित समाचार नही मिला। कुछ लोगो का कहना है कि एक द्वन्द्व मे वह मारा गया। लेकिन फ्रेंच साहित्य के इतिहास मे यह पता नही चलता कि कब और कहाँ उसकी मृत्यु हुई।

विलन 'गीतात्मक' कविताओ का महान् कवि था। उसकी प्रमुख रचनाएँ 'ओल्ड और न्यू टेस्टामेंट' है।

उसके पचास वर्ष बाद रेबले नाम के प्रसिद्ध फ्रासीसी लेखक ने अपने उपन्यास के प्रधान पात्र के रूप मे उसके वीरतापूर्ण साहसिक कृत्यो का वर्णन किया था।

उन्नीसवी शताब्दी मे विक्टर ह्यूगो ने विलन का चरित्र उपस्थित किया था। उसके उपन्यास हृच बैक नोट्रीडेम मे कवि गिगोरे का चित्रण इतना सजीव हुआ है कि पढकर पाठक तन्मय हो जाता है। सचमुच यह विलन के चरित्र का रहस्यमय चित्रण है। पन्द्रहवी शती के उस आवारे कवि ने ससार को अमूल्य रचनाएँ भेट की है, जिससे वह विश्व-साहित्य मे अमर रहेगा।

---



# रेबले

(१४९०–१५५३ ई०)

पन्द्रहवी शताब्दी के अन्त मे (१४९४ ई०) ससार के प्रथम छपाई के प्रेस पर हास्यरस की एक पुस्तक छपी थी, जिसका नाम था 'दी शिप आफ फूल्स' (मूर्खो से भरा एक जहाज)। यह पुस्तक जर्मनी के बेसले नगर मे प्रकाशित हुई थी। इसका लेखक सेवास्टियन ब्रान्ट था, जो कानून की डिग्री प्राप्त कर लेने पर भी छपाई के नवीन आविष्कार की ओर इतना आर्कषित था कि उसने उसको ही अपना व्यवसाय बना लिया था। लेखक ने कल्पना की कि एक जहाज पर भिन्न-भिन्न प्रकार के एक सौ चौदह मूर्ख यात्रा आरम्भ करते है। लेखक उन मूर्खो की कहानी मे इतना उलझ गया था कि जब तक उनका विवरण समाप्त नही हुआ तब तक वह जहाज की बात ही भूल गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि लेखक ने जहाज की यात्रा का माध्यम बनाकर उन मूर्खो की कहानियो की रचना की थी। इस पुस्तक का अत्यधिक प्रचार हुआ।

इसी पुस्तक की प्रेरणा से दो अन्य पुस्तको की रचना हुई है एक इरास्मूस की 'प्रेज आफ फोलीज' और दूसरी 'गारगन्तुआ और पेण्टाग्रूयल'। इन दोनो पुस्तको मे उस समय के पोप और गिरजो के आधिपत्य और आतक पर व्यगपूर्ण कटाक्ष किये गये है।

गारगन्तुआ और पेण्टाग्रूयल का लेखक फ्राकोइस रेबले था। उसका पिता एक सराय का मालिक था। १५ वर्ष की अवस्था मे रेबले एक

धार्मिक स्कूल मे भर्ती हुआ। उसके पिता की कामना थी कि उसका पुत्र धार्मिक शिक्षा ग्रहण कर भविष्य मे गिरजे का कर्मचारी बने। पाँच वर्ष तक रेबले ने उस स्कूल मे अध्ययन किया। उस समय वह अपने उन सहपाठियो से परिचित हुआ जो आगे चलकर पोप द्वारा महत्त्वपूर्ण पदो पर नियुक्त हुए।

रेबले की रुचि बचपन से ही साहित्य की ओर थी। वह प्राचीन पुस्तको का अध्ययन करता रहा। उसके अध्ययन मे ग्रीक और हेब्रू के ग्रन्थ और अरेबिक और रोमन ला की पुस्तके विशेष महत्त्व रखती थी। लेकिन उस समय पेरिस विश्वविद्यालय द्वारा ऐसी पुस्तको का अध्ययन वर्जित था। अतएव रेबले को अपने एक साथी के साथ कारावास का दण्ड मिला। उसका साथी तो भाग गया, किन्तु रेबले कालकोठरी मे बन्द कर दिया गया। अन्त मे अपने एक सहपाठी द्वारा वह मुक्त हुआ, जो उस समय एक सम्मानित पद पर था। उसी मित्र के कारण रेबले को एक उच्च पद प्राप्त हुआ।

१५३० ई० मे रेबले को चिकित्सा-विज्ञान मे ग्रेजुएट की उपाधि मिली। इसके बाद वह विश्वविद्यालय का लेक्चरर नियुक्त हुआ। उन्ही दिनो उसने हास्य की एक रचना 'दी मैन हू मैरीड ए वाइफ' लिखी थी। दो वर्षो के बाद नौकरी छोडकर वह स्वतन्त्र रूप से लायन्स नगर मे चिकित्सक का कार्य करने लगा। इसी समय उसने चिकित्सा-शास्त्र पर एक अनुवादित पुस्तक प्रस्तुत की। प्रकाशित होने पर इस पुस्तक की बिक्री कुछ नही हुई और प्रकाशक को हानि उठानी पडी। रेबले ने अपने प्रकाशक से प्रतिज्ञा की कि वह एक ऐसी पुस्तक लिखकर उसे देगा, जिसका देश-विदेश मे बहुत अधिक प्रचार होगा। उसने अपने प्रकाशक से जो प्रतिज्ञा की, उससे प्रकट होता है कि लेखक को अपनी प्रतिभा और सफलता पर पूर्ण विश्वास था।

रेबले ने अपने प्रकाशक के लिए पेन्टाग्रूयल की कहानी का प्रथम खण्ड प्रस्तुत किया। प्रकाशित होने पर इसका बहुत अधिक प्रचार हुआ और प्रकाशक को भी विशेष लाभ हुआ। लेखक ने अपने जीवन मे चारो ओर मानव का घोर पतन अपनी दृष्टि से देखा था। मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए दूसरो का गला काटने के लिए तैयार रहता था और धर्म के नाम पर भयानक अत्याचार सर्वत्र फैला था।

रेबले ने अपने अन्तिम समय मे पादरी के सम्मुख जो उद्गार प्रकट

किया था वह भी व्यग्यात्मक ही था। उसने कहा था—मेरे पास कुछ सम्पत्ति नही है और जो कुछ है उसे मै गरीबो को देता हूँ।

उसके अन्तिम वाक्य थे—'खेल समाप्त हुआ, पर्दा गिरा दो।' पादरी ने रेबले के सम्बन्ध मे लिखाया था कि वह मदिरा के नशे मे ही मरा।

रेबले की रचनाओ पर अश्लीलता का आरोप लगाया जाता है, लेकिन वह तत्कालीन ससार के यथार्थ चित्र और भावनाओ को स्पष्ट शब्दो मे, अपने हास्य और व्यग्य द्वारा, अभिव्यक्त करता था। लेखक अपने उपन्यासो मे अपने महा्‌ नायक गारगैन्तुआ और उसके पुत्र पेन्टाग्रूयल को, जो पुस्तक का सर्वाधिक आकर्षक चरित्र है, तथ्य के ससार मे तया कल्पना की दुनिया मे भेजता है। अपनी यात्रा मे वे जीवन की विविध स्थितियो को व्यापक नाटकीय रगमच से देखते है। सभी प्रकार के तथा सभी परिस्थितियो के मनुष्यो—विशेषत पडित, पुजारी तथा वकालत पेशे के लोगो—की उसने कटु आलोचनाएँ की है। स्वय रेबले पहले पुजारी और बाद मे चिकित्सक बना। इसलिए जीवन के वास्तविक तत्त्वो से वह खूब परिचित था। उसे योग्यतासूचक चोगो तथा डिग्रियो के प्रति तनिक भी आदर न था। व्यग्य विनोद की समस्त श्रेष्ठ रचनाओ के समान ही उसके परिहास मे भी मौलिक गम्भीरता छिपी हुई है।

'रोएँदार कानूनी बिल्लियाँ' अर्थात् कानून के पडितों की जो खिल्ली रेबले ने उडाई है, वह अत्यन्त कटु है और उसे वकीलो के संघ के निकट उच्च स्वर मे पढ़ना खतरे से खाली नही है। शब्दो का भण्डार भी उसका इतना विशाल है कि वह एक चित्र के बाद दूसरा चित्र तथा उसके समानान्तर उदाहरण पर उदाहरण अकित किये ही जाता है।

गारगैन्तुआ तथा पेन्टाग्रूयल का इतिहास शब्दो के महान् भण्डार से परिपूर्ण है। इसमे मध्ययुगीन बन्धनो से पीडित मानव आत्मा ने तत्कालीन धार्मिक रूढियो, अव्यावहारिक सिद्धान्तो, कृत्रिम साहित्य, अवास्तविक तुच्छ प्रगति आदि के प्रति विद्रोह किया है। उसके उपन्यास मे वस्तु-गठन व्यवस्थित नही हो पाया है। इसका कारण यह है कि यह रचना समय-समय पर, काफी अन्तर पर, लिखी गई थी और कोई व्यवस्थित योजना सामने रखकर उसका प्रणयन नही हो सका था। तत्कालीन साहित्य के विशेषज्ञो का कथन है कि रेबले ने अपनी रचनाओ के पूर्वार्ध को बिना पढे ही आगे का क्रम चलाया और प्रकाशन के पूर्व वह उसे सशोधित भी न कर सका। परिणाम-स्वरूप कथा की शृखला एक रूप मे नही चल सकी है। कभी कोई

पात्र बराबर सम्मुख रहता है तो कभी अचानक अन्तर्धान हो जाता है। वार्तालाप, हँसी, अनुकरण द्वारा खिल्ली उडाने, शब्दो के जाल बिछाने, मर्मान्तिक व्यग्य विनोद, कृषि जीवन के मनोरम चित्रण, मित्रो के स्नेहपूर्ण चरित्राकन, और चुटकी लेने मे जितनी प्रवीणता, शीघ्रता और स्वाभाविकता से पूर्ण रेबले की लेखनी चलती है, उतनी शायद ससार के किसी अन्य लेखक की नही।

'गारगैन्तुआ तथा पेन्टाग्रूयल' मे विचारो, कल्पनाओ, इच्छा-आकाक्षाओ एव अनुभूतियो की अविच्छन्न धारा प्रवाहित होती है। ऐसी स्थिति आह्लाद, मादकता अथवा आत्मोद्रेक के फलस्वरूप ही उत्पन्न होती है। यह कहना कठिन है कि इन तीनो मे से रेबले को किससे प्रेरणा मिली। हाँ, इतना अवश्य निश्चित है कि उसकी रचनाएँ मादकतापूर्ण मस्तिष्क से प्रादुर्भूत है, चाहे यह मादकता आसव-जनित ही हो अथवा ईश्वर-भावना जनित। इस पुस्तक मे ग्रेण्डगूसियर, उसके पुत्र गारगैन्तुआ और गारगैन्तुआ के पुत्र पेन्टाग्रूयल की जीवन-कथा तथा साहसपूर्ण यात्राओ का वर्णन है। ये सभी मद्यसेवी, लडाकू और झगडालू चरित्र के है। ग्रेण्डगूसियर क्रूर एव शुष्क स्वभाव का है। गारगैन्तुआ मे ये दोष अपेक्षाकृत न्यून है, किन्तु पेन्टाग्रूयल सभ्य, पडित तथा कुशल है। यह पुस्तक एक नाटकीय वशावली तथा कविताओ से प्रारम्भ होती है। ये कविताएँ गम्भीर और रहस्यवादी है।

प्रारम्भ की कविताओ के अनन्तर गारगैन्तुआ के जन्म की आश्चर्योत्पादक कहानी है। कहते है कि ग्यारहवे मास वह अपनी माता के गर्भ से ऐसा उच्च स्वर करता उत्पन्न हुआ जो मीलो से सुनाई पडता था—कुछ पीने को दो, कुछ पीने को दो।

इसके बाद उसके पालन-पोषण, उसके लिए बनी पोशाक, उसकी प्रारम्भिक शिक्षा, पेरिस से पलायन, पिकरोशेल से युद्ध और अन्त मे 'टेलमी के गिरजाघर' के निर्माण का विवरण है।

'टेलमाईटस' की कहानी मे रेबले एक दर्शन का रूप उपस्थित करता है। टेलमी मे रहनेवाले स्त्री-पुरुषो का उद्देश्य है—'अपने अन्त करण की प्रवृत्ति के अनुसार कार्य करो।' गिरजाघर के द्वार पर लगी एक सूचना के अनुसार उन व्यक्तियो का प्रवेश निषिद्ध किया गया है, जो रूढिवादी, कट्टर, वकील, महन्त, मद्यसेवी, असत्यवादी, आलसी, ईर्ष्यालु, क्रूर तथा अवाञ्छित लोग है।

इसके अतिरिक्त एक कविता भी अकित है, जिसका आशय है—गुण, सम्मान, प्रशंसा, प्रसन्नता यहाँ दिन-रात निवास करती है। पुष्ट शरीर और प्रौढ मस्तिष्क वाले लोग ही यहाँ रहते हैं।

इस गिरजाघर के रहनेवाले सभी व्यक्ति सम्मानपूर्वक विवाहित, संयमी, बुद्धिमान्, कुशल, दानी, दयालु, वीर तथा न्यायप्रिय हैं। मध्य-कालीन कुछ गिरजाघरो मे यह नियम था कि यदि कोई महिला वहाँ प्रवेश करती तो तत्काल ही जहाँ-जहाँ वह गई होती उतना स्थान धोकर साफ कर दिया जाता था। इस नियम के ठीक विपरीत टेलमी गिरजाघर मे यदि कोई धार्मिक स्त्री-पुरुष आ जाता तो सभी स्थान अच्छी तरह धोकर साफ कर दिये जाते थे।

रेबले का प्रिय चरित्र फ्रायरजान है। यह युवक वीर और साहसी है तथा कृत्रिमता, कोरी पडिताई आदि से घृणा करनेवाला है। यही फ्रायरजान टेलमी गिरजाघर का अध्यक्ष है। उसे अभिमान है कि उसके गिरजाघर मे छूआछूतवाली गले और मुख की बीमारी के भय से कोई कभी अध्ययन नही करता। इसी प्रकार फ्रायरजान के माध्यम से साहित्यकार रेबले धार्मिक रूढियो और विशेषकर पोप की सभी सस्थाओ पर कडा से कडा व्यग्य तथा उपहास करने मे समर्थ हो सका है। वह निश्चित रूप से गिरजाघर की बुराइयो, उसके नामधारी प्रवचक पुजारियो एव पडितो का विरोधी था, किन्तु नवीन प्रोटेस्टेण्ट धर्म से वह सहानुभूति भी रखता था।

कुछ विद्वानो का मत है कि रेबले सास्कृतिक पुनर्जागृति के युग का नही बल्कि मध्ययुग का साहित्यकार था। जो हो, इतना तो अवश्य है कि रेबले कुछ अशो मे नवीन जागरण का विरोधी होते हुए भी मध्य-युग मे प्रचलित धार्मिक विडम्बनाओ, सामाजिक कृत्रिमता आदि का घोर विरोधी था। उसकी प्रवृत्तियाँ नवीन सुधार की ओर स्पष्ट लक्षित होती है, इसलिए उसे सास्कृतिक साहित्यिक पुनरुत्थान काल का ही साहित्यकार समझना चाहिए।



# मानटेन

(१५३३–१५९२ ई०)

योरोपीय साहित्य मे निबन्ध ही ऐसा साहित्यिक अग है, जिसके जन्मदाता और जिसकी जन्मतिथि निश्चित रूप से विदित है। नाटक, गीत, कहानी तथा उपन्यास, साहित्य के अङ्ग रूप मे कब और किसके द्वारा प्रवर्तित, आविर्भूत हुए, इसका ठीक पता नही चलता। इनके जनक तथा आविष्कारक एक-एक प्रतिभाशाली के रूप मे हमारे सम्मुख नही आते, किन्तु निबन्ध के विषय मे ऐसी बात नही है। निबन्ध के सम्बन्ध मे इतना ज्ञात है कि अमुक तिथि के पूर्व उसका अस्तित्व न था और अमुक तिथि के बाद उसका बराबर विकास होता गया।

१५७१ ई० मे माइकेल-डी-मानटेन जब हाहाकारमय ससार से दूर हटकर अपनी जमीदारी के एकान्त भवन मे अपने विषय मे स्वय चिन्तन करने लगा, उसी समय निबन्ध का स्वरूप प्रस्तुत होने लगा। नौ वर्ष के अनन्तर जब उसके निबन्धो का प्रथम सस्करण निकला तो उसी समय को निबध का जन्म-काल समझना चाहिए। सर्वप्रथम निबन्धकार ही सर्वश्रेष्ठ निबन्ध-लेखक हुआ। मानटेन के पश्चात् अनेक श्रेष्ठ निबन्ध-लेखक हुए। एरिस्टाल तथा सिसरो के विवेचनो को यदि निबन्ध सी सीमा के अन्तर्गत स्वीकार किया जाय तो मानटेन से बहुत पूर्व भी निबन्ध का अस्तित्व माना जा सकता है। लेकिन हम निबन्ध-साहित्य का आचार्य यदि किसी को सम्बोधित कर सकते है, तो उसका अधिकारी आज भी मानटेन ही है।

एक बार सिसली के राजा रेने द्वारा अपने ही आलिखित चित्र को देखकर मानटेन ने कहा था—'प्रत्येक व्यक्ति का यह कानूनी अधिकार होना चाहिए कि वह लेखनी से अपने रूप का चित्रण करे जैसा कि इस राजा ने अपने रूप का आलेखन पेसिल से किया है। वास्तव मे यह न केवल प्रत्येक व्यक्ति का कानूनी अधिकार ही है, अपितु उसके लिए अपना चित्र आलिखित करना सुविधाजनक भी होना चाहिए। दूसरे लोग हमारे रूप की कई रेखाओ को छोड दे सकते है, लेकिन हम अपने रूप से सुपरिचित होने के कारण अपना पूर्ण चित्र प्रस्तुत कर सकते है। फिर ऐसा प्रयत्न क्यो न आरम्भ किया जाय? पर जब हम प्रयत्न आरम्भ कर देते है तो हाथ से

लेखनी गिर पडती है। इसमे एक प्रकार की रहस्यात्मक और अभिभूत कर देनेवाली कठिनाई आ उपस्थित होती है।' कितनो ने साहित्य मे अपने व्यक्तित्व का पूर्ण आलेखन किया है? केवल मानटेन, पेप्स और रूसो का नाम ही सामने आता है।

मानटेन के पिता का विशेष ध्यान अपने बालको की शिक्षा-दीक्षा पर था। उसका विचार था कि बच्चे किसानो के जीवन की बाते सीखे और कृषि-कर्म का ज्ञान-परिज्ञान रखे। मार-पीटकर बालको को पढाया जाय इस विचार का वह घोर विरोधी था। यहाँ तक कि बालको की कोमल भावनाएँ विकृत न हो, इसलिए उसने बच्चो को सबेरे जगाने के लिए विशेष सगीत की व्यवस्था की थी। उसका विचार था कि बच्चो को सहसा उठा देने से उनके मस्तिष्क को हानि पहुँचती है।

मानटेन का पिता एक योग्य और शिक्षित मध्यम वर्ग का फ्रासीसी था। वह बोर्डो का मेयर भी था। उसने अपने बच्चो के शिक्षक के रूप मे एक जर्मन को अपने यहाँ नियुक्त किया जो फ्रेंच नही जानता था, लेकिन लैटिन का पडित था। मानटेन के पिता की आज्ञा थी कि घर मे छ वर्ष के बच्चो के सामने फ्रेच भाषा का प्रयोग न हो। परिणाम यह हुआ कि घर के सभी लोगो को—यहाँ तक कि नौकर, रसोईदार, माली और नर्स को भी—लैटिन सीखनी पडी। उस जर्मन शिक्षक ने घर मे सबको लैटिन की शिक्षा दी।

जब छ वर्ष की अवस्था मे मानटेन स्कूल गया, तब वह फ्रेच की अपेक्षा लैटिन अच्छी बोल लेता था। वह बचपन मे ही खेल-कूद के प्रति रुचि नही रखता था। वह स्वप्नवादी था, इसलिए उत्पात करने की उसकी प्रवृत्ति नही होती थी।

मानटेन का पिता उसे वकील बनाना चाहता था और उसी के आदेशानुसार कार्य होता रहा। २१ वर्ष की अवस्था मे मानटेन ने वकालत आरम्भ की थी। उन्ही दिनो कानून के क्षेत्र मे एक प्रतिभाशाली युवक वकील से मानटेन की मैत्री हुई। इस मैत्री का मानटेन के जीवन पर अत्यधिक प्रभाव पडा।

बाद मे मानटेन ने मजिस्ट्रेट का कार्य आरम्भ किया। इस कार्य मे उसकी अरुचि थी। वह ऊब जाता था, किन्तु वह इतना प्रतिभा-सम्पन्न और व्यवहार-कुशल था कि उसकी प्रसिद्धि चारो ओर हो गई। हेनरी तृतीय तथा हेनरी आफ नैवारे उससे यथेष्ट प्रभावित हुए थे। अपनी

योग्यता के कारण मानटेन को कई प्रतिद्वन्द्वी झगडो को निपटाने का कूट-नीतिक कार्यभार सौपा गया था। वह इन वर्षो के अपने जीवन पर अधिकतर मौन रहा, लेकिन अन्त मे यह प्रकट हुआ कि नैवारे के हेनरी की ओर उसका अधिक झुकाव था। इसी बीच उसके वकील मित्र की मृत्यु हो गई। मानटेन के लिए वह अपना सुन्दर पुस्तकालय छोड गया था।

तेतीस वर्ष की अवस्था मे मानटेन ने अपना विवाह किया। उसकी पत्नी भी मध्यम वर्ग की थी और दहेज मे यथेष्ट सम्पत्ति लेकर आई थी। वह उसकी सच्ची जीवन-सहचरी थी। उसने मानटेन की जमीदारी का सब प्रबन्ध अपने हाथो मे लिया। मानटेन बहुत ही लापरवाह आदमी था, वह रुपये-पैसो के मामले मे कुशल नही था।

विवाह के विषय मे मानटेन ने लिखा है—विवाह की उपयुक्तता, औचित्य, मान और व्यवस्थितता सिद्ध है। प्रेम सुख से ही उत्पन्न होता है और वह उस सुख को और भी उद्दीप्त करता है, उसे और आनन्दमय बनाता है। मनुष्य अपने लिए ही विवाह नही करता, अपितु अपनी अनागत सन्तानो के लिए।

दुर्भाग्य से मानटेन की पत्नी ने छ. लडकियाँ उत्पन्न की। उनमे भी एक-एक कर पाँच चल बसी, अन्त मे केवल एक ही पुत्री जीवित रही।

१५६८ ई० मे मानटेन के पिता का देहान्त हुआ। उसके बाद दो वर्षो तक वह पेरिस के न्यायालय मे एक उच्च पद प्राप्त करने की लालसा मे भटकता रहा। उन्ही दिनो कैथोलिक और प्रोटेस्टेट धर्म के माननेवालो मे आपसी युद्ध हो रहा था। वह अपनी शान्ति-प्रिय प्रकृति के कारण क्रूरता और हत्या से घृणा करता था। धार्मिक युद्ध छिड जाने पर वह अपनी जमीदारी वाले स्थान पर चला गया और उसने सार्वजनिक जीवन का परित्याग कर दिया।

१५७२ ई० से ही मानटेन ने अध्ययन तथा निरीक्षण कर उस पर टीकाएँ लिखनी प्रारम्भ की। अपनी पढ़ी हुई पुस्तको की टीका और व्याख्या करते-करते मानटेन मे आत्म-परीक्षण की प्रवृत्ति उत्पन्न हुई। किसानो तथा व्यवसायी-वर्ग से अपने सम्पर्क के विषय मे भी उसने सस्मरण लिखना प्रारम्भ किया। अन्त मे उसने अपने स्वभाव, चरित्र, भावना, विचार आदि का परीक्षण कर उन्हे लिपिबद्ध किया। १५८० ई० मे उसके निबन्धों के प्रथम दो खण्ड प्रकाशित हुए। इसकी एक प्रति उसने हेनरी तृतीय के पास भी भेजी। इसके बाद ही उसने परिभ्रमण करने का निश्चय

किया। स्विटजरलैण्ड, जर्मनी और इटली की यात्रा करते समय मानटेन ने एक डायरी प्रस्तुत की। उसके निबन्धो की ख्याति चारो ओर फैल चुकी थी, इसके फल-स्वरूप मजिस्ट्रेटो और कार्डिनलो द्वारा उसका सर्वत्र समादर हुआ। धार्मिक पडितो ने उससे उसके निबन्ध के धर्म-विरोधी कुछ अशो को निकालने का अनुरोध किया था।

मानटेन ने रोम तथा वेनिस की उच्च वारवनिताओ की रहन-सहन एव समस्या का भी निकट से अध्ययन किया था। अपने इन पर्यवेक्षणो और निरीक्षणो को उसने भली भाँति लिखित रूप मे प्रस्तुत किया। फ्रास लौटने पर वह बोर्डो का मेयर निर्वाचित हुआ। इस पद पर रहकर उसने अनेक सुधार कर कीर्ति अर्जन की। हेनरी आफ नैवारे जब गद्दी का उत्तराधिकारी हुआ तो मानटेन के इलाके दो बार गया। १५८७ ई० मे प्लेग फैला, जिसके कारण मानटेन, नगर आकर, अपना कार्य जारी न रख सका। इसके लिए उसकी बडी निन्दा हुई। अपने शान्त स्वभाव के कारण मानटेन राजनीतिक जीवन से ऊब चुका था और ऐसे ही अवसर की प्रतीक्षा मे था। उसने अपने पद के कार्य-भार से मुक्ति पायी।

मानटेन के दो मुख्य शिष्य थे—एक था पेरी चैरान और दूसरी थी एक जर्मन महिला। इसी महिला पर मानटेन ने अपने अप्रकाशित निबन्धो का सम्पादन-सशोधन-भार छोड दिया था। जब वह अपने निबन्धो का एक नवीन सस्करण पेरिस मे प्रकाशित करा रहा था, उस समय उस पर कैथोलिक लीग ने अभियोग लगाकर उसे जेल मे बन्द कर दिया। किन्तु कैथराइन-डी-मेडिसी की आज्ञा से आठ घण्टे के भीतर ही वह छोड दिया गया।

मानटेन की सर्वश्रेष्ठ कृति 'एपालाजी आफ रेमाण्ड सीवाण्ड' है। उसमे प्रत्येक प्रकार की कट्टरता का विरोध है। जीवन मे उसने जो व्यग्य-विनोद के तीखे बाण चलाये है, उनमे सबसे गभीर घाव करनेवाले तीर इसी पुस्तक मे है। इसके लिए उसे कैथोलिक और रिफार्मेशन दल के लोगो की पारस्परिक हत्या से प्रेरणा मिली। इन पारस्परिक सघर्षो में कुछ ही वर्षो मे अस्सी लाख व्यक्ति मरे, नौ नगर धराशायी हुए, दो सौ पचास गॉव जलाये गये और फ्रास का सम्पूर्ण देहाती प्रदेश मानो बूचडखाना हो गया था। मानटेन के निवासस्थान पर दो बार आक्रमण हुआ, पर उसने अपना सन्तुलन बनाये रखा और उसकी कोई हानि नही हुई।

मानटेन की महत्ता प्राय सम्पूर्ण फ्रेंच गद्य-साहित्य मे प्रतिबिम्बित है।

उसने और रेबले ने मिलकर फ्रेच भाषा को एक सस्कृत रूप दिया। बाद मे फ्रेच एकेडेमी ने इस भाषा का एक स्तर निर्धारित किया। मानटेन ने निबन्ध को जन्म दिया। बौद्धिक अन्वेक्षण का वह जनक है, जिसने बाद मे फ्रासीसी क्रान्ति को जन्म दिया।

मानटेन शैली की स्पष्टता और सरलता का पक्षपाती था। वह उन्ही शब्दो का प्रयोग करने का प्रयत्न करता था, जो पेरिस के बाजारो मे प्रचलित थे। उसी ने स्त्री-पुरुष की समता को सर्वप्रथम घोषित किया। उसने स्त्रियो के उस आदर्शीकरण का विरोध किया, जिसके कारण उनको असीम बन्धनो मे रहना पडा।

मानटेन ने महापुरुषो और जन-साधारण के बीच का सम्बन्ध बताकर मानव-सम्मान को अत्यधिक ऊपर उठाया। उसने आत्मा की गुहा मे प्रवेश कर उसको जानने और समझने का प्रयत्न किया। मानटेन ने हृदय मे छिपी हुई भावनाओ को खोजकर उनको शब्दो मे परिवर्तित कर जगत् के सामने प्रस्तुत किया। वह कलाओ मे सर्वश्रेष्ठ कला, जीवन की कला, का महत्तम कलाकार था।

मानटेन का यह सिद्धान्त प्रसिद्ध है कि ज्ञान निश्चित नही हो सकता। कोई वस्तु, चाहे वह मन हो या बुद्धि, अपरिवर्तनीय नही है, इसलिए तत्सम्भूत ज्ञान कभी स्थिर और निश्चित नही हो सकता। इसके अतिरिक्त, यदि कोई वस्तु स्थिर और निश्चित भी हो तो मानव मन और बुद्धि इतनी विविध और परिवर्तनशील है कि हम उस वस्तु के विषय मे कोई स्थिर और निश्चित मत नही दे सकते। ऐसी अवस्था मे साहित्य-समालोचना का एक सिद्धान्त कैसे स्थिर किया जा सकता है? कृतियाँ एक जुलूस के रूप मे मन के शीशे के सामने से गुजरती है और क्योकि यह जुलूस बहुत लम्बा है, इस बीच शीशे मे परिवर्तन आ जाता है। जब दूसरी बार वही कृतियाँ उसमे से गुजरती है तो उनका प्रतिबिम्ब भिन्न हो जाता है।

मानटेन ने यह महान् अन्वेषण किया कि जीवन एक जीवन्त वस्तु है। जीवन एक साहसिक यात्रा है और उसका परिणाम अनिश्चित होने पर भी आनन्ददायक है। उसका यह 'व्यक्ति का नियमित आनन्द' किसी भी दर्शन की तुलना मे आ सकता है।

इसमे सन्देह नही कि मानटेन का ग्रन्थ उसके व्यक्तित्व का ही प्रति-कलन था या यह भी कहा जा सकता है कि उसका ग्रन्थ उसका ही दूसरा रूप था। उसने पाठको को शिक्षा देने से अस्वीकार किया। वह उपदेश

भी नही देता था। वह सदैव कहा करता था कि वह जनसाधारण की तरह ही है। उसका सपूर्ण प्रयत्न अपने व्यक्तित्व को आलिखित कर देना, अपने विचारो का दूसरो तक वहन कर देना, सत्य कह देना, था और यह कल्पना से अधिक कठिन मार्ग का अनुसरण करना है।

अपने को दूसरे तक वहन करने से अधिक कठिन काम यह है कि हम 'हम' ही बना रहे। हमारा अन्तर्जीवन हमारे इस बाह्य जीवन से किसी प्रकार मेल नही रखता। यदि हम अपनी अन्तरात्मा से पूछे कि वह क्या सोचती है, तो वह यही कहेगी—जो कोई नही सोचता।

मानटेन ने लिखा है—'मै शिक्षा नही देता, मै केवल कह जाता हूँ। वह दूसरो के विषय मे कैसे कुछ कह सकता था जब उसके ही अनुसार वह स्वय अपने लिए दिनानुदिन अज्ञेय होता जाता है। सम्भवत उसका एक सिद्धान्त यह था कि व्यक्ति नियम न बनावे। जिस व्यक्ति को हम आदर्श मानकर चले, वह भी सम्भवत सबसे निर्बल प्रकृति का हो। मानटेन का यह भी कहना है कि किसी के साथ बँधकर रहना किसी प्रकार अस्तित्व बनाये रखना भले ही हो, लेकिन उसे जीना कभी नही कह सकते। कानून तो एक व्यवस्था मात्र है, वह मानव भावनाओ और अन्त-प्रेरणाओ को समझने की शक्ति नही रख सकता। स्वभाव और रस्म उन निर्बल प्रकृति के लोगो के लिए है, जो उन्मुक्त होकर विचरण नही कर सकते।

आजकल विचार-स्वातत्र्य के युग मे मानटेन का अनुभव कितना महत्त्व रखता है। हम अपनी भावनाओ के चक्र, अन्तरात्मा की प्रेरणाओ, परस्पर भ्रामक कल्पनाओ का अध्ययन करे। प्रत्येक क्षण हमारी आत्मा हमारे लिए एक नूतन आश्चर्य प्रस्तुत करती है। गति और परिवर्त्तन हमारे जीवन का सार है। जीवन के सम्बन्ध मे दृढता, या दूसरे के साथ एकरूपता स्थापित करना मृत्यु है। हम अपने मस्तिष्क के विचारो को कहते जायँ चाहे वे परस्पर कितने ही विरोधी हो। उनमे से जो सर्वथा तथ्यहीन है उनको बाहर फेक दे और जो ससार की दृष्टि मे तथ्यहीन होकर भी अपनी दृष्टि मे महत्त्वपूर्ण हो उनको धारण करे; इस बात की चिन्ता ही न करे कि ससार क्या सोचेगा? क्योकि सबसे महत्त्वपूर्ण हमारा जीवन है और निस्सन्देह व्यवस्था भी।

मानटेन ने सभी प्रकार के व्यक्तिगत मतो या विधानो की हँसी उडाई है। उसने मनुष्य के दु ख, शोक और मानव-प्रकृति की निर्बलता पर व्यग्य

कसे है। फिर क्या हम धर्म का आश्रय लेकर व्यक्ति-स्वातत्र्य का नियन्त्रण करे? इन विषयो पर मानटेन कुछ निश्चित मत नही देता। वह सदैव 'स्यात्' और 'मै सोचता हूँ' जैसे शब्दो का प्रयोग कर मनुष्य की अज्ञानता पर जोर देना चाहता है। वह कहता है--'दिव्य आदेश का पालन अवश्य करे पर मानव जीवन मे एक दूसरा पथ प्रदर्शक भी है, जिसकी बात सुन लेनी चाहिए। वह उसकी अन्तरात्मा है।' मानटेन उसे 'अन्तर का स्वामी' कहता है।

सचमुच मानटेन आत्मा की पुकार को भली भाँति समझता है। वह लिखता है—अपने मित्रों से वियुक्त होने के दुख से बचने के लिए यदि कुछ सन्तोष-स्वरूप हो सकता है तो यही कि हमने उनसे कुछ नही छिपाया, अत्यन्त स्पष्ट रूप से अपने विचारो को उनके सम्मुख रखा, यह मेरा निश्चित अनुभव है।

लेखको के जीवन मे प्राय निराशा और द्वन्द्व ही विशेष रूप से दिखाई पडता है, लेकिन मानटेन अपने जीवन से सन्तुष्ट सा दिखाई पडता है। उससे पूछा गया कि यदि तुम फिर जन्म लो तो क्या करोगे? उसने उत्तर दिया, इसी तरह जीवन व्यतीत करूँगा जैसा कि कर चुका हूँ।

मानटेन बहुत दिनो तक बीमार था। उसे पथरी का रोग था। अपने अन्तिम वर्षो मे उसने मृत्यु पर बहुत कुछ लिखा। मृत्यु के विषय मे उसके विचार दृढ थे। वह लिखता है—कुछ ही लोग ऐसे है जो मरते समय यह सोचते है कि वह उनका अन्तिम क्षण है। आशा इसी समय मनुष्य को सर्वाधिक प्रलुब्ध करती है। वह हमारे कानो मे कहती है—दूसरे लोग इससे भी अधिक बीमार होकर भी नही मरते। तुम्हारी स्थिति उतनी चिन्ताजनक नही, जितना कि लोग समझते है। इससे हम अपने जीवन को अधिक महत्त्व देने लगते है, मानो हमारे चले जाने पर विश्व ही शून्य हो जायगा।

विद्वानो का कथन है कि मानटेन ने प्लुटार्क से प्रेरणा प्राप्त की थी और शेक्सपीयर ने मानटेन और प्लुटार्क दोनो ही से अपनी प्रतिभा प्रखर की थी।

इसमे सन्देह नही कि सभी कलाओ मे सर्वोच्च जीवन-कला का मानटेन महान् कलाकार था।

———



# सर्वेन्टीज़

(१५४७–१६१६ ई०)

योरोप के महान् लेखको मे सर्वेन्टीज से अधिक रहस्यमय जीवन अन्य किसी साहित्यकार का नही था। असफलता और अभाव से वह सदैव द्वन्द्व करता रहा। उसका समस्त जीवन हत्या, अपराध और ऋण के भार मे उलझा हुआ था। अपने व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर ही उसने 'डॉन क्विक्जोट' का निर्माण किया था। योरोप के उपन्यास-साहित्य मे इसका सर्वप्रथम मनोवैज्ञानिक स्थान माना जाता है।

सर्वेन्टीज का पिता एक सम्पन्न व्यक्ति था, और ऐश्वर्यशाली जीवन व्यतीत करने का अभ्यस्त हो गया था, बाद मे प्रतिकूल परिस्थिति आने पर भी वह समझता था कि उसे सम्पन्न की तरह जीने का अधिकार है। इसका परिणाम यह हुआ कि उसे बहुत-सा ऋण लेने के अपराध मे कई बार जेल जाना पडा। सर्वेन्टीज अपनी रचना 'डॉन क्विक्जोट' मे इस बात का सकेत करता है। इसमे डॉन क्विक्जोट का भतीजा अपने सिर-फिरे चाचा (डॉन क्विक्जोट) को बताता है कि आर्थिक स्थिति ठीक न होने पर व्यर्थ 'हिदालगो' (असम्पन्न कुलीन) का रोब जमाने से कुछ नही हो सकता।

उन दिनो स्पेन के कानून मे यह नियम था कि किसी हिदालगो को ऋण न चुकाने के अपराध मे जेल नही भेजा जा सकता था। इस प्रकार सर्वेन्टीज का पिता जेल से तो छूटा; किन्तु फिर उस पर यह सकट आया

कि वह अपने को हिदालगो प्रमाणित करे। इस बीच वह फिर जेल भेज दिया गया। अन्त मे प्रमाण प्रस्तुत करने पर उसे मुक्ति मिली। फिर एक नयी समस्या उपस्थित हुई। उसे कानून के अनुसार किसी व्यापारी से रुपया लेकर ऋण चुकाना पडा। इससे उस पर बडा भारी बोझ लदा। उसके परिवार मे उसकी स्त्री और सात सन्ताने थी। आर्थिक कठिनाई के कारण उसे नाई का काम करना पडा, किन्तु किसी तरह छुटकारा नही मिला और अन्त मे ऋण के लिए उसे फिर जेल जाना पडा।

सर्वेन्टीज की माँ अत्यन्त धैर्यशालिनी और विपत्ति का वीरता के साथ सामना करनेवाली स्त्री थी। उसके विवाह के पश्चात् ही परिवार की स्थिति बिगड गयी थी। सर्वेन्टीज के पिता को स्वय अपनी जीविका उपार्जित करनी पडती थी।

मिगुएल दे सर्वेन्टीज की शिक्षा कुछ अधिक नही हुई। आलमाला मे रहकर भी वहाँ के विश्वविद्यालय मे वह शिक्षा नही प्राप्त कर सका। कुछ विद्वानो का कहना है कि उसने उस विश्वविद्यालय मे शिक्षा प्राप्त की थी। इसके अतिरिक्त, सर्वेन्टीज ने स्वय लिखा है कि उसे लैटिन नही आती थी और उन दिनो स्पेन के विश्वविद्यालय मे केवल लैटिन ही पढायी जाती थी।

बचपन मे ही आश्रय-हीन होकर सर्वेन्टीज एक धनी कार्डिनल के परिवार मे सम्मिलित हुआ। कार्डिनल ने सर्वेन्टीज की शिक्षा का भार अपने ऊपर इसलिए लिया कि वह एक कुलीन वश का था और भविष्य मे कुशल होने पर उससे सहयोग मिलने की आशा थी। सर्वेन्टीज एक सम्बन्धी की भाँति उस परिवार मे निवास करने लगा। वहाँ रहते हुए दुर्घटना के कारण सर्वेन्टीज पर हत्या का अभियोग लगाया गया। यह घटना बडी विचित्र है।

कार्डिनल का एक पुत्र था जो अवस्था मे सर्वेन्टीज से भी छोटा था। दोनो मे घनिष्ठ मित्रता थी। कार्डिनल का पुत्र एक युवती से प्रेम करने लगा था। वह युवती सामाजिक स्तर मे लडके से निम्न थी और उसका पिता ऐसे विवाह की स्वीकृति नही दे सकता था। इसलिए गुप्त रूप से वह उससे मिलने जाया करता था। एक दिन सर्वेन्टीज और कार्डिनल का लडका दोनो उस युवती से मिलने जा रहे थे। रात मे उस प्रेमिका के घर के पास ही दो व्यक्तियो ने उन पर आक्रमण किया। इनमे एक युवती

का भाई और दूसरा उसका अन्य प्रेमी था। दोनो ओर से तलवारे चली और आक्रमण करनेवाले मारे गये।

दोनो ने इस हत्या-काण्ड को गुप्त रखना चाहा, किन्तु अन्त मे भागकर उन्हे दूसरे देश मे जाना पडा। उस समय सर्वेन्टीज की अवस्था २२ वर्ष की थी। १२ वर्षो तक वह स्पेन नही लौट सका, और फ्रास जाकर चार्ल्स पचम की सेना मे भर्ती हो गया। कुछ समय बाद वह नाप्ल की एक सेना मे चला गया जो स्पेन, वेनिस आदि की सेनाओ के साथ-साथ लडनेवाली थी। उक्त सेना मे उसका भाई रोदेरिगो भी था। दो वर्ष बाद सर्वेन्टीज ने स्पेन-तुर्क-युद्ध मे भाग लिया, जिसमे तुर्क साम्राज्यवादियो की सेनाओ को बुरी तरह पराजित होना पडा था। इस युद्ध मे सर्वेन्टीज की बायी भुजा जाती रही।

तीस वर्ष की अवस्था मे सर्वेन्टीज सेना के काम से अवकाश लेकर जहाज से स्पेन लौट रहा था। मार्ग मे अल्जेरिया के समुद्री डाकुओ ने उस जहाज पर आक्रमण किया और दूसरो के साथ सर्वेन्टीज को भी बन्दी बना लिया। सर्वेन्टीज के पास एक महत्त्वपूर्ण प्रशसापत्र था, जिसे तलाशी मे देखकर डाकुओ ने समझा कि सर्वेन्टीज धनी परिवार का है। उन लोगो ने निश्चय किया कि पॉच सौ ड्यूकाट मिलने पर ही सर्वेन्टीज को मुक्त करेगे। इतना धन सर्वेन्टीज के परिवार मे कभी नही था। इसलिए पॉच वर्षो तक वह बन्दी बना रहा। लेकिन वहॉ पर वह सुखी था। उससे अधिक काम नही लिया जाता था। उसने स्वय लिखा है कि उस पर मार भी नही पडती थी।

सर्वेन्टीज वहॉ नाटक लिखा करता था और उसके साथी कैदी उन नाटको को खेला करते थे। इसी प्रकार उसने एक बार अपने साथी कैदियो को वहॉ से भगा देने मे सफलता प्राप्त की थी। एक पादरी कुछ कुलीनो को मुक्त करने के बारे मे बातचीत करने के लिए समुद्री डाकुओ के बीच भेजा गया। सर्वेन्टीज को देखकर उसे उस पर स्नेह उत्पन्न हुआ और उसने उसे छुडाना चाहा। उसने किसी प्रकार मुक्ति के लिए निर्धारित रकम का एक तिहाई स्पेन के राजा से लिया। कुछ सहायता सस्थाओ से प्राप्त की और शेष रकम सर्वेन्टीज की साहसी माता ने एकत्र की। इस प्रकार जब वह पादरी रकम लेकर उसे छुडाने पहुँचा तो उसने देखा कि सर्वेन्टीज लोहे के सीकचो मे बन्द करके जहाज पर चढा दिया गया था। वह कुस्तुनतुनिया के बाजार मे दास के रूप मे बिकने के लिए ले जाया जा रहा था। ठीक समय पर पादरी वहॉ पहुँचा और उसे मुक्त कराया।

स्पेन लौटने पर सर्वेन्टीज ने सैनिक जीवन छोडकर साहित्य-साधना आरम्भ की। उसकी प्रतिभा सर्वतोमुखी थी। उसने कविताएँ, नाटक, गद्य, उपन्यास और साहित्य-समालोचनाएँ लिखी। उसके दिन बडे कष्ट मे बीतते थे, इसलिए उसने कई प्रशसात्मक रचनाएँ भी लिखी; किन्तु वे सब व्यर्थ हुई। दूसरो के नाम पर भी उसने रचनाएँ की, पत्र मे विज्ञापन तक लिखे।

सर्वेन्टीज दरिद्र होने पर भी अपनी विलासी प्रवृत्ति नही छोड सका। आना फ्रासिसका नाम की एक अभिनेत्री से उसका सम्बन्ध हो गया था। १५८४ ई० मे इस सम्बन्ध से इजाबेल नाम की एक लडकी उत्पन्न हुई। उसी वर्ष एक दूसरी विधवा से सर्वेन्टीज ने विवाह किया। इस स्त्री के पास जमीदारी, बगीचा-फार्म, एक सुन्दर मकान और शराब की दुकान आदि सपत्ति थी। विवाह के बाद सर्वेन्टीज ने स्वय सब सपत्ति की देख-भाल करना आरभ किया और निश्चिन्त होकर लिखने के कार्य मे लग गया। कुल मिलाकर उसने तीस नाटक लिखे। उसकी रचनाओ पर व्यग्य और कटु आलोचनाएँ प्रकाशित नही हुई, फिर भी उसे विशेष आर्थिक लाभ नही हुआ।

उसके दुर्भाग्य का चक्र फिर चला। परिस्थितियो के कारण विवश होकर उसे सरकारी खजाने मे नौकरी करनी पडी। वहाँ इतना अधिक कार्य करना पडता था कि सर्वेन्टीज उसे सँभाल नही पाता था। उसने सरकारी रुपये एक बैंक मे जमा कर दिये थे—वह बैंक दिवालिया हो गया। अन्त मे सर्वेन्टीज पर चोरी का अभियोग लगाया गया और वह जेल भेज दिया गया। चार महीने बाद वह इस शर्त पर छोडा गया कि वह पूरा रुपया वापस कर दे, लेकिन उसने कभी रुपया वापस नही किया।

१५९७ ई० से १६०२ ई० तक की उसकी गति-विधि ज्ञात नही है। ऐसा पता लगता है कि १६०२ ई० मे वह फिर ऋण के मामले मे फँस गया था और फिर दो वर्षो के लिए लुप्त हो गया।

सत्तावन वर्ष की अवस्था मे वह अपनी अमर कृति 'डॉन क्विक्जोट' के साथ प्रकट हुआ। इस पुस्तक से उसे बहुत बडी सफलता मिली। इसके छ· सस्करणो की एक साथ माँग हुई और दूसरी भाषाओ मे इसके अनुवाद भी होने लगे। किन्तु उन दिनो स्पेन मे 'कापीराइट' की कोई व्यवस्था नही थी, इसलिए कुछ प्रकाशको ने चोरी से इस पुस्तक को छापकर खूब धन पैदा किया और लेखक के दुर्भाग्य ने यहाँ भी उसका साथ दिया।

सवन्टीज इस बात का प्रमाण प्रस्तुत करता है कि मनुष्य की प्रतिभा उसके

जीवन की किसी भी अवस्था मे प्रस्फुटित और विकसित हो सकती है। लेखक की सत्तावन वर्ष की अवस्था मे लिखे गये इस उपन्यास के सम्बन्ध मे वाल्टर राले ने कहा था—यह ससार का सबसे अधिक बुद्धिमत्ता-पूर्ण और अद्भुत ग्रन्थ है।

'डाँन क्विक्जोट' भिन्न-भिन्न अवस्थाओ के लोगो पर भिन्न-भिन्न प्रभाव डालता है। नवयुवक इसकी कथा के अद्भुत तत्त्व के लिए इसे पढते है, प्रौढ व्यक्ति उसमे मनुष्य की निर्बल प्रकृति और उसकी विफलताओ को देखकर हँसने की जगह रोने लगते है। कुछ लोगो की धारणा है कि इस पुस्तक को समझने के लिए मनुष्य को उस अवस्था तक पहुँचना चाहिए जब उसमे अस्थिरता नही रह जाती।

सर्वेन्टीज मानो व्यग्य का अवतार था। उसके व्यग्य मे इतनी गम्भीरता है कि लोगो को उसे समझने मे कठिनाई हो सकती है। उदाहरणत 'डॉन क्विक्जोट' के ग्यारहवे अध्याय मे सर्वेन्टीज 'डॉन क्विक्जोट' के मुँह से एक बहुत लम्बा-चौडा भाषण कराता है। यह स्पष्ट है कि लेखक ने इसके द्वारा उन लोगो पर व्यग्य कसा है जो यह कहते है कि प्राचीन युग सुवर्ण-युग था, वह स्वर्ग था, इत्यादि। लेकिन लोगो ने सर्वेन्टीज के इस व्यग्य को उसका गम्भीर उपदेश समझ लिया और स्पेन मे विद्यार्थियो के सामने, प्रौढ भाषा और उच्च विचार के उदाहरण के रूप मे, डॉन क्विक्जोट का वह भाषण कण्ठस्थ कराया जाने लगा!

सर्वेन्टीज मे व्यग्य करने की प्रवृत्ति आरम्भ से ही दिखाई पडती है। जब वह युवा था उन दिनो स्पेन मे प्रेम और वीरता सम्बन्धी कथा-कहानियाँ लिखने की प्रथा थी। पाठक ऐसी रचनाओ मे रस लेते थे। सर्वेन्टीज ने भी एक ऐसी रचना लिखी जिसका नाम—'गालातिया' रखा, किन्तु वह उसमे सफल न हो सका। उसकी असफलता का कारण यह था कि उसमे हास्य, व्यग्य आदि इतने अधिक थे कि वे किसी प्रेम-कहानी को एक सीधी धारा से आगे बढा नही पाते थे।

सर्वेन्टीज शेक्सपीयर का समकालीन था और अपने-अपने देशों के इन दोनो बडे लेखको की मृत्यु एक ही वर्ष मे हुई।

सर्वेन्टीज धुआँधार लिखता गया। उसने 'एक्जेम्प्लेरी नॉवेल्स' लिखे। देखने से मालूम होता है कि इसमे नैतिक शिक्षा दी गयी है पर वास्तव मे इसमे नैतिकता की हँसी उडाई गयी है। वह दूसरी रचनाओं मे लगा रहा, लेकिन उसका विशेष ध्यान 'डॉन क्विक्जोट' के लिखने मे ही था। इसमे उसे प्रथम भाग के समालोचको से अपने गुण-दोष समझने मे पर्याप्त सहायता मिल रही थी। कहानी-लेखक के सभी पात्र—स्त्री या पुरुष, नायक या प्रतिनायक—उसकी आत्म-कहानी से सम्बद्ध रहा करते है। इस दृष्टि से सर्वेन्टीज की महती रचना के प्रमुख पात्र, 'डॉन क्विक्जोट' और साको पाजा उसके अपने ही जीवन की प्रतिच्छाया है।

सर्वेन्टीज जिन दिनो 'डॉन क्विक्जोट' का दूसरा भाग लिख रहा था, उस समय उसे एक बडी विपत्ति का सामना करना पडा। वह एक गन्दी गली मे रहता था। एक दिन उसके दरवाजे के सामने झगडा हुआ और उसमे एक आवारा मार डाला गया। पुलिस ने सपरिवार सर्वेन्टीज को इस सन्देह पर गिरफ्तार कर लिया कि उसकी पुत्री इजाबेल की चरित्र-भ्रष्टता के कारण ही यह हत्या हुई थी। वह अपने परिवार के साथ जेल भेज दिया गया। कुछ समय बाद उसने यह प्रमाणित किया कि उस घटना से उसका और उसके परिवार का कोई सम्बन्ध नही था। तब कही वह मुक्त हुआ।

इस बीच मे सर्वेन्टीज की ख्याति केवल स्पेन मे ही नही, समस्त योरोप मे फैल गयी थी, किन्तु फिर भी उसे अपना जीवन अत्यन्त दरिद्रता मे व्यतीत करना पडता था। कभी-कभी तो भूखो मरने की स्थिति आ जाती थी।

वह वृद्ध हो चुका था और जलोदर रोग से पीडित था, फिर भी उसमे कार्य करने का वही उत्साह था। अपनी बासठ वर्ष की अवस्था मे वह लिखता है—उसका मुँह टेढा है, बाल अखरोट के रग के है, बरौनियाँ सीधी और स्थिर, चमकती हुई आँखे, काँटे की तरह नाक, फिर भी ठीक अनुपात की, दाढी चाँदी की-सी यद्यपि बीस वर्ष पहले वह सुनहली थी, बडी-बडी मूँछे, छोटा सा मुँह, दाँत विशेष महत्त्व के नही, क्योकि छ बच रहे है, वे भी अच्छी स्थिति मे नही है, और एक दूसरे से मिलते भी नही है। शरीर न बहुत बडा ही है न बहुत छोटा, रग गोरा, हाँ, भूरा नही, गोरा! कन्धे कुछ भारी से और पैरो के जितने फुर्तीले नही।

१६१५ ई० मे उसने 'डॉन क्विक्जोट' का दूसरा भाग प्रकाशक को दिया। अग्रेजी मे उसका अनुवाद भी प्रकाशित हो गया। १६१६ ई० की २३ अप्रैल को सर्वेन्टीज का देहान्त हुआ। उसकी कब्र का कोई पता नही चलता। इतना बडा कलाकार न जाने कहाँ दफना दिया गया!

सर्वेन्टीज अपने युग के लिए वरदान था या अभिशाप, इस विषय पर दो मत है। कुछ विद्वानो का कहना है कि निस्सन्देह वह योरोपीय श्रेष्ठतावाद का प्रचारक है, उसने अपने 'डॉन क्विक्जोट' उपन्यास की रचना कर योरोपीय वीरता और साहसिक कृत्यो का अन्त कर दिया, उन पर निर्मम प्रहार किया। दूसरी ओर ऐसे लोग है, जो समझते है कि सर्वेन्टीज की रचना ने योरोपीय सामन्तवाद पर मरणान्तक वार किया और इसलिए वह अपने युग का क्रान्तिदर्शी और क्रान्तिकारी साहित्यकार था।

इस विषय पर प्रसिद्ध अग्रेजी साहित्यकार गाल्सवर्दी और समालोचक

फोर्ड मेडोक्स के बीच इतना विवाद चल पडा था कि गाल्सवर्दी फोर्ड को मारने तक को उद्यत हो गया था। गाल्सवर्दी सर्वेन्टीज को मानवता के लिए एक वरदान समझता था और फोर्ड के अनुसार वह योरोपीय सस्कृति और उसकी श्रेष्ठता के लिए अभिशाप था।

'डॉन क्विक्जोट' न्याय और मनुष्य के आदर्श की खोज पर हास्य है। लेखक बताता है कि मनुष्य के आदर्श की खोज मे प्रतिदिन की यथार्थता कितनी बडी बाधा उपस्थित करती है। वह स्पष्ट करता है कि वास्तविक धन—उत्पादन—के अभाव मे सोने का कोई मूल्य नही रह जाता। उसके अभाव मे मनुष्य को रोटी के एक टुकडे के लिए भी दर दर भटकना पडता है। उस अवस्था मे कुलीन-अकुलीन, सम्पत्तिशाली और सम्पत्ति-हीन, समान रूप से विपन्न जीवन व्यतीत करते है।

'डॉन क्विक्जोट' उपन्यास का प्रधान पात्र क्विसादा है, जिसको बपौती के रूप मे एक जमीदारी मिली है। वह एक नौकरानी और अपनी भतीजी के साथ रहता है। उसका मास सूख गया है, गाल पिचक गये है। वह जीवन की यथार्थता से तग आकर 'नाइटो' की जीवनी पढने मे लग जाता है।

'मेरी बुद्धि विपरीत पडनेवाले अनौचित्य के कारण इतनी कुण्ठित हो गयी है कि मै स्वभावत तुम्हारे सौन्दर्य को दोष देता हूँ।' ऐसे वाक्यो से क्विसादा आनन्द-मग्न हो जाता है। वह अपने हाथ पडनेवाली सभी पुस्तको को पढ जाता है। यहाँ तक कि वह अपनी खेती की जमीन बेचकर उस धन से पुस्तके खरीदना आरम्भ करता है। अपनी खेती सँभालने की जगह वह गॉव के एक शिक्षित पादरी से और एक नाई से लडता है। वह उन लोगो से इस पर विवाद छेड देता है कि इँग्लैण्ड का कौन सा 'नाइट' अच्छा था। इस प्रकार के अध्ययन और विवाद से वह अपनी सपूर्ण बुद्धि खो देता है। वह समझता है कि एक 'नाइट' बनकर ससार मे निकल जाना चाहिए और प्राचीन नाइटो की भॉति कार्य करना चाहिए।

उसने उत्तराधिकार के रूप मे जो एक सैनिक वर्दी प्राप्त की है, उसमे शिरस्त्राण की कमी है, इसलिए वह कागजो को एक साथ लपेटकर शिरस्त्राण बना लेता है। उसकी पुरानी तलवार की मूँठ टूटी हुई है, इसलिए वह अपने हथियार को गोद और रस्सी से किसी प्रकार ठीक कर लेता है। उसका घोडा अस्थि-चर्मावशेष है, पर वह उसे सिकन्दर के घोडे की तरह बहादुर समझता है और उसके नामकरण के लिए चार दिन लगा देता है। अन्त मे वह घोडे का नाम रोजिनात रखना पसन्द करता है। वह स्वयं

अपने क्विसादा नाम से असन्तुष्ट है। उसे स्मरण आ जाता है कि एक पूर्वकालीन नाइट को भी अपने शुष्क नाम से सन्तोष नही था और उसने अपने नाम मे देश और राजा के नामो को जोड लिया था, इसलिए वह भी अपने को 'डॉन क्विक्जोट दे ला माशा' कहता है।

इस प्रकार पूर्ण सजधज के साथ डॉन क्विक्जोट अपनी वीरता दिखाने के लिए निकल पडता है। दिन भर चलने के बाद भी उसे कोई अन्याय नही दिखाई पडा, जिसको दूर कर न्याय की स्थापना करने की आवश्यकता पडे। उसे कोई अजगर नही मिला जिसकी वह हत्या करे, कोई कुमारी नही मिली जिसका सतीत्व सकट मे पडा हो। अन्त मे वह एक होटल मे पहुँचता है। वहाँ एक मनहूस व्यक्ति होटल का मालिक है और उसकी दो वेश्या दासियाँ है। वह उनको अत्यन्त सुन्दर महिलाएँ कहता है जो उस किले (होटल) के द्वार पर हवाखोरी कर रही है। उसमे सहसा यह भावना जागती है कि वास्तव मे वह नाइट नही है, इसलिए वह होटल-वाले को यह अधिकार देता है कि वह उसे नाइट की उपाधि दे। होटल-वाले को पैसे से काम है, वह उसकी बात मानकर वैसा ही करता है।

डॉन क्विक्जोट के सामने शीघ्र ही जीवन की यथार्थता प्रकट होती है। होटलवाला भोजन का बिल प्रस्तुत करता है, लेकिन उसके पास तो फूटी कौडी भी नही है। वह विचार करता है कि उसने पुस्तको मे कही भी नही पढा कि साहस-पूर्ण कृत्यो के लिए प्रयाण करनेवाले नाइटो को कभी धन की आवश्यकता पडती है। होटलवाला उसे विश्वास दिलाता है कि वास्तव मे धन की आवश्यकता पडती है। इस प्रकार उसे ससार के दुर्गुणो का प्रथम पाठ मिलता है।

डॉन क्विक्जोट का एक पडोसी साकोपाजा है। वह ईमानदार है, किन्तु उसकी बुद्धि अत्यन्त मन्द है। डॉन क्विक्जोट उसे अपनी सम्भावित वीरता-पूर्ण विजय की बाते समझाता है और उसे यह प्रलोभन देता है कि उसे सर्वप्रथम अधिकृत द्वीप का गवर्नर बनायेगा। साकोपाजा की स्त्री चिड़चिडे स्वभाव की है। उसका एक खच्चर भी है। वह उत्साह के साथ डॉन क्विक्जोट दे ला माशा के अनुचर के रूप मे उसके साथ चल पडता है।

सर्वेन्टीज इन दोनो के 'करतब' और पराभव का वर्णन करता है। उदाहरण के लिए, मार्ग मे जाते हुए डॉन क्विक्जोट देखता है कि एक किसान अपने बालक नौकर को पीट रहा है। डॉन क्विक्जोट वहाँ पहुँचकर कहता है कि भगवान् के लिए इसे मत मारो। किसान कहता है कि उसे

पीटने का अधिकार है। इस पर डॉन क्विक्जोट उसे भाले से मार डालने की धमकी देता है। किसान अपने अधिकार की बाते करता है। अन्त मे डॉन क्विक्जोट कहता है कि वह आवश्यक धन देकर लडके को मुक्त करेगा। किसान स्वीकार कर लेता है। लेकिन डॉन क्विक्जोट धन लायेगा कहाँ से? वह कहता है कि खोजने पर जब उसे उसका खजाना मिल जायगा तब वह देगा। इतना कहकर वह आगे बढ जाता है और किसान अपने इस अपमान के लिए लड़के की हत्या कर देता है।

सर्वेन्टीज लिखता है—इस प्रकार डॉन क्विक्जोट बच्चो को पीटने के अन्याय को दूर कर देता है।

यह है सर्वेन्टीज की प्रतिभा की विशेषता। 'डॉन नक्विक्जोट' मे मानव दुर्बलताओ का जो यथार्थ चित्रण हुआ है वह विश्व-साहित्य मे अद्वितीय है।

सर्वेन्टीज ने जितनी पुस्तके लिखी, उनमे 'डॉन क्विक्जोट' के बाद 'एक्जेम्प्लेरी नावेल्स' भी महत्त्वपूर्ण रचना समझी जाती है।

---



# टैसो

(१५४४–१५९५ ई०)

इटाली के महान् कवि टैसो का जीवन बडा रहस्यपूर्ण है। उसकी रचना और जीवन से प्रभावित होकर महाकवि गेटे ने उसके जीवन की घटनाओ के आधार पर एक नाटक लिखा था। टैसो इटाली का अन्तिम कवि माना जाता है, जिसकी कीर्ति समस्त योरोप मे फैली हुई है।

टैसो के पिता का नाम बरनेर्डो टैसो और उसका टोरक्यूटो टैसो था। पिता-पुत्र दोनो ही कवि थे। टैसो का पिता डयूक सलेर्नो के दरबार मे था। चार्ल्स पचम द्वारा राज्य रक्षण से विलग कर दिये जाने पर बरनेर्डो टैसो

का कोई अवलम्ब नही रहा। वह बहुत समय तक निराश्रय होकर भटकता रहा। उसके दुर्दिन मे उसका पुत्र भी सदैव उसके साथ था।

आठ वर्ष की अवस्था मे टोरक्यूटो टैसो नेपल्स के एक स्कूल मे शिक्षा ग्रहण करने के लिए जाने लगा। वह बाल्यकाल से ही विलक्षण बुद्धि का था। वह ग्रीक और लैटिन भाषा का अध्ययन करता था । पिता पुत्र की शिक्षा पर सावधानी से दृष्टि रखता था।

बारह वर्ष की अवस्था मे टारक्यूटो की माता का देहान्त हुआ। पिता-पुत्र दोनो ही अनिश्चित स्थिति मे एक स्थान से दूसरे स्थान पर अपनी जीविका के साधन मे भटक रहे थे। माता के वियोग का प्रभाव बालक टोरक्यूटो के मस्तिष्क पर भीषण रूप से पडा।

१५६१ ई० में बर्नेडो टैसो की काव्यकृति 'अमाडिस' प्रकाशित हुई। पिता की इस रचना मे पुत्र टारक्यूटो का भी सहयोग था। वह अपने पिता के दुर्दिन मे उसके साहित्यिक कार्यो मे सहयोग करने मे सदैव तत्पर रहता था।

टारक्यूटो टैसो की प्रतिभा इतनी प्रखर थी कि अट्ठारह वर्ष की अवस्था मे उसने स्वय अपनी मौलिक काव्य-रचना 'रिनाल्डो' प्रस्तुत की। इस रचना के कारण युवक कवि की प्रसिद्धि समस्त इटाली मे फैल गई। तीन वर्षो के पश्चात् पाडुआ विश्वविद्यालय में दर्शन-शास्त्र का अध्ययन समाप्त कर टैसो ईस्टी के कार्डिनल लेविस द्वारा आमत्रित किया गया। उसी को उसने अपनी प्रथम कृति सर्मापित की थी। कार्डिनल लेविस की बहिन लूक्रेटिया के सौन्दर्य से प्रभावित होकर टैसो ने बहुत सी कविताओ की रचना की थी। कार्डिनल लेविस के दरबार मे टैसो को आश्रय मिला। ईस्टी के कार्डिनल के सरक्षण-काल मे ही फेरारा के ड्यूक की दोनो बहिने लूक्रेटिया और लिओनोरा टैसो की कविताओ पर मुग्ध थी। उन दोनो का सौन्दर्य और उनका प्रोत्साहन टैसो की रचनाओ का मूल रहस्य है।

टैसो के युग मे कवि केवल अपने सरक्षक की प्रशसा मे कविता करते थे। राज-परिवार की महिलाओ का सौन्दर्य-वर्णन ही उनका विषय होता था। लिओनोरा ने टैसो को वही प्रेरणा दी जो बियाट्रिस ने दान्ते को दी थी। इस पवित्र प्रेम की छाया मे ही टैसो की महती रचना 'जेरुजेलम लिबरेट' की सृष्टि हुई थी।

१५७१ ई० मे कार्डिनल ईस्टी फ्रास के राजा के यहाँ गया था। टैसो भी अपने सरक्षक के साथ फ्रास के राजदरबार मे उपस्थित हुआ। राजा

नवम चार्ल्स ने टैसो से अनेक प्रश्न किये। उसने पूछा—सबसे प्रसन्न व्यक्ति कौन है? टैसो ने उत्तर दिया—भगवान्। राजा ने पूछा—लेकिन मनुष्यो मे कौन है? टैसो ने कहा—जो भगवान् के समान हो। राजा ने फिर पूछा—मनुष्य कैसे भगवान् के समान हो सकता है? क्या मनुष्यो पर शासन कर अथवा उनका उपकार करने पर।

टैसो ने गम्भीरतापूर्वक उत्तर दिया—अपने धर्माचरण से प्राप्त कर सकता है।

अपनी स्पष्टवादिता से टैसो ने अपने सरक्षक और फ्रास के राजा दोनों को अप्रसन्न किया। टैसो वहाँ से चला आया। इस यात्रा से उसे विशेष लाभ नही हुआ। एक वर्ष पहले वह जिन कपड़ो को धारण कर गया था उसी पोशाक मे वह वापस लौटा था।

रोम पहुँचने पर टैसो को एक सुसवाद यह मिला कि फेरारा के ड्यूक अलफोन्सो ने उसे अपने यहाँ यथेष्ट वेतन पर नियुक्त किया है। ड्यूक के यहाँ टैसो का जीवन सुख से व्यतीत हो रहा था। उसने अपना महान् वीर-काव्य 'जेरुजेलम लिबरेटा' वही पूर्ण किया और एक नाटक 'अमीनटा' ड्यूक की नाट्य-शाला मे खेलने के लिए प्रस्तुत किया। उसके प्रति ड्यूक का आदर और जनता मे उसका सम्मान देखकर ड्यूक के मत्री और कर्मचारी कवि से ईर्ष्या करने लगे।

टैसो की भावुकता और उसके स्वाभिमान ने ऐसा वातावरण उत्पन्न कर दिया कि लोग उसे पागल समझने लगे। अन्त मे वह ड्यूक के यहाँ से भागकर रोम, टूरिन और नेपल्स आदि नगरो मे भ्रमण करता रहा; लेकिन उसकी अभिलाषा यही थी कि फिर वह अपने पूर्वस्थान पर पहुँच जाय। ड्यूक के द्वितीय विवाह के अवसर पर वह फरारा पहुँचा, किन्तु अपने प्रति ड्यूक का उदासीन भाव देखकर उसे मार्मिक आघात पहुँचा। उसका कवि-हृदय उद्दण्ड हो गया। वह भावावेश मे जो मन मे आता कह बैठता। उसे यह शका हुई कि कुछ लोग विष देकर उसका प्राण लेना चहते है।

एक दिन राजमहल मे टैसो ने एक कर्मचारी के ऊपर छुरे से आक्रमण किया। उसने समझा कि वह उसे विष देने के प्रयत्न मे है। इस तरह की अनेक घटनाओ के कारण लोगो की धारणा हो गई थी कि वह पूर्ण रूप से विक्षिप्त हो गया है। ड्यूक को भी विश्वास हो गया था कि टैसो की घृणा उसके लिए हानिकर हो सकती है। इसलिए उसने आज्ञा दी कि टैसो पागलखाने भेज दिया जाय।

पागलखाने मे टैसो का जीवन बडा ही कारुणिक था। वह दिनरात एकान्त मे पडा अपनी असीम वेदनाओ के गान गाना रहा। प्रकृति मौन होकर उसे सुनती रही। कोई भी उसके प्रति सहानुभूति प्रकट करनेवाला नही था। चिकित्सको ने भी उसके प्रति उदासीन भाव ग्रहण कर लिया। वह अपने समीप अन्य विक्षिप्तो का चीत्कार सुनकर उत्तेजित हो उठता था। दो वर्षो तक उस पर तनिक भी ध्यान नही दिया गया। उस समय उसकी लिखी हुई कविताओ मे उसकी स्थिति का बडा मार्मिक वर्णन है। उन कविताओ को पढकर हृदय पिघल उठता है, लेकिन उसके सरक्षक ड्यूक का हृदय पाषाण ही बना रहा।

टैसो को निर्वासन से मुक्त करने के लिए लोगो ने अनेक प्रयत्न किये। उसकी कविताएँ जनप्रिय हो गई थी। जनता कवि को मुक्त देखना चाहती थी। टैसो को कुछ सुविधाएँ मिली। अन्त मे सात वर्ष चार मास के पश्चात् धर्मगुरु पोप के प्रभाव से ड्यूक ने टैसो को स्वतत्र किया।

दरिद्रता और विक्षिप्तता ने मिलकर टैसो को कभी स्थिर नही होने दिया। वह एक स्थान से दूसरे स्थान पर पर्यटन करता रहा। उसकी रचनाओ का इतना प्रभाव पड गया था कि एक प्रसिद्ध डाकू ने उसे सूचना दी थी कि उसके लिए नेपल्स से रोम जानेवाली सड़क सदैव निरापद रहेगी। उसे भयभीत होने का कोई कारण न होगा।

टैसो मानवता की कृपा से वचित होकर एकमात्र भगवान् की दया पर निर्भर करता था। उसका शरीर क्षीण हो गया था। रोगो ने उस पर आक्रमण कर दिया था। ऐसे समय मे इटाली के सबसे बडे कवि-सम्मान की घोषणा हुई। पोप द्वारा राज्य-कवि (पोयट लोरियेट) की उपाधि से उसे विभूषित किये जाने की सूचना मिली। उसके लिए वार्षिक पुरस्कार भी स्वीकृत हुआ।

१५९५ ई० मे टैसो की अस्वस्थता इतनी बढ गई थी कि उसके सम्मान मे जो प्रदर्शन होनेवाला था, उसके लिए शका उपस्थित हो गई। कवि को अपना अन्तिम समय निकट प्रतीत हुआ। वह एक पवित्र मठ मे मृत्यु का आवाहन कर रहा था। उसने अपने मित्र को अपना अन्तिम पत्र लिखा, जिसमे उसकी भावनाएँ प्रकट होती है—मेरी सम्मति मे मेरी मृत्यु के प्रकट होने मे अधिक विलम्ब नही लगेगा। मै अनुरोध करता हूँ कि मेरे जीवन का अन्तिम समय है। मेरे रोगो के लिए कोई भी उपयुक्त

ओषधि नही है। अब वह समय नही है कि अपने दुर्भाग्य और ससार की अनुपकारिता के सम्बन्ध मे मै विलाप करूँ, जिसके कारण एक भिखारी की भाँति मै समाधि की ओर प्रस्थान कर रहा हूँ। जब मै विचार करता था कि यह समूची शती मेरी रचनाओ पर गर्व करेगी तो मुझे विश्वास नही होता था कि मै इस तरह पददलित किया जाऊँगा। मेरे लिए अब ईश्वर से प्रार्थना करो।

टैसो के पागलपन के सम्बन्ध मे अनेक पुस्तके लिखी गई है। अब तक इस विषय पर विद्वानो का अन्वेषण चल रहा है। कुछ चिकित्सको ने अनुसधान द्वारा निर्णय किया है कि जीवन के मध्य मे टैसो पर मोनोमेनिया रोग का आक्रमण हुआ था। समय-समय पर इसका दौरा होता रहा, किन्तु इसके कारण उसकी प्रतिभा और विचारों पर कोई आघात नही हुआ।

टैसो की महान् कृतियो से उसकी विक्षिप्तावस्था का परिचय नही मिलता। कुछ लोगो का विश्वास है कि उसके शत्रु और सरक्षकों ने उसकी ऐसी स्थिति उत्पन्न कर उससे लाभ उठाया था। किन्तु वास्तव मे टैसो का जीवन दु खद घटनाओ, मनुष्य की क्रूरता और दरिद्रता के भयानक आक्रमणो से त्रस्त था। यही कारण था कि जीवनभर वह एक साहसी वीर की भाँति मौन होकर अपनी यत्रणाओ का आलिगन करता रहा।

एक बार टैसो अपनी रचना सुना रहा था। किसी ने धीरे से कहा—ऐसा महापुरुष कैसे पागल समझा जाता है। टैसो ने मुस्कराते हुए कहा—नही मित्र, दार्शनिक सोनिका के निर्णय के अनुसार मनुष्य इस ससार मे केवल दो ही रूपो मे उत्पन्न होता है, राजा अथवा पागल, किन्तु मेरा ऐसा सौभाग्य नही था कि मै पहली स्थिति मे पहुँचता अतएव दूसरे स्थान के लिए मैंने प्रयत्न किया।

जीवन के अन्तिम दिनो मे उसकी शय्या के समीप बैठे हुए एक व्यक्ति ने पूछा—आप अपनी आँखे सदैव बन्द क्यो रखते है ?

टैसो ने उत्तर दिया—सदैव के लिए बन्द करने का अभ्यास कर रहा हूँ।

जब टैसो के कुछ मित्र उसकी अन्तिम अवस्था देखकर अश्रुपात करते हुए कमरे से बाहर जाने लगे तो टैसो ने प्रसन्नतापूर्वक कहा—आप सोचते होगे कि मुझे पीछे छोड जायँगे लेकिन मै आपसे पहले पहुँच जाऊँगा।

और सचमुच टैसो ने अपनी अन्तिम प्रार्थना के शब्दो को गुनगुनाते हुए अपनी जीवन-यात्रा पूर्ण की। उसने अपने सभी शत्रुओ को क्षमा कर दिया था। बड़े सम्मान से उसका शव-सस्कार हुआ। उसका स्मारक बान,

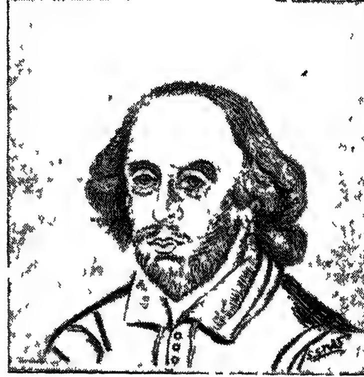
लेकिन वह अपने वार्षिक पुरस्कार का लाभ न उठा सका और असमय मे ही समस्त सम्मानो का तिरस्कार करते हुए, अपनी असीम वेदना की गोद मे बठा हुआ, चल बसा।

टैसो की समस्त कृतियो मे 'जेरुजेलम डेलिवर्ड' का विशेष महत्त्व है। यह वीर-काव्य 'क्रूसेड' (धर्मयुद्ध) की घटनाओ के आधार पर प्रस्तुत किया गया है। कवि की अभिलाषा थी कि होमर और वर्जिल की भाँति वह भी एक महाकाव्य की रचना करे। टैसो की इस महान् रचना का ढाँचा यूनानी रूप मे ही है, किन्तु कथानक और आत्मा क्रिश्चियन है।

टैसो स्वय तलवार चलाने मे निपुण था। वीरता के प्रति उसकी स्वाभाविक प्रेरणा और 'क्रूसेड' के सम्बन्ध मे सभी ऐतिहासिक घटनाओ के अध्ययन ने उसे अपनी इस कृति में पूर्ण सफल किया।

टैसो ने अपने जीवन मे सामर्थ्य से अधिक उच्च प्रेम की आकाक्षा की, इसलिए उसे सदैव हताश ही होना पड़ा। उसे अपने जीवन मे अपवाद और लाछना सहन करनी पडी, लेकिन यह सब लोगो का भ्रम था। वास्तव मे टैसो का चरित्र उज्ज्वल और निर्मल था। टैसो ही योरोप का एक ऐसा दार्शनिक कवि था, जिसने अपनी रचनाओ मे जो आदर्श उपस्थित किया था, उसी के अनुसार अपने चरित्र को भी सुरक्षित और पवित्र रखा था।

---



# शेक्सपीयर

(१५६४–१६१६ ई०)

शेक्सपीयर को जब कसाई के लड़के के रूप मे देखा जाता है, तब मालूम पडता है कि वह साधारण श्रेणी का था, किन्तु वास्तव मे बात यह नही थी। उसका पिता एक धनी व्यक्ति था और अनाज तथा लकडी का व्यवसाय भी करता था। गॉव मे उसका सम्मानित स्थान था।

शेक्सपीयर की शिक्षा स्ट्राटफोर्ड के नि शुल्क स्कूल मे हुई थी। विश्व-विद्यालय मे वह उच्च शिक्षा नही प्राप्त कर सका। स्कूल से निकलकर वह कुछ दिनो तक एक कसाई के साथ काम करता रहा। इसके बाद एक वकील का क्लर्क बना। १८ वर्ष की अवस्था मे एनी हेथवे नाम की युवती से उसका विवाह हुआ था। उसकी पत्नी अवस्था मे आठ वर्ष उससे बड़ी थी। लन्दन मे कार्य आरम्भ करते समय शेक्सपीयर को पहले नाटच-शाला के बाहर घोडो की देख-रेख करने का काम मिला था। इसके बाद वह अभिनेता बनकर मच पर प्रकट हुआ। अभिनेता के रूप में उसे सफलता नही मिली।

शेक्सपीयर की आरम्भिक दो कविताएँ 'बेनस और एडोनिस' १५९३ ई० मे और 'लूक्रेसी' १५९४ ई० मे प्रकाशित हुई। ये कविताएँ उसने अपने मित्र अर्ल आफ साउथएमटन को समर्पित की थी। इन कविताओ का तत्काल ही प्रचार हुआ। १५९३ से १५९६ ई० तक उसने अनेक गीतो की रचना की थी।

आरम्भ मे शेक्सपीयर ने पुराने नाटको को नया रूप देकर मच के उपयुक्त बनाया। कुछ आलोचको का कथन है कि 'टीटस एन्ड्रोनिकस'

और 'हेनरी छठे' के प्रथम भाग इसी कोटि मे आते है। यह निश्चित नही है कि शेक्सपीयर का जीवन नाटककार के रूप मे किस समय से आरम्भ होता है। लेकिन १५८९-९० का काल ही अनुमान किया जाता है। 'लव्स् लेबर्स् लॉस्ट' (१५९०) ही सम्भवत उसका प्रथम मौलिक नाटक है। इस कृति मे उसकी प्रतिभा का प्रभाव जनता के ऊपर पडता है।

शेक्सपीयर की ख्याति फैल गई थी और रानी एलिजाबेथ के सम्मुख कई बार उपस्थित होने का अवसर उसे मिला था। १५९७ ई० तक शेक्सपीयर ने अपने नाटको द्वारा इतना धन उपार्जित कर लिया था कि स्ट्राटफोर्ड मे उसने एक मकान खरीदा। यह मकान उस स्थान मे सबसे बडा था।

शेक्सपीयर की प्रथम ट्रेजिडी 'रोमियो एण्ड जूलियट' १५९५ ई० मे लिखी गई थी। १६०० ई० तक महत्त्वपूर्ण कमेडी 'मच एडू अबाउट नथिग', 'एज यू लाइक इट' और 'ट्वेल्फ्थ नाइट' आदि लिखी गई। शेक्सपीयर की महान् ट्रेजिडी 'मेकबेथ', 'किग लियर', 'ओथेलो' तथा 'एण्टोनियो एण्ड क्लिओपेट्रा' आदि १६१० तक प्रकाशित हो चुकी थी।

१६१० ई० के बाद शेक्सपीयर रगमच छोडकर अपने स्ट्राटफोर्ड के मकान मे रहने लगा था। उसने अपने थियेटर के हिस्से आदि बेच दिये थे और जीवन का अन्तिम समय शान्ति-पूर्वक व्यतीत कर रहा था। उसकी अन्तिम रचना 'टेमपेस्ट' १६१२ ई० मे प्रकाशित हुई थी।

शेक्सपीयर १६१६ ई० मे अपने जन्म-दिवस के दिन ही ससार से बिदा हुआ था।

शेक्सपीयर की रचनाओ को पढते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि उसने अपने नाटको को रगमच पर खेलने के लिए लिखा था, पाठको के पढने के लिए नही। उन दिनो रगमच भावनाओ के प्रदर्शन का वैसा ही साधन था जैसा आजकल उपन्यास है।

शेक्सपीयर ने केवल एक ही रचना 'लव्स् लेबर्स् लॉस्ट' के लिए ही वस्तु-विषय की मौलिक कल्पना की थी। इसके अतिरिक्त उसके सभी नाटक इतिहास, रोमास और दूसरे लेखको की रचनाओ से लिये गये वस्तु-विषय पर ही निर्मित हुए है। उसने आकर्षक और उपयुक्त घटनाओ की खोज कर उन्हे अपनी शैली और प्रतिभा के बल पर अपना बना लिया था। उसने अपने जीवन मे कुल सैतीस नाटक प्रस्तुत किये जिनमे सोलह उसकी मृत्यु के पूर्व प्रकाशित हुए थे। शेष इक्कीस हस्तलिखित ग्रन्थ उसकी मृत्यु के पश्चात् प्रकाशित हुए। शेक्सपीयर के इन हस्तलिखित ग्रन्थो का

महत्त्व इतना बढ गया था कि नीलाम होने पर पन्द्रह हजार पौड उसकी एक प्रति के लिए प्राप्त हुआ। योरोप मे शेक्सपीयर की रचनाओ और उसके जीवन के सम्बन्ध मे जितना अनुसन्धान और अन्वेषण हुआ है उतने का सौभाग्य किसी भी अन्य लेखक को प्राप्त नही हुआ है।

नाटककार, शब्दो के आचार्य और मानव-समाज के सूक्ष्म पर्यवेक्षक के रूप मे शेक्सपीयर इतना महान् है कि उसके सामने उसके सभी समसामयिक नाटककार बौने से लगते है।

शेक्सपीयर के आरम्भिक दिनो मे मारलो और अन्तिम दिनो मे बेन जानसन उसके अन्तरग मित्रो मे थे। शेक्सपीयर अवकाश लेकर जब अपने 'स्ट्राटफोर्ड' मे रहता था, उन दिनो बेन जानसन प्राय उससे भेट करने वहॉ जाया करता था।

योरोपीय साहित्य के इतिहास मे डेढ हजार वर्षो मे केवल शेक्सपीयर और वर्जिल ने अपनी रचनाओ से अगाध सम्पत्ति उपार्जित की थी। वर्जिल को पुरस्कार-स्वरूप सम्पत्ति मिली थी। शेक्सपीयर ने अपनी नाटक-सम्बन्धी प्रतिभा के द्वारा धन एकत्र किया था।

---

# केल्डरन

(१६००–१६८१ ई०)

केल्डरन स्पेन का महान् नाटककार था, जिसका स्थान शेक्सपीयर के बाद माना जाता है। उसने अपने जीवन-काल मे ११८ नाटको की रचना की थी।

केल्डरन का जन्म एक उच्च कुल मे हुआ था। उसका पिता राजकीय खजाने का मत्री था। केल्डरन की शिक्षा की ओर उसने विशेष ध्यान दिया। नौ वर्ष की अवस्था मे वह स्कूल भेजा गया। इसके एक वर्ष बाद उसकी माता का देहान्त हुआ। जब केल्डरन कालेज मे पढ़ता था तब उसके पिता की भी मृत्यु हो गई। वह अपने अध्ययन-काल मे ही नाटक लिखने लगा था। अब उसके सम्मुख परिवार के पोषण का भी प्रश्न था। इस-लिए नाटक लिखकर उसने अपनी आर्थिक समस्या को सरल किया।

१६२५ ई० मे वह सेना मे सम्मिलित हुआ। वह एक कुशल सैनिक था। नाटककार के रूप मे वह प्रसिद्ध हो गया था और जनता मे उसके नाटको का प्रदर्शन विशेष सफल होता था। स्पेन का राजा फिलिप चतुर्थ उसके नाटको पर मुग्ध था, अतएव उसने लेखक को 'आडर-आफ-सान्टिगो' की उपाधि से विभूषित किया। केल्डरन को राजकीय आश्रय मिला।

१६३७ ई० तक केल्डरन के दो दर्जन नाटक प्रकाशित हो चुके थे। इन नाटको द्वारा उसकी ख्याति बढती गई। १६४० ई० मे वह काटालोनियन विद्रोह के विरुद्ध सेना मे कार्य करने लगा, किन्तु राजा ने अपने प्रिय लेखक को शीघ्र ही वापस बुला लिया, क्योकि विद्रोह मे उसका जीवन सुरक्षित नही था।

लेखक का शेष जीवन साहित्य-साधना मे ही व्यतीत हुआ। उसके विचार धार्मिक थे। वह जीवन भर अविवाहित ही रहा। धार्मिक दीक्षा लेकर वह ईश्वर-भक्ति मे लीन रहा। उसने ऐसे धार्मिक नाटको की रचना की जिनके द्वारा जनता मे धर्म के प्रति अपार श्रद्धा उत्पन्न हुई।

८१ वर्ष जीवित रहने के कारण केल्डरन ने स्पेन के शासन का उत्थान और पतन दोनो ही अपनी ऑखो से देखे थे। १६६५ ई० मे राजा फिलिप चतुर्थ के जीवन का अन्त हुआ। उसके पश्चात् १६ वर्षो तक केल्डरन जीवित था।

वेरा टासिस ने केल्डरन का जीवनचरित्र लिखा था। यह जीवनीकार लेखक का समकालीन था, किन्तु अवस्था मे ३७ वर्ष उससे छोटा था; इसलिए केल्डरन के आरम्भिक जीवन पर वह विशेष प्रकाश नही डाल सका।

केल्डरन के जीवनी-लेखक ने लिखा है कि केल्डरन स्वभाव का दयालु और सरल था। उससे बाते कर लोग सन्तुष्ट होकर जाते थे। उसकी परोपकारी मनोवृत्ति थी। उसने कभी किसी लेखक की कटु आलोचना नही की और न किसी से वह ईर्ष्या रखता था। उसका द्वार सदैव अभावग्रस्त लोगो के लिए खुला रहता था।

केल्डरन एक महान् नाटककार था, जिसने इतिहास और घटनाओ पर अपनी उत्कृष्ट रचनाएँ प्रस्तुत की थी; किन्तु स्वय उसके जीवन की घटनाओ का विस्तृत विवरण नही मिलता। यही कारण है कि उसकी जीवनी भी केवल उसकी कृतियों की समालोचना मात्र है; उसमें उसके यथार्थ जीवन का स्पष्ट वर्णन नही है।

केल्डरन की प्रवृत्ति यह थी कि वह किसी भी आकर्षक और प्रभावशाली घटना पर अपना नाटक उपस्थित कर देता था। इतिहास, दर्शन, सामाजिक और धार्मिक विषयो को लेकर उसने बडी कुशलता से अपनी लेखनी का चमत्कार दिखाया है। उसकी रचनाओ मे चरित्र-चित्रण उतना महत्त्व नही रखता जितनी घटनाएँ।

स्पेन के लेखक रोमास लिखने मे योरोप के पथ-प्रदर्शक थे और केल्डरन नाटककारो का आचार्य था।

केल्डरन जिस कथानक को अपने नाटक के लिए चुनता, चाहे यूनानी, अथवा अन्य किसी देश का, उसमे वह स्पेन की राष्ट्रीय भावनाओ को सदैव अकित करता था। इसी लिए उसके नाटक देश मे सबको पसन्द आते थे। उसके नाटको मे कवि की भावुकता सर्वत्र दिखाई पड़ती है।

१६वी और १७वी शती मे खुले मैदान मे नाटक खेले जाते थे। धार्मिक प्रेरणा प्रदान करनेवाले वार्तालाप कई पात्रो द्वारा उपस्थित किये जाते थे। इनका विशेष प्रभाव कविता की स्वच्छन्द धारा मे ही प्रकट होता था।

केल्डरन ने ११८ नाटक और लगभग ७० 'आटोज' अपने जीवन मे लिखे थे। 'आटोज' से उस नाटक का तात्पर्य है जो काव्य-सवाद के रूप मे जनता के उत्सवों पर उपस्थित किया जाता था। आदर्श-मय जीवन और धर्म के प्रति पवित्र मनोवृत्ति धारणा करना ही इनका मूल लक्ष्य होता था।

केल्डरन के नाटको का महत्त्व उस समय योरोप में हुआ, जब गेटे, शिलर और शेली ने उसे स्पेन का अद्वितीय नाटककार घोषित किया। केल्डरन का प्रथम नाटक 'दि डीवाइन फिलोथिया' के नाम लिखा गया था। उसकी अन्तिम कृति 'लिओनिडास एण्ड मारफिसा' है। १६८१ ई० मे अपनी रुग्णावस्था मे ही लेखक ने इस नाटक को पूर्ण किया था। अन्तिम समय तक उसे चेतना बनी रही। एक हस की भाँति गान करते हुए उसके जीवन का अन्त हुआ।

केल्डरन के शव-सस्कार मे तीन हजार मशाले जलाई गई थी। राजा चार्ल्स द्वितीय ने लेखक की मृत्यु पर अश्रुपात किया था। समस्त स्पेन के लोग अपने इस नाटकार के चले जाने पर शोकाकुल हो उठे थे।

---



# मिल्टन

(१६०८–१६७४ ई०)

योरोप के पाँच महाकवियो मे एक मिल्टन भी है। उसने अपने सम्बन्ध मे लिखा है—मै लन्दन के एक अच्छे परिवार मे उत्पन्न हुआ हूँ और मेरा पिता एक सम्मानित व्यक्ति है।

मिल्टन का पिता सगीत-कला का मर्मज्ञ था, इसी लिए बचपन से सगीत और साहित्य के प्रति मिल्टन की रुचि उत्पन्न की गई। सोलह वर्ष की अवस्था मे जब वह कालेज मे पढता था, तब उसके सहपाठी उसे 'दी लेडी' (महिला) कह-कर पुकारते थे। इसका कारण यह था कि उसकी आकृति स्त्रियो जैसी थी।

विद्यार्थी-जीवन मे ही वह अत्यन्त भावपूर्ण कविता करने लगा था। १६३२ ई० मे एम० ए० की डिग्री लेकर वह केम्ब्रिज विश्वविद्यालय से निकला। अन्य शिक्षित युवको की भाँति उसकी रुचि किसी व्यवसाय की ओर नही थी। वह एकमात्र काव्य की साधना मे ही अपना जीवन व्यतीत करना चाहता था। वह अपने पिता की जमीदारी मे रहकर ग्रीक और लैटिन की रचनाओ का अध्ययन करता रहा और पुस्तके खरीदने के लिए कभी लन्दन नगर मे भी चला जाता था। अपने अवकाश के समय कवि प्रकृति का निरूपण करता था।

आरम्भ मे मिल्टन ने लैटिन में दो कविताएँ लिखी। इसके बाद 'कोम्यूस' नामक रचना एक सगीतज्ञ के आग्रह पर एक उत्सव के लिए लिखी गई। इस कविता के साथ कवि के जीवन का एक युग ही समाप्त होता है। देश की स्थिति सकटमय थी। सदैव उत्साह प्रदान करनेवाले उसके भाई का देहान्त हो गया था। अब घर मे वृद्ध पिता के साथ ही

उसका दिन कट रहा था। एकान्त और कार्य की अधिकता मे व्यस्त जीवन उसे थका देता था। तीन वर्ष मे उसने केवल एक कविता 'लीसिडास' लिखी। इस कविता के लिए प्रेरणा उसे अपने एक मित्र की सामुद्रिक मृत्यु से प्राप्त हुई थी।

विद्वानो का कथन है कि उसकी आरम्भिक रचनाएँ ही अग्रेजी के प्रथम श्रेणी के कवियो की पक्ति मे उसे बैठाने के लिए पर्याप्त है।

१६३८ ई० मे मिल्टन इटली भ्रमण करने गया। वहाँ साहित्यिको द्वारा उसका विशेष सम्मान किया गया। उन दिनो इँग्लैड मे गृहयुद्ध चल रहा था। पर्यटन मे छ मास बीते थे। मिल्टन ने विचार किया कि देश मे नागरिक स्वतत्रता के लिए युद्ध कर रहे है और मै अपनी प्रसन्नता के लिए भ्रमण कर रहा हूँ, यह कितना लज्जाजनक है।

इटली से लौटने पर उसे अपने एक मित्र की मृत्यु के कारण दु ख-ग्रस्त होना पडा। 'डामोन' नामक उसकी अन्तिम लैटिन कविता मे अपने उस मित्र के प्रति उसके उद्गार है। मिल्टन लन्दन मे ही रहने लगा और उसके दो भानजो की शिक्षा का भार भी उसके ऊपर था।

मिल्टन का वैवाहिक जीवन सुखी नही था। उसने अपना प्रथम विवाह १६४३ ई० मे मेरी पोवेल नामक १७ वर्ष की युवती से किया था। उसकी पत्नी अपने पिता के घर जाने के बाद फिर उसके यहाँ लौट आना नही चाहती थी। इस सम्बन्ध मे बडा विवाद हुआ और मिल्टन ने तलाक पर बहुत कुछ लिखा। १६४५ ई० मे मेरी पोवेल ने मिल्टन से क्षमा याचना की और मित्रो के आग्रह पर मिल्टन को भी स्वीकार करना पडा। इसके बाद ही उसका पारिवारिक जीवन अत्यन्त कोलाहलमय था। इसका प्रधान कारण यह भी था कि मेरी पोवेल के माता-पिता और आठ भाई-बहिनो ने एक वर्ष तक मिल्टन के साथ ही निवास किया।

१६४७ ई० मे मिल्टन के पिता का देहान्त हुआ।

१६५२ ई० मे चार सन्तानो को जन्म देकर मेरी पोवेल भी चल बसी। मिल्टन ने अपने एक इटली के मित्र को जो पत्र लिखा उससे यही ज्ञात होता है कि उसकी पत्नी ने निरन्तर कोलाहल और अशान्ति का वातावरण उसके लिए प्रस्तुत कर रखा था।

जिस वर्ष मिल्टन की पत्नी का देहान्त हुआ, उसी वर्ष मिल्टन अधा हो गया था। लैटिन की विशेष योग्यता के कारण १६४९ ई० मे कौसिल-आफ-स्टेट के वैदेशिक मत्री के पद पर वह नियुक्त किया गया था। यह कार्य उसने 'रिस्टोरेशन' तक सँभाला।

चार वर्ष के बाद १६५६ ई० मे उसने फिर अपना विवाह किया। पन्द्रह मास बाद उसकी दूसरी पत्नी का भी देहान्त हो गया।

१६५८ ई० मे मिल्टन ने अपना अमर महाकाव्य 'पेरेडाइज लॉस्ट' लिखना आरम्भ किया।

मिल्टन का गद्य अत्यन्त प्रभावशाली होता था। अरेसपगेटिका, प्रेस की स्वतत्रता के पक्ष मे लिखी गई, उसकी महत्त्वपूर्ण रचना है। बीस वर्ष तक मिल्टन की प्रतिभा देश, समाज और शासन के प्रश्नो पर वाद-विवाद के द्वन्द्व मे उलझी हुई थी। बहुत समय से उसके मन मे यह अभिलाषा थी कि वह एक महाकाव्य लिखे। वह आर्थर की कथाओ के आधार पर लिखना चाहता था। अन्त मे 'मानव का पतन' ही उसका एकमात्र लक्ष्य बना और इसी पर 'पेरेडाइज लॉस्ट' की कथा का निर्माण हुआ है।

पेरेडाइज लॉस्ट महाकाव्य का कथाभाग बडा आकर्षक है। प्रथम सर्ग मे प्रारम्भिक कथा के रूप मे मिल्टन अपना उद्देश्य वर्णन करता है। इसी प्रसग मे वह सनातन दैव तथा मनुष्य के प्रति ईश्वर की कृतियो का समर्थन करता है, किन्तु वास्तव मे उसके उद्देश्य की पूर्ति नही हुई। तर्क के प्रज्वलित अग्निकुड मे शैतान पडा हुआ है, अचानक वह अपने गणो को एकत्र करता है। उनसे विचार-विमर्श करने के लिए वह पेन्डिमोनियम नाम के विराट् राजमहल की रचना करता है।

दूसरे सर्ग मे उसकी सभा स्वर्ग पर आक्रमण करने के सम्बन्ध मे विचार-विवेचन करती है। अन्त मे शैतान अकेले सवाद-संग्रह के अभिप्राय से वहाँ जाने के लिए प्रस्तुत होता है।

तीसरे सर्ग मे भगवान् शैतान को पृथ्वी की ओर उडते हुए जाते देखता है। ईश्वर का पुत्र मानव-जाति के लिए उद्धारक बनने की अभिलाषा करता है।

चौथे सर्ग मे इडेन उद्यान का विवरण है। यही पर शैतान ने आदम और हव्वा (ईव) को छिपकर देखा।

पाँचवे और छठे सर्ग मे राफेल शैतान के विषय मे आदम को सावधान करता है और शैतान की प्रारम्भिक कथा सुनाता है।

सातवे मे राफल आदम से सृष्टि-सम्बन्धी कथाएँ कहता है।

आठवे मे आदम पुरुष और स्त्री के पारस्परिक सम्बन्ध मे राफेल से वादविवाद करता है।

नवे सर्ग मे सर्परूपी शैतान ईव को प्रलोभित करता है और ज्ञान-वृक्ष का निषिद्ध फल खाने के लिए प्ररोचित करता है। ईव के दण्ड का भाग लेने के लिए आदम भी उस फल का आस्वादन करता है।

दसवे सर्ग मे पाप और मृत्यु उद्यान मे प्रविष्ट होती है और नरक का पथ सुप्रशस्त करती है ।

ग्यारहवे सर्ग मे ईश्वर का पुत्र पापियो का पक्षपात करते हुए, उनकी मुक्ति के लिए, ईश्वर से बहस करता है। उन पापियो का बहिष्कार करने के लिए माइकेल का आविर्भाव भी उसी उद्यान में होता है और वह मानव-जाति के अन्धकारमय भविष्य का दिग्दर्शन करता है।

अन्तिम सर्ग मे प्रभु ईसा मसीह का आविर्भाव और उनकी मृत्यु, पुनर्जीवन तथा पुनराविर्भाव होता है। इसके पश्चात् आदम और हव्वा (ईव) इडेन उद्यान को छोडते है।

पेरेडाइज लॉस्ट महाकाव्य का कथाभाग अति साधारण-सा है। मिल्टन स्वय कभी भगवान् बनता है, कभी राफेल, कभी शैतान और कभी आदम। ईव का अश उसने कभी नही ग्रहण किया। उसने अपने महाकाव्य मे, अपने जीवन के सम्पूर्ण अनुभव का प्रदर्शन कर, एक अपूर्व जादू का जाल बुना है।

उसके विस्तृत अध्ययन का पता इसी से लगता है कि हैरोडेटस से लेकर ओलस मेकनस तक की रचनाओ का उसे ज्ञान था। भूगोल और ज्योतिष-शास्त्र के अपने युग तक के आविष्कारो से वह पूर्णतया परिचित था।

पेरेडाइज लॉस्ट को पूर्ण करने मे कवि के पॉच वर्ष व्यतीत हुए। पॉच पौड प्रकाशन के समय और पाँच पौड तेरह सौ प्रतियाँ समाप्त होने पर, इस तरह कुल दस पौड उसे मिला था और केवल आठ पौड प्राप्त कर उसकी तीसरी पत्नी ने अपना सर्वाधिकार समाप्त कर दिया था। कुल अठारह पौड ही इतने बड़े महाकाव्य का पुरस्कार था। लेकिन आलोचको का कथन है कि उस युग मे तेरह सौ प्रतियाँ बीस महीने मे बिक जाना ही लेखक की ख्याति का प्रमाण है।

अधा होने पर कवि अपनी पहली पत्नी से उत्पन्न तीन पुत्रियों के सहयोग से कार्य करता था। उसके आदेशानुसार वे कभी पुस्तके पढकर सुनाती अथवा उसके बोले हुए शब्द लिखती रहती। लेकिन दुर्भाग्य से वे भी मिल्टन के प्रति क्रूर थी। ऐसी अवस्था मे वे उसकी अनेक बहुमूल्य पुस्तको को बेंच देती थी। इस स्थिति का अन्त उस समय हुआ जब मिल्टन के एक मित्र के प्रयत्न से तीसरी पत्नी घर मे आई।

१६६३ ई० में मिल्टन का तीसरा विवाह हुआ। इसके पश्चात् उसका जीवन शान्तिपूर्ण दिखाई पडता है। तीसरी पत्नी अवस्था मे उससे तीस वर्ष

छोटी थी, किन्तु भोजन बनाने और घर की व्यवस्था मे वह कुशल थी। अन्तिम समय मे मिल्टन को गठिया का रोग भी था।

१६७१ ई० मे 'पेरेडाइज रीगेन्ड' और 'सेम्पसन एगोनिस्ट्स' दो रचनाएँ प्रकाशित हुई। इस काल मे, ऐसा प्रतीत होता है, कि मिल्टन अपने शत्रुओ के मध्य मे विजयी की भाँति दिखाई पडता है। वह ईश्वर, मनुष्य और अपनी पत्नी से ठगा गया था। केवल कल्पनाओ मे ही उसकी बदले की प्रवृत्ति का प्रदर्शन होता है।

अग्रेजी साहित्य मे शेक्सपीयर के बाद मिल्टन का ही स्थान माना जाता है। लेकिन महाकवि के रूप मे तो वह शेक्सपीयर से भी बडा माना जाना चाहिए, क्योकि उसका महाकाव्य 'पेरेडाइज लॉस्ट' योरोप के पाँच महाकाव्यो मे एक है।

कुछ आलोचकों ने यह प्रमाणित किया है कि उसके महाकाव्य की कथा एक इटालियन लेखक की रचना के आधार पर ही निर्मित हुई थी, लेलिन इन तर्को की भूमि पर भी मिल्टन इतना महान् है कि उसके सम्बन्ध मे कुछ कहना सूर्य को दीपक दिखाने के समान है।

---



# डेनियल डी फो

(१६५९–१७३१ ई०)

डेनियल-डी-फो अग्रेजी पत्रकारिता मे सर्वप्रथम सम्पादकीय लेखक था। आधुनिक सम्पादकीय लेखन-पद्धति का उसी ने एक स्वरूप निर्धारित किया है। पाश्चात्य देशो मे सम्पादन-कला अत्यन्त आश्चर्यजनक और रहस्यपूर्ण प्रणालियो से सचालित होती है। वहाँ सम्पादक प्रजातन्त्र दल

से रिपब्लिकन दल की ओर अथवा रेडिकल से कन्जर्वेटिव दल की ओर भटकते दिखाई पडते है। उनका अपना जो कुछ मन और विश्वास हो, उसकी अवहेलना कर वे अपने सचालक की आज्ञा पालन करने मे तत्पर रहते है।

डी-फो सम्पादको का पथ-प्रदर्शक और आदर्श था। आरम्भ मे ही उसे व्हिग और टोरी दलो के सम्पर्क मे रहने के कारण यह कटु अनुभव हुआ कि शासन के सूत्रधार नीच होते है। अतएव एग्लिकन और डिसेन्टरो मे स्वार्थ, मूर्खता और असहनशीलता की दृष्टि से, कोई अन्तर नही था। इसीलिए नाम मात्र के लिए व्हिग दल मे रहकर वह टोरी मत्रिमडल के विरुद्ध आलोचना कर लेता था और इस प्रकार वह व्हिग समितियो मे रहकर टोरियो के लिए गुप्तचर का काम भी कर लेता था। वह बहुत अच्छा पर्चेबाज था। किसी विवाद-ग्रस्त विषय को छेडकर वह स्वय ही उत्तर-प्रत्युत्तर देता। कभी वह कोई ऐसा पर्चा निकालकर सेना की आलोचना करता और कहता कि यह किसी स्वतन्त्र सरकार के लिए अनुचित है। यदि किसी ने उसके इस तर्क का कोई उत्तर नही दिया तो वह स्वय गुप्त नाम से अपने ही तर्क का उत्तर देता।

कुछ समालोचको का कथन है कि डी-फो का चरित्र सबल नही था। वह राजनीति मे बिना सिद्धान्त के एक पक्ष से दूसरे पक्ष मे चला जाता था। लेकिन वास्तव मे बात यह है कि वह अभावग्रस्त होने के कारण किसी भी पक्ष के लिए सब कुछ लिखने के लिए बाध्य था। उसकी रोटी की समस्या सबसे अधिक महत्त्व की थी। वैसे स्वभावत डी-फो पवित्रतावादी था। वह सत्य के दोनो पक्षो को समझता था और इनमे से एक की भी हत्या होते देख वह क्रूर हो जाता था और उसके विरुद्ध सघर्ष करने के लिए उद्यत हो जाता था।

प्राचीन यूनान के स्पार्टनो के समय से जनता मे अफवाहो मे दिलचस्पी रखने की प्रवृत्ति दिखाई पडती है। ट्राय के राजकुमार और मेनेलाउस की स्त्री के प्रेम की कहानी जनता की चर्चा का अच्छा विषय बन गया था। सुइटोनिवस की जीवनी और प्रोकोपियस का 'गुप्त इतिहास', सीजरों और जस्टिनियन तथा थेओदोरा की चरित्र-भ्रष्टता जनता का पर्याप्त मनोरजन करती रही। इन सब बातो से यही ज्ञात होता है कि जनता दुष्टता, चरित्र-भ्रष्टता, अवैध प्रेम, व्यक्तियो की निराशा और उनकी भावनाओ की तरगो को पढना अधिक पसन्द करती है। इँग्लैण्ड और अमेरिका के

अनेक पत्र-सचालकों ने इसी तरह की अफवाहो को छापकर बहुत बडी सम्पत्ति एकत्र कर ली। फ्रास मे इस प्रकार की पत्रकारिता लुई चौदहवे के काल मे आरम्भ हुई और प्राय उसी समय इॅग्लैण्ड मे भी इसका प्रचार हुआ। डेनियल-डी-फो ने इसे परिष्कृत रूप दिया।

डेनियल-डी-फो एक महान् कलाकार था। जब वह उपन्यासकार बना उस समय उसकी अवस्था काफी हो गई थी। वह रिचार्डसन और फील्डिङ्ग का पथ-प्रदर्शक था और उसी ने उपन्यास को एक मार्ग पर लाकर रखा। इसमे कुछ सन्देह नही कि वह उपन्यास-कला के क्षेत्र मे अपने कुछ विचार लेकर आया था। उसका उपन्यास जीवित रहा, क्योकि वह एक वास्तविक कहानी थी और उसमे ठोस नैतिक शिक्षा थी। डी-फो ने लिखा था कि कहानी गढना बहुत बडा पाप है। यह हृदय मे एक छिद्र कर देने की भॉति है, जिसमे क्रमश. असत्य प्रवेश करता जाता है। इसी लिए उसने अपनी प्रत्येक रचना मे स्पष्ट किया है कि उसने कहानी गढी नही है, उसने उसे तथ्यो के आधार पर लिखा है और उसका उद्देश्य दुराचारियो को परिवर्तित करना और निरपराधो को चेतावनी देना है। उसे साठ वर्ष के भिन्न-भिन्न भाग्यो के अनुभव प्राप्त थे और उसने अन्त मे अपने अनुभवो को कथा का रूप दिया। उसने अपनी जीवन-घटनाओ के विषय मे लिखा था—कोई भी मनुष्य मुझसे अधिक नित्य परिवर्तित होनेवाले भाग्य का शिकार नही हुआ। मै तेरह बार धनी और निर्धन बना।

'मोल फलान्डर्ज' उपन्यास लिखने के पहले डी-फो न्यूगेट जेल मे अठारह महीने तक रह चुका था और चोर, डाकू और दूसरे दुश्चरित्रो के सम्पर्क मे उसके दिन व्यतीत हुए थे। उसने निर्धन जीवन की क्रूरता के सभी अंगों का पूर्ण अध्ययन किया था।

डेनियल-डी-फो के पिता का नाम जेम्स फो था। वह मोमबत्तीदान बनानेवाला कारीगर था। उसकी माता एक निर्धन कुलीन वश की महिला थी। उसके परिवार के लोग आल्वा के ड्यूक के अत्याचार के भय से भागकर इँग्लैण्ड मे जा बसे थे। जब डेनियल ने १६९५ ई० मे अतुल सम्पत्ति एकत्र कर ली, तब उसने अपने नाम के साथ 'डी' जोडा जो कुलीनता का सूचक है।

लन्दन के कई व्यापारियो से सम्बन्ध स्थापित कर वह दो वर्षों के लिए नीदरलेण्ड्स्, जर्मनी, इटली, फ्रास और पुर्तगाल का भ्रमण करता रहा। कमीशन के आधार पर उसे पर्याप्त आय हुई। इस भ्रमण मे ही उसने

अपनी एक पुस्तक की सामग्री एकत्र की थी जो बाद मे 'दी कम्प्लीट इँग्लिश ट्रेड्स्मैन' शीर्षक से प्रकाशित हुई थी।

२३ वर्ष की अवस्था मे डी-फो ने मेरी टल्फे से विवाह किया था। दहेज मे उसे तीन हजार पौड प्राप्त हुआ था। उसने अब स्वय मोजे का एक कारखाना खोल लिया। इसमे उसे सफलता मिली। वह शराब पीकर मस्त रहता। उसे घोडो का शौक था। उसने अनेक घोडे खरीदे। वह जुआ खेलने और घुडदौड मे सम्मिलित होने लगा। इस तरह जितनी सफलता से उसने धन उपार्जित किया था, उतनी ही लापरवाही से उसका दुरुपयोग भी किया।

अन्त मे घोर कठिनाई के कारण डी-फो 'मिन्ट' नाम के एक जिले मे चला गया, जहाँ चोरो और डाकुओ का अड्डा था। वही से उसने पर्चेबाजी आरम्भ की। उसने 'योजनाओ पर एक निबन्ध' शीर्षक से एक पुस्तिका लिखी और व्हिग दलवालो को सुझाव दिया कि किस प्रकार से वे अपनी नीति मे सफल हो सकते है। विलियम और उसके दल को यह पसन्द आया। इसके साथ ही डी-फो की स्त्री और उसके मित्रो ने उसके ऋण-दाताओ से समझौता कर लिया था और डी-फो लन्दन लौटने मे समर्थ हुआ। शीघ्र ही विलियम ने समझ लिया कि आय और व्यापार की सरकारी नीति के लिए डी-फो एक अच्छा सलाहकार सिद्ध होगा। इस प्रकार वह डाकुओ और चोरो के डेरे से निकलकर राजा का व्यक्तिगत सलाहकार बन गया।

१७०२ ई० मे घटनाओ का एक क्रम बँधा जिससे लेखक के रूप मे डी-फो के भविष्य का जीवन-क्रम निश्चित हो गया था। इसी वर्ष उसको ज्ञात हुआ कि जनता सत्य और न्याय नही चाहती—वह स्वार्थी और मूर्ख है। अपना रक्त बहाकर भी कोई जनता को औचित्य, न्याय और मानवता का पाठ नही पढा सकता। उसने तत्कालीन अधिकारियो के विरुद्ध व्यग्य लिखना आरम्भ किया। महारानी आन्न के परराष्ट्र मत्री नोटियम ने इन व्यग्यो को समझ लिया और उसने यह जान लिया कि डी-फो का इससे सम्बन्ध है। परिणाम यह हुआ कि उसने डी-फो को राज्य और धर्म का शत्रु घोषित कर उसकी गिरफ्तारी का आदेश दिया।

डी-फो को 'पिल्लोरी' का दण्ड मिला। यह एक बर्बर दण्ड-पद्धति थी। इस प्रकार का दण्ड पानेवाले व्यक्ति की गर्दन और उसकी दोनो बाहे छेदो मे घुसा दी जाती थी और उससे अपराध स्वीकार कराया जाता था।

यह दण्ड खुले बाजार मे दिया जाता था और हृदयहीन जनता उधर से जाते समय दण्डित व्यक्ति के मुँह पर कीचड और कूडा-कर्कट फेक देती थी। अपराधी जनता के सम्मुख घृणित समझा जाता था।

उन्ही दिनो व्हिगो और साधारण जनता के बीच सघर्ष छिड गया था। जनता डी-फो को अपना मित्र समझने लगी थी । डी-फो की 'पिल्लोरी' पुष्पमालाओ से ढँक जाती थी। लोग आकर उसे शराब दिया करते थे। डी-फो ने 'पिल्लोरी' पर एक हास्यगीत लिखा था। 'पिल्लोरी' की स्तुति जनता गाती और डी-फो की जय मनाती। इस प्रकार दण्ड के तीसरे दिन तक डी-फो की सहानुभूति मे बहुत से प्रदर्शन हुए और अन्तिम दिन सबने प्रसन्नता मे शराब पी और डी-फो की जय-जयकार की ध्वनि गूँज उठी।

डी-फो कुछ समय तक जेल मे रहा। टोरियो ने उसे अपने पक्ष मे लाने का प्रयत्न किया। उन लोगो ने जेल मे ही उससे गुप्त वार्ता आरम्भ की और उसकी स्त्री के पास खर्च के लिए मुद्रा आदि भेजा। अन्त मे समझौता हो गया और जेल से छूटने पर डी-फो ने उन लोगो के खर्च से 'रिव्यू' नामक एक साप्ताहिक पत्र निकाला। इस पत्र मे उसने भिन्न-भिन्न प्रकार के हास्य, व्यग्य और व्यभिचार सम्बन्धी लेख प्रकाशित करना आरम्भ किया। वह सदैव बीच वाले टोरियो की सहायता करता था। केवल इस अर्थ मे कि वह व्हिगो के समर्थन मे कुछ नही लिखता था। वह नैतिक, धार्मिक और ऐसे ही दूसरे विषयो पर उपदेशात्मक लेख छापता रहा और इस प्रकार 'पिल्लोरी' का दण्ड पाये हुए इस अपराधी ने अपने को धार्मिक सिद्ध करना चाहा और वह सफल भी हुआ।

उसके बाद चार वर्षो तक डी-फो ने रोबर्ट हार्ले के हाथ के कठपुतले की भाँति एक शठतापूर्ण जीवन व्यतीत किया। प्रत्यक्षत वह व्हिग या राजनीतिक दलो से ऊपर उठा हुआ अपने को बताता था, किन्तु भीतर से वह टोरियो के गुप्तचर का कार्य करता था। वह अपने घर से बाहर ही रहा करता था, अत उसकी स्त्री, लडका और तीन लडकियाँ, सब उसके विरुद्ध हो गई थी। बाद मे जब वह घर पर ही रहने लगा तब भी उन सबका व्यवहार उसके प्रति उपेक्षापूर्ण ही था। उन दिनो वह पत्रकारिता छोडकर पुस्तके लिखने लगा और धार्मिकता का पाठ पढाने लगा। सम्भवत॰ अपने विगत कृत्यो पर पश्चात्ताप कर प्रायश्चित्त-स्वरूप वह ऐसा लिखने लगा था। कुछ भी हो, जनता अब भी धर्मभीरु थी इसलिए उसकी पुस्तके खूब बिकी।

डी-फो ऋण के भार से दबा हुआ था। उसे ऋणदाता द्वारा कैद कराये जाने का भय त्रस्त किये हुए था। इसी समय कप्तान रोजर्स द्वारा प्रस्तुत एलेक्जेन्डर सेल्कर्क की जहाजी दुर्घटना की सामग्री उसके हाथ पडी और उसे एक अच्छी विषय-वस्तु सूझ गई। इसके बाद 'रोबिन्सन क्रूजो' को लिखकर वह अपने प्रकाशक को छापने के लिए देता गया। उसे फिर से उसका सशोधन करने अथवा पढने तक का अवसर नही मिला। यही कारण है कि कुछ आलोचको का मत है कि 'रोबिन्सन क्रूजो' मे अनेक असगतियाँ और परस्पर विरोधी बाते है।

रोबिन्सन क्रूजो का जीवन और उसके 'साहसपूर्ण कृत्य', जिसमे डी-फो का अपनी प्रकृति के अनुकूल काल्पनिक अनुभव है, अत्यन्त सफल रचना थी। उन दिनो के पाठको को केवल काल्पनिक उपन्यास से विशेष प्रेम नही था। इस उपन्यास की घटनाएँ वास्तविक जीवन से सम्बद्ध जान पडती थी, इसीलिए वे बहुत ही प्रिय हो गई।

'रोबिन्सन क्रूजो' समाचारपत्रो मे छपनेवाली प्रथम लेखमाला थी। आदिम और अद्भुत स्थानो मे भ्रमण करने का सर्वप्रथम वर्णन इसी पुस्तक मे मिलता है। वास्तव मे अग्रेजी का यह पहला महान् उपन्यास है। इसका कारण यह है कि डी-फो अग्रेजी गद्य-लेखको मे सर्वश्रेष्ठ था। वह व्यक्तियो, वस्तुओ और स्थानो का निर्माण करना जानता था। उसके ही समय के सैकडो लेखको ने उसका अनुकरण किया और तब से आज तक अगणित लेखको ने उसी के प्रदर्शित मार्ग पर चलने का प्रयत्न किया है।

डी-फो फ्रेंच, डच, स्पेनिश और इटालियन भाषा धारा-प्रवाह मे बोल सकता था। कथा-साहित्य के सभी सम्भव क्षेत्रो को उसने छान डाला था। उसके लिखे 'मोल फ्लान्डर्स' उपन्यास ने बहुत से यथार्थवादी और रोमानी उपन्यासो की रचना के लिए प्रेरणा दी। जिस तरह रोबिन्सन क्रूजो के चरित्र मे वह अपने को ढाल देता है, उसी भाँति वह 'मोल फ्लान्डर्स' मे भी अपने को ही 'मोल' के चरित्र मे अकन करता है।

कुछ आलोचको का मत है कि 'मोल फ्लान्डर्स' जोला के 'नाना' और फ्लोबेयर के 'मादाम बोवारी' से अधिक यथार्थवादी है। जिस समय फ्रास मे प्रकृतिवाद का आन्दोलन पराकाष्ठा पर पहुँच गया था और जोला इस क्षेत्र मे सम्राट् समझा जाता था, उन्ही दिनो अनातोले फ्रास के आदेशानुसार मार्सेल श्वोब ने 'मोल फ्लान्डर्स' का फ्रेंच भाषा मे अनुवाद किया था। फ्रासीसी समालोचको ने उसे प्रकृतिवादी साहित्य की उच्चतम कृति माना।

डी-फो फ्रासीसियो के बीच इतना सम्मानित हुआ कि उसकी सबसे अच्छी जीवनी पोल दोते नामक फ्रासीसी ने ही लिखी थी।

'रोबिन्सन क्रूजो' के बाद डी-फो ने कप्तान सिगलटन की जीवनी, 'साहसिक कृत्य और डकैती' आदि ग्रन्थ लिखे, किन्तु वे अधिक सफल नही हुए। इसके बाद उसने फ्रेंच और स्पेनिश मे प्रचलित गुण्डो और डाकुओ के जीवन से सम्बन्ध रखनेवाले उपन्यासो को लिखने का प्रयत्न किया। न्यूज गेट जेल और मिन्ट जिले के डाकुओ के ससर्ग मे रहकर उसने जो कुछ अनुभव किया था, उसका उपयोग 'मोल फ्लान्डर्स' मे दिखाई पडता है। इसकी कथा-वस्तु विचारपूर्वक स्थिर की गई थी। यह उपन्यास उसकी दो सवश्रेष्ठ कृतियो मे से एक है।

'मोल फ्लान्डर्स' की कथा-वस्तु ध्यान देने योग्य है —

'मोल' अपने को एक सम्पत्तिशालिनी विधवा बताती है। वह एक ऐसे व्यक्ति से विवाह करती है, जो अपने को एक आयरिश जमीदार कहता है। विवाह होते ही स्त्री को मालूम हो जाता है कि आदमी एक लुटेरा है और आदमी भी जान लेता है कि स्त्री एक भीख माँगनेवाली है। दोनो स्तब्ध हो जाते है। स्त्री को गर्भ रह गया है, वह अपना अन्य विवाह कर लेना चाहती है। फिर एक अपनी चोरी और लूट मे लग जाता है और दूसरी अपना अन्य पति ढूँढने मे लग जाती है।

मोल की उत्पत्ति कितनी रहस्यमय है। एक बार मोल की माँ को चोरी के अपराध मे फाँसी की सजा होनेवाली थी, लेकिन जेलर से सम्बन्ध कर वह गर्भवती हो जाती है और गर्भवती स्त्री को फाँसी देने का नियम नही। मोल इसी सम्बन्ध का परिणाम है।

मोल की माँ अवाञ्छनीय समझी जाती है। वह अमेरिकी उपनिवेशो मे भेज दी जाती है और मोल अनाथालय मे पहुँचा दी जाती है। एक धनी स्त्री उसे अनाथालय से लाकर अपने आश्रय मे रखती है। इस स्त्री के दो पुत्र है। इनमे से एक उससे बलात्कार करता है। दूसरा उसके प्रेम मे बध जाता है। वह मोल से कहता है कि वह उससे विवाह कर ले। सुहागरात मे बडा भाई अपने छोटे भाई को खूब शराब पिला देता है, जिससे उसको यह ज्ञात हो कि मोल का कौमार्यहरण हो चुका है। यह दम्पति पाँच वर्ष तक सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करते है। उसके बाद पति मर जाता है।

मोल पुर्नविवाह करती है। उसका पति ऋण मे डूब जाता है, दण्ड

के भय से वह भाग जाता है। मोल भी अपने पति के ऋण के उत्तर-दायित्व से बचने के लिए अन्यत्र चली जाती है। उसकी भेट वर्जिनिया के एक जमीदार से होती है और वह उसके साथ अमेरिका चली जाती है। वहाँ कुछ वर्षो तक सुखपूर्वक दिन व्यतीत होने के बाद उसे यह मालूम होता है कि उसके पति की माँ उसकी भी माँ है। वह पाप से डरकर अपने पति को छोड देती है और इँग्लैण्ड लौट जाती है। यहाँ वह एक और व्यक्ति की रखेली बनकर छ वर्षो तक रहती है। इसके बाद वह व्यक्ति भी बीमार पड जाता है। उसकी अन्तरात्मा कहती है कि यह उसके पाप का परिणाम था। वह ईश्वर से प्रार्थना करता है कि स्वस्थ होने पर पवित्र जीवन बितायेगा। दुर्भाग्यवश वह स्वस्थ हो जाता है और मोल परित्यक्ता बन जाती है।

मोल फिर उस व्यक्ति से मिलती है, जिसके सम्बन्ध मे ऊपर लिखा गया है कि मोल उसे आयरिश जमीदार समझकर विवाह कर लेती है। जब वे दोनो भी पृथक् हो जाते है तो मोल को गर्भ रह जाता है। वह बच्चे को दूसरे की देख-रेख मे छोड कर दूसरा पति ढूँढने निकलती है। मोल फिर एक बक के क्लर्क से विवाह करती है, लेकिन वह भी शीघ्र ही मर जाता है। अब उसका सौन्दर्य विलीन हो गया था। वह समझती है कि अब वह पुरुषो को आकृष्ट नही कर सकती। वह एक दूकान मे चोरी करना सीख जाती है और अन्त मे एक पेशेवर चोर, वेश्या और ठग बन जाती है। वह चोरी के अपराध मे फाँसी का दण्ड पाती है, किन्तु उसका पति लुटेरा भी जेल पहुँचता है। दोनो को अपने कुकर्मो पर पश्चात्ताप होता है और वे वचनबद्ध होते है कि यदि उनका दण्ड घटाकर निर्वासन मात्र हो जाय तो वे अमेरिका लौटकर सम्मानपूर्ण जीवन व्यतीत करेगे। मुक्त होने पर वे दोनो वर्जिनिया पहुँचते है, और अपनी प्रतिज्ञा पूरी करते है। मोल को अपने नाजायज सम्बन्ध से उत्पन्न पुत्र मिलता है। वे धनी जमीदार बन जाते है। जब मोल का पति मर जाता है तब मोल इँग्लैण्ड लौट जाती है। उस समय उसकी अवस्था सत्तर वर्ष की होती है। वह अपनी कहानी लिखती है, जिससे ससार नैतिकता की शिक्षा प्राप्त कर सके। मोल जो अपने हत्या आदि के कृत्यो का वर्णन करती है वह अत्यन्त रोमाचकारी है। निस्सन्देह यह डी-फो के स्वय बन्दी होने के अनुभव का ही परिणाम था।

डी-फो के अन्तिम दिन रहस्यमय प्रतीत होते है। ऐसा मालूम पड़ता

है कि उसे अपने ऋणदाताओ द्वारा जेल भेजे जाने का भय था। इसी लिए उसने अपनी सारी सम्पत्ति अपने पुत्र के नाम लिख दी थी, किन्तु उसका पुत्र अपनी बहिनो और माता की देखभाल नही करता था। वे सब घोर कष्ट मे पडी थी। उनका पत्र पाकर डी-फो को बडी चिन्ता हुई। वह स्वप्न मे भी अपनी लडकियो और स्त्री को भूख से कष्ट उठाते हुए देखता था।

डेनियल डी-फो अपनी वृद्धावस्था मे नैतिक शिक्षा देने का प्रयत्न करता था। उसने अपने जीवनकाल मे अनेक पुस्तके लिखी। अन्त मे वह अपने जन्मस्थान के ही एक बोर्डिग हाउस के कमरे मे मरा। मृत्यु के समय वह अकेला था।

---



# वाल्टेयर

(१६९४–१७७८ ई०)

१८वी शती मे फ्रास के महान् लेखक वाल्टेयर की रचनाओ से ही फ्रास की राज्यक्रान्ति का जन्म हुआ। इसमे सन्देह नही कि वाल्टेयर का नाम उस समग्र शती को घेरे हुए है।

कारलाइल ने अपनी अमर पुस्तक 'फ्रेच रेवुल्यूशन' मे वाल्टेयर के सम्बन्ध मे दो स्थानो पर लिखा है—फरवरी १७७८ ई० मे बहुत दिनो के बाद वाल्टेयर पेरिस लौटा था। पुष्पो और हारो मे छिपे हुए उसके शरीर भर मे केवल दो आँखे चमक रही थी। फ्रास की जनता श्रद्धा से नत होकर उसके लिए अपनी आँखे बिछाये बैठी थी। फ्रास की अत्यन्त सुन्दरी भी उसके चरणो के नीचे अपने केशो को समर्पित करने के लिए प्रस्तुत हो जाती। सड़को पर भीड उमड़ पड़ी थी। नाट्यगृह मे उसका सम्मान

किया गया। गुलाब के फूलो से वाल्टेयर ढँक गया था। लेकिन ऐसे महान् शिक्षक के शव को भी गुप्त रीति से दफनाना पडा था।

क्रान्ति की विजय होने पर कारलाइल ने लिखा है—यह एक ऐसा अशान्ति का युग था कि मृतक पुरुष की मिट्टी भी कब्र मे शान्ति से नही पडी रह सकती थी। वाल्टेयर की हड्डियाँ कब्र से निकालकर पेरिस मे उसकी दूसरी कब्र के लिए चुराई गई थी। आठ सफेद घोडो से खीची जानेवाली गाडी पर वे हड्डियाँ रखी हुई थी। सैनिक प्रदर्शन और जनता का जलूस अत्यन्त उत्साह से आगे बढ रहा था। उस मध्य रात्रि मे फिर से वह कब्र मे सदैव के लिए दफन हुआ।

वाल्टेयर का जन्म पेरिस के एक उच्च वश मे हुआ था। दस वर्ष की अवस्था मे वह शिक्षा के लिए कालेज मे भेजा गया। बाल्यकाल से ही वह विद्वान् और उच्च वश के लोगो के ससर्ग मे रहने लगा था। बारह वर्ष की अवस्था मे वह कविता करने लगा था। उस समय उसकी कवित सुनकर एक महिला अत्यन्त प्रसन्न हुई थी। उस वृद्धा महिला ने अपनी मृत्यु के पश्चात् दो हजार फ्राक वाल्टेयर के लिए पुस्तके खरीदने को छोडा था। १७ वर्ष की अवस्था मे वाल्टेयर ने कालेज छोडा था। उस समय एक सफल कवि के रूप मे उसकी ख्याति फैल चुकी थी।

वाल्टेयर जब २१ वर्ष का हुआ, उस समय फ्रास के बूढे बादशाह का देहान्त हुआ। देश मे अत्याचार का आतक छा रहा था। धार्मिक अन्ध-विश्वास और धर्म के नाम पर पादरियो का मनमाना कार्य चल रहा था। पादरियो और पुरोहितो द्वारा प्रचारित धर्म का वाल्टेयर विरोधी था। उसने इन धर्म के आचार्यो के प्रति खुलकर अपनी लेखनी का प्रयोग किया। धर्म का विरोध करनेवालो को जेल मे ही स्थान मिलता था। वाल्टेयर को भी जेल जाना पडा।

वाल्टेयर ने जेल मे ही 'हेनरीड' नाम का अपना दुखान्त नाटक लिखना आरम्भ किया। ग्यारह महीने के बाद उसे जेल से छुटकारा मिला। एक दरबारी सामन्त के प्रयत्न से वाल्टेयर शासक के सम्मुख उपस्थित किया गया। उस समय पेरिस मे तूफान उठा था। वाल्टेयर ने आकाश की ओर देखते हुए कहा—अगर वहाँ शासन का उचित प्रबन्ध होता तो स्थिति इतनी भयानक न होती।

वाल्टेयर को उपस्थित करनेवाले व्यक्ति ने कहा—मै श्रीमान् के सम्मुख उस युवक को उपस्थित कर रहा हूँ, जिसे आपने जेल से मुक्त

किया है और जिसे आप फिर जेल भेज सकते है। शासक (रिजेन्ट) इस पर मुस्कराया।

शासक ने वचन दिया कि यदि वाल्टेयर अच्छा व्यवहार करेगा तो उसे राज्य से सहायता प्राप्त होगी।

वाल्टेयर ने धन्यवाद देते हुए कहा—आपने मेरी जीविका की व्यवस्था की। इसके लिए मै आपका आभारी हूँ।

बाद मे शासक ने एक हजार क्राउन और पेंशिन वाल्टेयर को दिया और उसका नाटक राज्यदरबार मे खेला गया।

वाल्टेयर सदैव उच्च वश के ड्यूम और सामन्तो की मडली मे ही रहता था। एक बार एक कुलीन व्यक्ति से उसका झगडा हुआ। इसी घटना के कारण उसे फिर जेल जाना पडा। अन्त मे ६ मास बाद उसे इस शर्त पर मुक्ति मिली कि वह पेरिस छोड देगा।

वाल्टेयर ने अपने निर्वासन के दो वर्ष इँगलैण्ड मे व्यतीत किये। इस काल मे वह इँग्लैण्ड के महान् लेखक शेक्सपीयर, मिल्टन आदि की रचनाओ का अध्ययन करता रहा। इँग्लैण्ड मे भाषण और विचार-स्वातत्र्य का प्रभाव वाल्टेयर पर विशेष रूप से पडा। फ्रास मे इसके विपरीत था। वहाँ कोई भी धर्म अथवा राज्य के विरुद्ध नही बोल सकता था। इँग्लैण्ड मे भी वाल्टेयर का बहुत सम्मान हुआ और विद्वान् और बडे लोगो द्वारा उसका आदर हुआ। वाल्टेयर ने अपने प्रवासकाल मे अनेक महत्त्वपूर्ण रचनाएँ लिखी।

१७२८ ई० मे पेरिस लौटने पर वह अपनी आर्थिक स्थिति सुधारने के प्रयत्न मे लगा। भाग्य से उसे एक लाटरी मे बहुत-सा धन प्राप्त हुआ। उसने अपने पैसो को ऐसे साधन मे लगाया, जिससे उसे निरन्तर लाभ ही होता गया।

देश मे चर्च के नाम पर जो अत्याचार हो रहा था वह उसे असह्य था। एक विख्यात अभिनेत्री को क्रिश्चियन शव-सस्कार नही मिला। अपनी वृत्ति के कारण वह पुरोहितो की दृष्टि मे तुच्छ समझी गई। वाल्टेयर का उससे घनिष्ठ सम्बन्ध था। अतएव इस अन्याय का प्रभाव उस पर विशेष रूप से पडा। परिणाम यह हुआ कि वाल्टेयर चर्च और पुरोहितो का घोर विरोध करने लगा।

१७३४ से १७४९ ई० तक वाल्टेयर का जीवन सिरे नाम के एक विशाल महल मे व्यतीत हुआ। यह महल चेम्पेन नगर मे था। वाल्टेयर अपनी एक प्रेयसी के साथ राजकुमारो की भाँति वहाँ रहता था। उस

समय उसकी वार्षिक आय तीन हजार पौड थी। उसकी रुचि के अनुसार सुख के सभी साधन वहाँ उपस्थित थे।

वाल्टेयर के जीवन की एक घटना यह भी है कि प्रशिया के सम्राट् फ्रेडरिक का उसके प्रति विशेष सम्मान था। वाल्टेयर कई बार सम्राट् से मिल चुका था और एक बार उसके आमत्रण पर उससे मिलने गया भी था। अन्त मे फ्रेडरिक के अनुरोध पर स्थायी रूप से उसके साथ रहना वाल्टेयर ने स्वीकार कर लिया। १७४८ ई० मे मैडम-डी-चाटलेट का देहान्त हुआ। यही वह महिला थी जो १५ वर्ष तक उसकी आराध्य देवी के रूप मे छाया की भाँति प्रतिक्षण उसके साथ थी। उसकी मृत्यु के बाद वाल्टेयर अत्यन्त शोकाकुल होकर अपने जीवन से हताश होकर भटकता रहा।

फ्रेडरिक साहित्य के प्रति रुचि रखता था और स्वय भी कविता करता था। उसे अपनी रचनाओ को प्रकाशित करने की लालसा थी और इसी लिए वाल्टेयर जैसे कुशल कला-मर्मज्ञ द्वारा अपनी रचनाओं का वह सशोधन कराना चाहता था।

वाल्टेयर अब बादशाह के साथ ही महल मे रहता और साथ ही बैठकर भोजन करता। इसमे सन्देह नही कि वाल्टेयर को सब प्रकार का सुख वहाँ प्राप्त था।

दरबार के अनेक उच्च कर्मचारियो को वाल्टेयर के सम्मान के प्रति ईर्ष्या उत्पन्न हुई। कुछ इधर-उधर की बाते फैली। वाल्टेयर धन की लालसा मे सदैव अपने प्रयोग करता रहता था। इसी सम्बन्ध मे एक यहूदी के साथ उसका व्यवसाय चल रहा था। यहूदी ने उसे धोखा दिया। अन्त मे इस घटना का भी जर्मन-सम्राट् पर प्रभाव पडा।

एक दिन लामेट्री नाम के एक डाक्टर ने वाल्टेयर के कानो मे कहा—जर्मन शाह फ्रेडरिक का कहना है कि मै वाल्टेयर को अगले वर्ष भी अपने साथ रखना चाहता हूँ क्योकि सतरे का छिलका फेकने के पहले उसका रस चूस लिया जाता है।

दूसरी ओर जर्मनी के बादशाह से किसी मित्र ने कहा कि एक बार जेनरल मेन्सटीन अपनी एक रचना के सशोधन के लिए वाल्टेयर के पास गया तो उसने उसे उत्तर दिया कि बादशाह ने अपने गन्दे कपड़ो को मेरे पास धोने के लिए भेजा है, तब तक तुम प्रतीक्षा करो।

सदेह और अविश्वास का अकुर दोनो हृदयो मे प्रस्फुटित हो रहा था। अन्त मे वाल्टेयर वहाँ से चला गया।

वाल्टेयर के उग्र स्वभाव का परिचय इस बात से मिलता है कि, वहाँ से हटने पर उसने फ्रेडरिक के नाम जो पत्र लिखा था उसमे उसे 'लूक' नाम से सम्बोधित किया गया था। इस 'लूक' शब्द का अर्थ बहुत समय तक लोग न समझ सके थे। अन्त मे वाल्टेयर के एक सचिव ने इस रहस्य को खोला।

वाल्टेयर जब जिनेवा मे रहता था, उस समय उसने एक बन्दर पाल रखा था, जो मित्र और शत्रु दोनो पर आघात करता था। एक बार उसने वाल्टेयर के पैर मे तीन जगह काटा था। उस बन्दर का नाम वाल्टेयर ने 'लूक' रखा था। इसी लिए कभी-कभी मित्रो से बात करते हुए अथवा पत्रो मे भी वह इस शब्द का प्रयोग करता था। उसने लिखा था—फ्रेडरिक मेरे बन्दर की भाँति है, जो अपनी रक्षा करनेवालो को भी काटता है।

१७५४ ई० मे वाल्टेयर को पेरिस मे रहने की आज्ञा नही मिली, अतएव वह जिनेवा के पास एक सुन्दर भवन मे निवास करने लगा और कुछ ही समय बाद उसने एक जमीदारी खरीदी। वहाँ पर २० वर्ष तक वह शान्ति से अपना जीवत व्यतीत करता रहा। उसने इतनी स्वतन्त्रता-पूर्वक सुखमय जीवन इसके पूर्व कभी नही व्यतीत किया था। इस काल मे उसका यह स्थान जैसे साहित्यिको के लिए तीर्थस्थान बन गया था। गोल्डस्मिथ और गिबन जैसे लेखक भी वाल्टेयर से मिलने उसके यहाँ गये थे।

फरनी नामक स्थान मे वाल्टेयर ने एक नाट्य-शाला का निर्माण कराया था। नाटक देखनेवाले अनेक आमत्रित सज्जनो के लिए उसके यहाँ भोजन का प्रबन्ध भी रहता था। उसके यहाँ आदर-सत्कार के कारण लोग विशेष प्रभावित होते थे। इस समय तक वाल्टेयर की वार्षिक आय सात हजार पौड थी। उसका जीवन वैभवशाली था।

जो लोग यह समझते है कि वाल्टेयर नास्तिक था और धर्म का विरोध करता था, उन्हे यह भी स्मरण रखना चाहिए कि उसने फरनी के एक पुराने टूटे गिरजाघर को गिरवाकर उसे अपने व्यय से बनवाया था। उसने इस गिरजाघर के सम्बन्ध मे लिखा है—ससार मे जितने भी चर्च बने है सब 'सेन्ट' लोगो के नाम पर समर्पित किये गये है, लेकिन इस समस्त विश्व मे मेरा यह चर्च एकमात्र भगवान् के लिए उत्सर्ग किया गया है। मेरी दृष्टि मे सेवको से अधिक स्वामी का महत्त्व है।

१७७८ ई० मे जब वाल्टेयर पेरिस लौटा था, उस समय उसके प्रशसक अपने कन्धे से उसकी कोच उठाकर उसके होटल तक ले गये। सीढियो

पर चढते हुए उसने कहा—आप लोग क्या मुझे गुलाब के पुष्पो मे ही ढँक देना चाहते हैं ?

वाल्टेयर ने अपने जीवन-काल मे २६ दु खान्त नाटको की रचना की थी। इसके अतिरिक्त सुखान्त, ओपेरा, व्यग्य, पद्यबद्ध कहानियाँ, साहित्यिक समीक्षाएँ, गद्यात्मक कहानियाँ, ऐतिहासिक विशाल कृतियाँ, असख्य दार्शनिक लेख, धार्मिक लेख, दर्शन, कोश तथा राजनीतिक लेख लिखे, जिनके कारण समस्त योरोप मे उसकी ख्याति फैल गई थी।

उसके लेख या कृतियाँ स्वतन्त्र विचारो के समर्थन मे रची गई है। गिर्जे की अन्ध रूढियाँ वाल्टेयर को बौद्धिक स्वतन्त्रता की शत्रु जान पडी। विरोध मे लिखे हुए शब्द अमोघ हैं। धार्मिक अन्धानुकरण के कारण जिन अत्याचारो को समाज मे होते हुए उसने देखा उनका खुलकर विरोध किया।

वाल्टेयर की सबसे महान् कृति उसका 'ला हेनरिएड' नामक महाकाव्य है।

नाटककारो मे शेक्सपीयर के बाद उसका नाम लिया जाता है। वाल्टेयर मनोबौद्धिक कार्य करने का अदम्य उत्साह लेकर उत्पन्न हुआ था, अपार क्रोध, घृणा, व्यग्य, जोश, क्रूरता के बावजूद भी उसमे उदारता थी।

उसने बहुत से ऐसे व्यक्तियो की सहायता की और उन्हे दण्ड से मुक्त करा दिया जो सरकार के धर्मोन्माद के शिकार बने थे।

वाल्टेयर की मृत्यु के बाद पेरिस के पादरियो ने उसके शव-सस्कार में सम्मिलित होना अस्वीकार कर दिया। अन्त मे उसका शव पेरिस से चेमपेन नगर भेजा गया, वही पर उसके भतीजे द्वारा उसका अन्तिम सस्कार हुआ। दूसरे दिन बडे पादरी की आज्ञा पहुँची, जिसमे लिखा था कि उसका शव-सस्कार न किया जाय, लेकिन उस समय तक वाल्टेयर मिट्टी की गोद मे विश्राम कर रहा था।

तेरह वर्षो के बाद क्रान्तिकारियो ने उसे अपना पथ-प्रदर्शक घोषित किया और उसकी हड्डिया पेरिस के कब्र मे सम्मान के साथ दफन की गई।

---

# रूसो

(१७१२–१७७८ ई०)

१८वी शताब्दी के फ्रेंच साहित्यकार रूसो का विश्व-साहित्य पर कितना प्रभाव पडा है, यह साहित्य के अध्ययनशील व्यक्तियो से नही छिपा है। रूसो के सम्बन्ध मे पाश्चात्य देशो मे विशेष रूप से छानबीन की गई है। उसके जीवन और रचनाओ पर बहुतेरे अनुसन्धान और मत निश्चित किये गये है।

ससार के समस्त लेखको मे रूसो ने अपने सम्बन्ध मे जितना स्पष्ट और मार्मिक वर्णन किया है, उतना शायद ही अन्य किसी लेखक ने किया हो वह अपने 'कन्फेशन' मे लिखता है—अपने आप अकेला, मै अपने हृदय की भावनाओ को जानता हूँ और मै औरो को भी जानता हूँ। मेरा निर्माण उन लोगो की भाँति नही हुआ है, जिन्हे मैने देखा है। मै दावे से विश्वास करता हूँ कि उनमे से किसी की भी भाँति नही बना हूँ, जो अपना अस्तित्व रखते है। मै उनसे अच्छा नही हूँ तो कम से कम उनसे भिन्न तो हूँ ही। प्रकृति ने उस साँचे को नष्ट करके जिसमे मै बना, बुरा किया या भला किया इसका निश्चय तो तभी होगा जब कि मै पढ लिया जाऊँगा।

अपनी आत्मकहानी मे रूसो फिर लिखता है—कुछ हद तक यद्यपि मै एक मनुष्य के रूप मे उत्पन्न हुआ, फिर भी बहुत दिनो तक मै बच्चा ही रह गया और बहुत हद तक मै अब भी हूँ। मैने जनता मे अपने को कभी भी महान् दिखाने का दम नही भरा। मै जैसा हूँ वैसा ही दिखाने की कोशिश भी मैने की है। मुझे प्रौढावस्था मे जानने के लिए मेरी युवावस्था को पूर्णतया जान लेना नितान्त आवश्यक है।

रूसो का जन्म जिनेवा मे हुआ था। उसके जन्म के बाद ही उसकी माता का देहान्त हो गया था। उसका पालन-पोषण उसकी बुआ ने किया था। उसे अपने पिता का अत्यधिक प्यार प्राप्त था। बचपन मे वह कभी अन्य बालको के साथ सडको पर खेलने नही निकला था। रूसो का पिता एक घडीसाज था, लेकिन उसकी प्रवृत्ति अध्ययन की ओर जीवन भर रही। वह उपन्यास और प्रेमकथाएँ बडे चाव से पढता था; और कभी-कभी अपने पुत्र द्वारा पढवाकर उन्हे सुनता था। निस्सन्देह यह रुचि रूसो को अपने पिता की ओर से प्राप्त हुई थी।

१७२२ ई० मे रूसो का पिता उसे छोडकर जिनेवा से चला गया। रूसो की देख-रेख का भार उसके चाचा के ऊपर पडा। उस समय से रूसो के जीवन मे अशान्ति का जो समावेश हुआ, वह उसके जीवन पर्यन्त बना रहा। उसके चाचा ने उसे एक घडीसाज के निरीक्षण मे छोड दिया। घडीसाज ने रूसो के ऊपर कडा नियंत्रण रखा। इससे वहाँ वे सभी बुराइयाँ आ गईं जो भय के कारण उत्पन्न होती है। सोलह वर्ष की अवस्था मे रूसो वहाँ से निकल भागा।

इसके बाद उसे एनसी नगर में मैडम-डी-वारेन्स के यहाँ शरण मिली। मैडम-डी-वारेन्स एक अत्यन्त निर्भीक, दयालु, प्रसन्न स्वभाव की महिला थी। थोडे ही दिन पूर्व उसने रोमन कैथोलिक धर्म की दीक्षा ली थी। उसके आग्रह से रूसो शिक्षा प्राप्त करने के लिए टचूरिन नगर भेजा गया, जहाँ उसने प्रोटेस्टेण्ट धर्म त्याग दिया और कैथोलिक धर्म की दीक्षा ली। एनसी मे रूसो ने सगीत विद्या का अच्छा अभ्यास किया था। अट्ठारह से बीस वर्ष की अवस्था तक रूसो ने घुमक्कडपन मे ही अपना समय व्यतीत किया। उस समय उसे भूखा, निराश और उद्विग्न रहना पडता था, लेकिन यौवन की लहरो मे वह सदैव निर्द्वन्द्व और प्रसन्न रहता था।

१७३२ ई० मे मैडम-डी-वारेन्स से फिर रूसो की भेट हुई। अब उसने अपना चित्त सगीत, वनस्पति-शास्त्र और आयुर्वेद की ओर लगाया और धीरे-धीरे दर्शन की ओर वह आकृष्ट हुआ। १७३८ ई० तक के बीच मे उसने अपने अध्ययन को आनुक्रमिक स्वरूप दिया। उसने पूरे मनोयोग से साहित्यिक, वैज्ञानिक और दार्शनिक स्वाध्याय का मार्ग प्रशस्त किया।

मैडम-डी-वारेन्स ने रूसो को छोडकर जब कही अन्यत्र अपना प्रेम-सम्बन्ध जोडा तब उन दोनो के सम्बन्ध मे विच्छिन्नता आ गई। १७४१ ई० मे रूसो पेरिस चला गया। वह अपने साथ सगीत पर लिखी हुई हस्त-लिखित प्रति भी लेता गया था, जिसमे सगीत की नवीन पद्धति का निर्माण किया गया था। उसे उसने वैज्ञानिक एकेडमी को दिया। एकेडमी ने इसे न तो नवीन माना और न उसे वाद्ययन्त्रो के उपयुक्त समझा। चौदह महीने एक फ्रासीसी राजदूत के सेक्रेटरी पद पर कार्य करने के बाद रूसो वहाँ से अलग हो गया। बाद मे रूसो के 'ओपेरा' और सुखान्त रचनाओ द्वारा पेरिस मे उसकी प्रतिष्ठा हुई। सैलूनो मे उसका स्वागत हुआ। उन दिनो फ्रास के प्रतिष्ठित लेखक दीदरो, मारमेन्तल और ग्रिम से उसकी घनिष्ठ मैत्री थी। रूसो का प्रेम-सम्बन्ध एक अशिक्षित महिला थेरेस से

हुआ। विवाह के बन्धन मे न पडने के कारण उन दोनो को अपने बच्चो को अस्पताल की देख-रेख मे देना पडा।

१७४९ ई० मे जब रूसो का मित्र दीदरो कैद था, उस समय रूसो उससे मिलने जा रहा था। मार्ग मे उसने एक सूचना पढी, जिसमे लिखा था—'क्या कला और विज्ञान की उन्नति ने नैतिकता को विशुद्ध किया है?' इस विषय पर निबन्ध लिखने मे प्रथम आने वाले को डाइजोन की एकेडमी पुरस्कार देगी। रूसो के मन मे उस विषय पर लिखने की तीव्र उत्कण्ठा हुई। दीदरो के प्रोत्साहन से रूसो ने सभ्यता का विकास लिखा। १७५० ई० मे रूसो को पुरस्कार प्राप्त हुआ। इस लेख का प्रभाव स्वय रूसो पर पडा और उसने अपने जीवन को उत्तरोत्तर सादा और विशुद्ध बनाना आरम्भ किया। अब वह एक चरित्र-सुधारक बन गया।

रूसो ने अपनी दोनो कृतियाँ 'डिस्कोर्स' और 'ला डेविन डी विलेज' राजा को भेट की। इन रचनाओ के कारण वह प्रख्यात हो चुका था। इसके बाद वह अपनी मातृभूमि स्विजरलैण्ड मे आकर रहने लगा। उसने फिर प्रोटेस्टेण्ट धर्म को अपना लिया। १७५४ ई० मे रूसो ने फिर पारितोषिक पाने का प्रयत्न किया और 'मनुष्यो मे असमानता का क्या मूल है और क्या यह प्रकृति का नियम है?' इस कृति पर उसे पारितोषिक नही प्राप्त हुआ। रूसो ही वह व्यक्ति था, जिसने व्यक्तिगत सम्पत्ति को समाज की सारी बुराइयो का मूल बताया था।

स्विजरलैण्ड मे रहते हुए रूसो ने अपनी प्रथम राजनीतिक पुस्तक 'कण्ट्रेट सोशल' प्रस्तुत की थी। १७५६ ई० मे एक महिला की कृपा से रूसो को मोण्टमोरेन्सी के जगल के किनारे एक गृह मिला, जहाँ वह रहने लगा। रूसो प्रकृति का महान् प्रेमी था। वह खेतो और जगलो को देखकर खिल उठता था। अन्त मे उस महिला से झगड़ा होने के कारण उस स्थान से भी उसे हटना पडा।

१७५८ ई० मे रूसो की लिखी पुस्तक 'लेटर दी अलेम्बर्ट' प्रकाशित हुई। इसके बाद १७६१ ई० मे 'ला नौवे दी हेलोइसी', १७६२ ई० मे 'कण्ट्रेट सोशल' और 'एमिली' नामक पुस्तके प्रकाशित हुई।

'एमिली' के प्रकाशित होते ही एक तूफान सा आ गया। इस उपन्यास को राज्य की ओर से जला देने की आज्ञा हुई। इस उपन्यास मे यह दिखलाया गया है कि वास्तव मे मनुष्य समाज द्वारा पतित और घृणित बनता है। लेखक ने स्पष्ट किया है कि किस प्रकार परिस्थिति के अनुकूल

शिक्षा के स्वरूप मे भी परिवर्तन होना चाहिए। बच्चे को सामाजिक बुराइयो से पृथक् रख कर किस प्रकार शिक्षा देनी चाहिए, जिसमे कि प्रकृति का भी प्रमुख योग हो। बिना प्रकृति की सहायता के शिक्षा अधूरी रहती है अथवा सच्ची शिक्षा हो ही नही सकती। शिक्षा के लिए बच्चो को उन्मुक्त छोड देना चाहिए, जिससे सदैव बालक यह पूछता रहे—इससे क्या लाभ है? या इसकी क्या आवश्यकता है? अथवा ऐसा क्यो?

नीति, प्राणिशास्त्र, इतिहास के अध्ययन द्वारा बालक आगे चलकर परिश्रमी, भाव-प्रवण, शान्त, दृढ और साहसी हो जायगा। इस प्रकार शिक्षण का पूरा स्वरूप, बालक के विकास-क्रम के अनुसार, इस पुस्तक मे खीच दिया गया है।

रूसो के प्रति विरोध इतना बढ गया था कि उसे भागकर जेल जाने से मुक्ति मिली। उस समय वाल्टेयर का नाम विश्व-विख्यात हो गया था। रूसो की उससे अनबन हो गई थी। उसने एक कड़ा पत्र वाल्टेयर को भेजा था, इसलिए वह उससे भी सहायता नही लेने गया। पेरिस के बाद जिनेवा से रूसो पर तूफान टूटा। वह भागकर मोशर्स पहुँचा, जहाँ प्रशिया के गवर्नर ने उसे शरण दी। फिर रूसो का विरोध प्रबल वेग से होने लगा। वाल्टेयर ने भी रूसो के विरोध मे एक लेख लिखा और फिर रूसो ने भागकर बिन्नी झील के द्वीप मे शरण ली।

रूसो ने वाल्टेयर के नाम जो पत्र लिखा था, उसका साहित्यिक दृष्टि से विशेष महत्त्व है। अतएव यहाँ उसे दे देना हम आवश्यक समझते है—'महाशय, मै आपसे प्रेम नही करता। आपने मुझे ऐसी चोटे पहुँचाई है, जो मेरी अन्तरात्मा तक पहुँची है। मै सदैव एक शिष्य की भाँति आपसे उत्साह पाने का अभिलाषी था, लेकिन जिनेवा मे अपने आप स्थान पाने के बदले मेरा आवास आपने नष्ट कर दिया। मैने अपने मित्रों के बीच मे आपकी जो प्रशसा की थी, उसके बदले आपने उन मित्रो को मुझसे दूर कर दिया। यह आप ही है, जिसने मेरी अपनी मातृभूमि में मेरा जीवन दुर्वह बना दिया। वह आप ही है, जो मरणोन्मुख व्यक्ति को जो शान्ति मिलनी चाहिए, उसे छीनकर मुझे विदेश मे प्राण-त्याग करने का कारण बनेगे और मै एक नाली मे फेक दिया जाऊँगा। आपके प्रति श्रद्धा का यही एक उपहार पाऊँगा, जब कि आप उन सारी मनचाही श्रद्धा के भाजन बनकर समाधि की ओर चलेगे। सचमुच मै आपसे घृणा करता हूँ, क्योकि आपने यही चाहा। लेकिन मै उस व्यक्ति के समान आपसे घृणा करता हूँ, जो इससे अधिक आपसे प्रेम करने योग्य है, यदि आपने

वैसा चाहा होता। आपके प्रति मेरी सारी भावनाओ मे केवल एक ही भावना जीवित रह गई है और वह है आपके प्रति मनोमोहकता। आपकी महान् प्रतिभा को देखकर कोई उसे अस्वीकार नही कर सकता। वह मनोमोहकता है आपकी रचनाओ के प्रति। यदि मै केवल आपकी मनीषा के प्रति श्रद्धा करता हूँ, तो यह मेरी गलती नही है। उसके प्रति आदर प्रदर्शित करने मे कभी चूकूँगा नही—बिदा महाशय।'

१७६६ ई० के जनवरी महीने मे ह्यूम के प्रोत्साहन से रूसो लदन गया। लदन मे डर्बीशायर के बूटन नामक स्थान पर रहकर उसने अपने कन्फेशन (आत्मकहानी) के पॉच भाग प्रस्तुत किये। कुछ समय बाद ही वह इस निश्चय पर पहुँचा कि केवल वाल्टेयर ही नही, बल्कि सारे ससार ने उसे नष्ट करने का कुचक्र रचा है। फिर रूसो को पलायित होना पडा। अब की बार उसने अपना नाम बदल डाला और इधर-उधर कुछ दिनो भटकने के बाद पेरिस मे आकर रहने लगा। पेरिस मे उसने कन्फेशन को पूर्ण किया। अपनी अशान्ति को सगीत और वनस्पति विज्ञान द्वारा दूर करने का वह प्रयत्न करता रहा।

रूसो का जीवन इतना अशान्तिपूर्ण था कि ससार में कही भी उसे ऐसा स्थान नही दिखाई पडता था, जहाँ वह चैन से अपना जीवन व्यतीत कर सके। कभी-कभी तो उसे केवल चौबीस घण्टो मे उस स्थान से निकल जाने की आज्ञा मिली थी। रूसो ने अपने कन्फेशन मे लिखा है—इस प्रकार अपनी शक्ति और ऋतु की अनुकूलता को देखने की अपेक्षा भी भागकर बिना किसी दूसरे स्थान की शरण लिये मै किसी एक ही स्थान पर आक्रमण से सुरक्षित नही रह सकता था। इन समस्त चिन्तनो ने मुझे फिर उसी विचार पर ला पहुँचाया जिसमे मै अभी-अभी उलझा हुआ था। मै यह चाहने और निश्चय करने को बाध्य हुआ कि एक आवारे की भाँति निरन्तर एक स्थान से खदेडा जाकर दूसरे पर जाने और इस प्रकार धरातल पर भटकने की अपेक्षा आजीवन जेलवास चुन लूँ।

रूसो ने जिस सचाई और ईमानदारी के साथ अपना आत्मचरित्र उपस्थित किया ह, वह अवर्णनीय है। यह एक ऐसे व्यक्ति का चरित्र है, जिसे समाज ने ठुकराया और प्रकृति ने अपने शान्तिमय अञ्चल की छाया प्रदान की। उसकी लेखनी का प्रभाव पाठक पर जादू का प्रभाव डालता है। भले ही इस कृति मे रूसो एक भविष्यद्रष्टा न हो, जैसा कि अपनी अन्य कृतियो मे वह रहा, फिर भी इस रचना मे वह एक जादूगर के रूप मे अवश्य है।

रूसो का प्रभाव-क्षेत्र सीमित नही किया जा सकता। उसने धार्मिक क्षेत्र मे भी परिवर्तन उपस्थित किया और नैतिकता का भी पाठ पढाया। उसने कल्पना को स्वतन्त्र किया। उसने बाह्य प्रकृति से शान्ति और सान्त्वना प्राप्त की और उसे एक नये साँचे मे ढालकर मानव-समाज के सम्मुख उपस्थित किया। इसमे तनिक भी सन्देह नही कि उसने फ्रेंच भाषा के गद्य को रञ्जन शक्ति और अभिव्यञ्जना शक्ति से परिपूर्ण कर दिया। उसने कला के पुराने आदर्श को फेककर नवीन आदर्श स्थापित किया।

जीवन के पिछले पहर मे रूसो ने अपने को एक महान् लेखक सिद्ध कर दिखाया। उसकी आत्मकथात्मक कृतियो मे उसके विचारो और उदात्त भावनाओ की झाँकी बराबर देखने को मिलती है। उस महापुरुष को प्रकृति ने प्रसन्न और लोकोपकारक बनाया, किन्तु मानव समाज ने उसे विपन्न और बुरा बनाकर छोडा। यही कारण था कि अपने जीवन मे प्राय सभी मित्रो से उसका झगड़ा हुआ था।

रूसो ने अपनी रचनाओ मे तत्कालीन समाज की बुराइयों, आडम्बरों, बेईमानियो, विलास, झूठे दिखावो और ढोगो के विरुद्ध क्रान्ति की ज्वाला जगाई है। उसने तत्कालीन पतित और नीच समाज को विनष्ट कर नव-निर्माण का सदेश दिया है। अपने 'कण्ट्रैट सोशल' मे उसने दिखाया है कि किस प्रकार आजादी और सरकार दोनो अपने-अपने स्थान पर पारस्परिक प्रेमसूत्र मे बँधकर रह सकती है। उसने बताया है कि किस प्रकार समाज के नवनिर्माण द्वारा मनुष्य और प्रकृति एक दूसरे के विकास मे सहायक हो सकते है। रूसो का कहना है कि मनुष्य स्वतन्त्र पैदा हुआ है; किन्तु चारो ओर वह बन्धनो से जकडा हुआ है। फिर भी सामाजिक व्यवस्था को वह लोकोपकारी मानता है। उसने बताया है कि किस प्रकार समाज के नियमो को मानते हुए भी मनुष्य पुनः अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकता है।

रूसो ने अपने 'बोलोन्ते जेनरल' मे समाज और व्यक्ति के पारस्परिक सम्बन्धो पर खुले हृदय से विचार किया है। इसमे सभी जनो की समानता का समर्थन किया गया है।

'ला नौवेली हेलोसी' रूसो की एक रोमाटिक कृति है। इसमे पारि-वारिक तरीको के विशुद्धीकरण पर जोर दिया गया है। रूसो ने अपनी इस कथाकृति मे भावुकता को नैतिकता का पाठ पढाया है।

रूसो वास्तव मे आदर्शवादी था। यह आदर्शवाद उसकी उस भावुकता पर आधारित था, जो उसकी कल्पना और चिन्तना का परिणाम थी।

यही कारण था कि वह निर्वैयक्तिक विचारक नही था। वह हृदय का उदार था; किन्तु आशकाओ से भरा हुआ था। उसमे अभिमान की प्रचुर मात्रा विद्यमान थी। वह कल्पना-लोक मे डूबा हुआ आशा की किरणो को देखता रहता, किन्तु जब वास्तविक जगत् पर उसकी दृष्टि पडी तो ससार उसे नीचता से भरा दिखाई पडा। वह स्वतन्त्रा का समर्थक और अत्याचारो का घोर विरोधी था। वह एक स्वच्छन्द विचारक और भावना-प्रवण दार्शनिक था। इसी लिए वह अपने समसामयिक विचारको और दार्शनिको की पक्ति से एकदम पृथक् खडा दिखाई पडता है।

कन्फेशन मे एक स्थान पर वह लिखता है—यदि मै किसी और की भाँति होता, यदि मुझमे भी अपनी सराय मे उधार माँगने और कर्ज लेने की कला होती, तो मै आसानी से अपनी कठिनाइयो से त्राण पा जाता। लेकिन ऐसे विषयो मे मेरा अभिमान मेरी असमर्थता से होड लेता था। मैने प्राय अपना समस्त जीवन कठिन परिस्थितियो मे बिताया और कभी-कभी तो मुझे बिल्कुल ही रोटी तक नही मिल पाती थी तो भी एक बार भी ऐसा अवसर मेरे सामने नही आया कि कोई ऋण देनेवाला मुझसे पैसे माँगे और तुरत ही न पा गया हो। मैने कभी भी तुच्छ ऋण मे अपने को नही फँसाया और ऋण लेने के बजाय कष्ट उठाना पसन्द किया।



# गेटे

(१७४९–१८३२ ई०)



योरोप के महाकवियो मे होमर, वर्जिल और दान्ते के बाद जर्मनी के महाकवि गेटे का स्थान माना जाता है।

गेटे एक प्रतिष्ठित और सम्पन्न कुल मे उत्पन्न हुआ था। उसका पिता कौन्सिलर था। उसकी माता दयालु और धार्मिक मनोवृत्ति की महिला थी। माता और पिता दोनो का ध्यान बालको की शिक्षा की ओर था। माँ की प्रेरणा के कारण गेटे और उसकी बहिन दोनो बचपन मे ही नियमित रूप से प्रतिदिन ईश्वर की वन्दना करते। पिता स्वय उन्हे शिक्षा देता। वह अत्यन्त सावधानी से गेटे की रुचि कला और साहित्य की ओर प्रवृत्त करता।

गेटे सात वर्ष की अवस्था मे जर्मन भाषा के वाक्यो को लैटिन मे अनुवादित कर लेता था। वह बडी उत्सुकता से अपनी माता से कहानियाँ सुनता था। इन कहानियो द्वारा वह एक नवीन कल्पना-लोक मे भ्रमण करने लगता। उसका कवि-हृदय जागरित हुआ। वह अपने कमरे के सामने अगूर के बाग को देखता। प्राकृत दृश्यो से आकर्षित होकर वह तन्मय हो जाता था। वह अपने पिता के साथ अगूर के बगीचे मे जाता और अगूर के गुच्छो को एकत्र करता।

कला मे उसकी रुचि बडी छोटी अवस्था मे विकसित हो रही थी। वह मोम की मूर्तियाँ बनाता था। पिता के निजी पुस्तकालय से वह प्राचीन कवियो की कृतियो का अध्ययन करता था। पिता के विचारो का बालक पर विशेष प्रभाव पडा था। वह प्राय· अपने पिता के वाक्यो मे ही उत्तर देता था। जैसे—ईश्वर भली भाँति जानता है कि दुर्घटनाएँ एक शक्तिशाली आत्मा की कुछ हानि नही कर सकती है।

गेटे अपनी कक्षा मे सुन्दर लिपि लिखने मे सर्वप्रथम आया था। सयोग से एक कुशल चित्रकार उसके मकान मे रहने लगा। गेटे उसके समीप बैठकर देखता था। वह प्रश्न पूछता और चित्रकार प्रसन्नतापूर्वक उसे सन्तुष्ट करता। इस तरह गेटे की जिज्ञासा बढती ही गई और कुछ समय बाद वह स्वय अपनी चित्रित रेखाओ की रगामेजी मे प्रसन्नता अनुभव करने लगा।

गेटे के पिता ने अपने पुत्र के लिए सभी साधन प्रस्तुत कर दिये थे। एक सुन्दर भवन का शिलान्यास स्वय गेटे के नन्हे हाथो से हुआ था। कुलीन, राज्यकर्मचारी, कलाकार और साहित्यिको के ससर्ग मे सदैव रहने के कारण बालक गेटे की प्रतिभा प्रखर होती गई।

कविता करना और चित्र बनाना यही गेटे का व्यसन हो गया था। १६ वर्ष की अवस्था मे एक बार मानसिक उद्विग्नता के कारण उसने अपनी सभी आरम्भिक रचनाओ को जला डाला था। उन दिनो गिरजाघर की सभी प्रार्थनाओ से वह विमुख हो गया था।

गेटे के पिता ने उसे कानून की शिक्षा के लिए भेजा, लेकिन उस ओर उसकी रुचि नही थी। साहित्य-साधना ही उसका एकमात्र ध्येय था। वह जर्मन, फ्रेच, इटालियन और अग्रेजी भाषा मे कविताएँ लिखकर अपने मित्रो के पास भेजता था। वह सदैव अपनी अवस्था से बड़े लोगो का साथ करता था। इसलिए वह उनके अनुभवो से लाभ उठाता था। उसकी धारणा थी कि कालेज की शिक्षा से बडे कलाकारो का निवासस्थान उसके लिए अधिक ग्रहणीय है।

युवावस्था की भावनाएँ, प्रेम के अनन्त डोर मे बँधकर, फिर कवि के हृदय मे गुनगुनाने लगी। वह फिर कविता की साधना मे लीन हुआ। विचार परिपक्व हो रहे थे। जीवन के प्रति एक नवीन दर्शन का स्वरूप खडा हुआ।

नाटको के प्रति उसका स्वाभाविक अनुराग था। बाल्यावस्था मे कठपुतलियो का खेल देखकर कौतूहल प्रकट करनेवाली बुद्धि का विकास हुआ। वह घरेलू नाटक अभिनय मे स्वय अभिनेता बनता। सम्पूर्ण खेल का निरीक्षण करता। नाट्यशाला मे नाटको का प्रदर्शन देखकर उन पर अपना मत प्रकट करता। अब स्वय नाटक प्रस्तुत करने की उसकी कामना हुई। उसने एक नाटक की रचना की।

१७७३ ई० मे गेटे अपनी शिक्षा समाप्त कर वकालत करने लगा। पिता की आन्तरिक अभिलाषा पूर्ण हुई। अनेक सफलताएँ प्राप्त होने पर भी गेटे अपनी वृत्ति से सन्तुष्ट नही था। वह उस ओर से अपने को मुक्त

करना चाहता था। साहित्य-ससार मे उसकी ख्याति 'गोट्ज' नामक नाटक से आरम्भ हुई। उसके इस नाटक का खूब प्रचार हुआ। प्रथम सस्करण समाप्त होने पर दूसरा सस्करण प्रकाशित हुआ। लेखक उत्साहित होकर एक उपन्यास लिखने लगा। वह समाज और मित्रो से अलग होकर एक बन्द कमरे मे लिखने मे व्यस्त था।

गेटे के जीवन मे अगणित प्रेम-कहानियाँ भरी पडी है। यौवन के दिनो मे प्रेम के आघात-प्रतिघातो ने उसे विक्षिप्त बना दिया था। एक रात्रि मे शय्या पर विश्राम करते समय एक छुरे से वह अपनी जीवन-लीला का अन्त कर देना चाहता था। अन्त मे विचारो ने उसे शान्त किया।

गेटे ने 'वेर्टेर' उपन्यास के प्रथम खण्ड मे अपनी असफल प्रेम-कहानी का चित्रण किया है। दूसरे खण्ड मे 'जेरुजेलम' नाम के एक युवक के जीवन की वास्तविक घटनाएँ है जिनका अन्त आत्महत्या द्वारा हुआ था। इस युवक से गेटे का परिचय हुआ था। उसी समय उसकी गम्भीर आकृति देखकर उसकी मानसिक विकलता का उसने अनुमान कर लिया था। वह स्वय अपनी स्थिति से उसकी तुलना करने लगा था। जेरुजेलम मित्रो से अलग रहकर एकान्त स्थान मे बैठा दिखाई पडता। मार्ग मे गेटे से जब उसकी भेट होती तो दोनो दिल खोलकर बाते करते। गेटे ने उसके चरित्र को बडे स्वाभाविक रूप मे अपने उपन्यास मे उपस्थित किया है।

जेरुजेलम की आत्महत्या का समाचार पढकर गेटे ने अपने उपन्यास का अन्त भी वैसे ही किया।

१८वी शती के असफल प्रेमियो के सम्मुख आत्महत्या ही एकमात्र प्रयोग था। गेटे के इस उपन्यास ने ससार मे कितने युवक-युवतियो को आत्म-हत्या की ओर अग्रसर किया, इसका अनुमान करना कठिन है।

'वेर्टेर' उपन्यास का शीघ्रता से प्रचार हुआ। कुछ आलोचको ने इसका तीव्र विरोध किया। इसके दूसरे संस्करण मे स्वय लेखक ने स्पष्ट किया है कि इस उपन्यास के पात्र का उदाहरण रखकर पाठक स्वय कदापि न चले।

१७७४ ई० मे 'वेर्टेर' प्रकाशित हुआ था। लेखक ने अनेक पुस्तके लिख डाली थी। इस समय तक फास्ट के कई अंक लेखक ने लिख लिये थे, किन्तु उस समय उसकी पुस्तको को प्रकाशित करनेवाला कोई प्रकाशक नही दिखाई पडता था। गेटे ने अपने पैसो से अपना नाटक 'गोट्ज' छपाया था। उसके सम्मुख अर्थाभाव का भी प्रश्न प्राय. रहता था।

गेटे के भाग्य की रेखाएँ उज्ज्वल हो उठी। वेईमार के ड्यूक कार्ल

अगस्त से उसका परिचय हुआ। घनिष्ठता बढती गई। अन्त मे गेटे कौन्सिलर नियुक्त हुआ। अब वह शासन की व्यवस्था मे व्यस्त हुआ। उसने बडी योग्यता से शासन-प्रबन्ध किया। उसकी ख्याति निरन्तर बढती ही गई। वह अपने अवकाश के समय बराबर साहित्य-निर्माण मे तत्पर रहा।

कार्ल अगस्त ने गेटे को स्वतन्त्रतापूर्वक कार्य करने की सुविधा प्रदान की थी। वह अपनी इच्छानुसार सब कार्य करता था। कभी वह चाँदी की खान का सचालन करता, कभी पुस्तकालयो की स्थापना मे व्यस्त रहता। कभी ड्यूक के लिए नवीन विशाल भवन बनवाने मे उलझा रहता। शासन के जिस विभाग मे शिथिलता दिखाई पडती ड्यूक गेटे को उसका भार सौप देता था। गेटे जिस कार्य को लेता, उसे अपनी विलक्षण प्रतिभा से, बडी निपुणता से सचालित करता।

गेटे का समस्त जीवन राजा, राजकुमार और सामन्तो से घिरा हुआ था। रानियो, राजकुमारियो और महिलाओ के मध्य मे वह सदैव प्रसन्नता अनुभव करता और कुछ ही समय मे उनका अत्यन्त प्रियपात्र बन जाता था।

गेटे के समस्त जीवन मे मित्रता और प्रेम की निर्मल धारा बहती दिखाई पडती है। वह अपने साहित्यिक मित्रो के प्रति उदार और निष्कपट रहा। उसकी रुचि कला के सभी अगो की ओर थी। अवस्था ढलने पर चित्र-कला का पूर्ण अध्ययन करने के लिए वह रोम गया था। अपने जीवन मे अनेक बार गेटे ने इटाली और स्विजरलैड का भ्रमण किया था। उसकी रचनाओ मे प्राकृतिक दृश्यो का अपूर्व सौन्दर्यमय चित्रण है।

१८०६ ई० मे अपने अगणित प्रेम-सम्बन्धो के पश्चात् गेटे ने क्रिश्चियाना बुल्पस से अपना विवाह किया। उसी से इसका पुत्र आगस्ट उत्पन्न हुआ था। इस विवाह से वह समाज और मित्रो के व्यग्य का कारण बना, किन्तु उसने बडी धीरता से अपने कर्तव्य का पालन किया था। उस समय गेटे कीर्ति और यश के शिखर पर था।

युवावस्था मे आरम्भ किया हुआ 'फास्ट' का प्रथम भाग १८०८ ई० मे प्रकाशित हुआ। गेटे को विश्वास था कि उसकी समस्त रचनाओ मे फास्ट ही उसकी सर्वोत्तम कृति होगी। यही कारण था कि भावनाओ के सुन्दरतम क्षणो मे वह उसकी रचना करता था।

फास्ट की प्रस्तावना मे पहले स्वर्ग का दृश्य दिखलाया जाता है। वहाँ से मृत्युलोक का दृश्य सामने आता है। मानव का जीवन ईश्वर और शैतान दोनो देखते है। इसके पश्चात् मानव का किस रूप मे विकास

होगा, इसका वर्णन होता है। मेफिस्टोफेलस यद्यपि निराशावादी है, फिर भी उसकी निराशा उसकी चातुरी और हँसोडपन से कुछ सरल हो जाती है। वह कहता है कि बहुत दिन हुए ईश्वर हँसना भूल चुका है। फास्ट के स्वभाव की अशान्ति पहले दिखाई गई है। ईश्वर कहता है कि जब तक मानव कठिनाइयो से युद्ध करता रहेगा, तब तक कुमार्ग पर चलने का खतरा जरूर उत्पन्न किया जाता रहेगा। प्रस्तावना का यह कथोपकथन कुछ समय तक नास्तिकतापूर्ण समझा जाता रहा।

प्रथम दृश्य में फास्ट अपने कमरे मे दिखाई पडता है। वह विज्ञान की दुर्बलता से चिन्तित है, फिर वह जादू की ओर आर्काषत होता है। जब जादू भी उसे शान्ति और चैन नही दे पाता तब वह निराश होकर मानव-जीवन के दुखो और कष्टो पर विलाप करता है। उसे नश्वरता के भीतर बन्दी आत्मा के भार का अनुभव होता है।

फास्ट आनन्द प्राप्त करने के बदले मे अपनी आत्मा को मेफिस्टोफेलस को अर्पित कर देता है। वह अपने विज्ञान-ज्ञान को विफल देखता है। फिर वह जादूगरनियो के रसोईघर मे जाकर वासना और व्यभिचार मे निमग्न हो जाता है। बाद मे मार्गरेट नाम की एक लडकी उसे मिलती है। उसके वास्तविक प्रेम मे पडकर उसका जीवन एक निश्चित मार्ग पर आ लगता है। यह प्रेम अधिक दिनो तक चलता है और फास्ट को सच्चे प्रेम की अनुभूति प्रदान करता है। मार्गरेट का सयोग मानो फास्ट के लिए ईश्वरीय मिलन सिद्ध हुआ। अन्त मे मार्गरेट का देहान्त हो जाता है। इसके पश्चात् फास्ट का विलाप, एक हृदय को प्रकम्पित करनेवाले दृश्य मे, सामने उपस्थित होता है। इस विलाप को विभिन्न समालोचको ने बहुत बडा आध्यात्मिक महत्त्व प्रदान किया है। फास्ट के प्रथम भाग की कथा का यही साराश है।

गेटे का कवि-हृदय बडा कोमल था। १८०५ ई० मे अपने अभिन्न मित्र शिलर की मृत्यु पर गेटे फूट-फूटकर रोने लगा। उसकी सिसकियाँ बँध गई थी और कई दिनो तक वह मौन और व्यथित रहा। शिलर जर्मनी का महान् कवि था। १७९४ ई० में गेटे से उसकी मित्रता हुई थी। तब से बराबर दोनो मिलकर साहित्यिक कार्य करते रहे। शिलर गेटे को सदैव उत्साहित करता रहा। उसने गेटे के एक अधूरे रूपक को भी पूर्ण किया था।

१८०८ ई० मे सम्राट् नेपोलियन से गेटे की भेट हुई थी। नेपोलियन ने बड़े आदर से कवि से बाते की। उसने वेर्टेर उपन्यास मे असफल प्रेमी

की आत्महत्या को अस्वाभाविक बतलाया। उन दिनो प्रचलित दुःखान्त नाटको मे भाग्य-चक्र का जो सूत्र बँधा था, उसके सम्बन्ध मे पूछते हुए नेपोलियन ने कहा—राज्यशासन-पद्धति ही भाग्य है।

सध्या समय नाटक देखने के पश्चात् नेपोलियन ने गेटे से कई बार बाते की। उसने प्रसन्नतापूर्वक गेटे से कहा कि यदि सीजर की हत्या न की गई होती तो मानवता के भाग्य की कितनी उन्नति हुई होती? इस कथानक पर आप अपनी रचना प्रस्तुत कीजिए।

गेटे ने सम्राट् को विदित किया कि युवावस्था मे यह कथानक उसके मस्तिष्क मे मँडरा रहा था।

नेपोलियन ने गेटे से सम्मानपूर्वक आग्रह किया कि वह पेरिस मे आकर इस सम्बन्ध मे सामग्री एकत्र करे।

एक सप्ताह बाद नेपोलियन ने गेटे को फ्रास की अत्यन्त सम्मानित उपाधि 'लेजेन आफ आनर्स' प्रदान की। रूस का सम्राट् अलिक्जेण्डर जब वेईमार आया तब गेटे की विद्वत्ता पर मुग्ध होकर उसने भी 'आर्डर आफ सेण्ट ऐनी' से गेटे को विभूषित किया।

१८१६ ई० मे गेटे की पत्नी का देहान्त हुआ। गेटे की भावुकता का परिचय इसी से मिलता है कि वह अपनी पत्नी की शय्या के समीप बैठा हुआ बिलखकर रो रहा था और कह रहा था—नही, ऐसा कदापि नही हो सकता कि तुम मुझे छोडकर चली जाओ। अन्तिम समय मे जब उसने उसके मस्तक पर हाथ फेरा, उस समय उसकी आँखे खुल गई थी, किन्तु वह बोल नही सकती थी।

गेटे के पुत्र का विवाह हो चुका था। गेटे अपनी पुत्र-वधू को बहुत स्नेह करता था। वह गेटे को सदैव प्रसन्न रखने की चेष्टा करती। वह उसे उसकी ही कविताएँ गाकर सुनाती तथा पुस्तके पढकर उसका मनोरजन करती। कुछ समय बाद गेटे का पौत्र उत्पन्न हुआ। गेटे का पारिवारिक जीवन सुखी था। मित्रो और परिचितो से वह घिरा रहता था। उसका घर साहित्यिको के लिए एक तीर्थ-स्थान बन गया था। उसने राजकीय कार्यो से अवकाश ग्रहण कर लिया था, लेकिन स्वय ग्रैण्ड ड्यूक और डचेज सप्ताह मे एक बार उससे मिलने आती थी।

१८२४ से १८३० ई० तक का समय गेटे के लिए बहुत व्यस्त और दुखमय था। वह अपनी पुस्तको के नवीन सस्करणो के लिए व्यस्त था। उसकी पुस्तको से उसे काफी धन प्राप्त हुआ था। उसके समस्त ग्रन्थो का चालीस भागो

में नवीन संस्करण प्रकाशित होनेवाला था। गेटे की विपत्ति के बादल आकाश मे छा गये थे। पहले उसकी प्रेयसी चारलोटी-बोन-स्टीन की मृत्यु हुई, फिर उसके अत्यन्त प्रिय डचूक कार्ल आगस्ट का स्वर्गवास हुआ और उसके बाद उसका पुत्र भी अपने नश्वर शरीर को छोडकर चला गया। इन घटनाओ का प्रभाव कवि के ऊपर कैसा पडा होगा, इसका अनुमान सहृदय पाठक स्वय कर सकते हैं।

गेटे अपने जीवन से निराश हो चुका था, फिर भी उसके सम्मुख अपनी अधूरी रचनाओं को पूर्ण करने की अभिलाषा थी। उसको अपनी समस्त रचनाओ के प्रकाशन से जो कुछ लाभ होता उसका अधिकारी उसने अपने पुत्र को बना दिया था। उसे विश्वास था कि वह योग्यता से सब व्यवस्था कर लेगा; किन्तु अब उसके चले जाने पर गेटे को अपना इच्छापत्र लिखना पडा। उसने अपने जीवन के सभी पत्र-व्यवहारो का एक निश्चित क्रम बनाया।

१८३१ ई० मे गेटे ने फास्ट का दूसरा भाग समाप्त किया। इसे पूर्ण करने पर उसे हार्दिक प्रसन्नता थी। उसने अपने एक साहित्यिक सहयोगी से कहा—मेरी तरह एक अस्सी वर्ष की अवस्था वाले व्यक्ति को सदैव चलने के लिए तैयार रहना चाहिए और अपने जीवन के अपूर्ण कार्यों को पूर्ण कर अपने गृह को व्यवस्थित कर लेना आवश्यक है।

फास्ट के दूसरे भाग की शृखला पहले भाग से नही मिल पाती। प्रथम दृश्य मे एक बडा मैदान दिखाया जाता है। फास्ट एक ज्वर वाली नीद से उठता है और प्रतिज्ञा करता है—'जीवन की श्रेष्ठतम निधि प्राप्त करने के लिए कोई भी प्रयत्न शेष नही छोडूंगा।' यही नाटक के द्वितीय भाग का पूर्ण आख्यान है। इस आदर्शवादी प्रतिज्ञा के कारण शैतान के साथ जो शर्त बदी गई है, वही खतरे मे पड जाती है। इस प्रतिज्ञा को देख-कर शैतान फास्ट के मार्ग मे नाना प्रकार के विघ्न उपस्थित करता है। फास्ट अपने प्रयत्न से विमुख नही होता। शैतान का प्रभाव धीरे-धीरे क्षीण होने लगता है। शैतान को जब कभी अपने प्रयत्नो की सफलता की झलक दिखाई पडती है, तब वह समझता है कि अब फास्ट को भ्रम मे डाल दूंगा, किन्तु अन्त मे यह एक भ्रम ही सिद्ध होता है।

फास्ट का हेलेन नाम की एक युवती से साक्षात् होता है। उसे वह एक अर्द्ध दैवी राजकुमारी सी प्रतीत होती है। जहाँ फास्ट हेलेन के प्रेम-बन्धन मे आता है, वहाँ नाटक का चरम उत्कर्ष माना जाता है। फास्ट के सामने उसका प्रतिद्वन्द्वी मेफिस्टोफेलेस एक दुष्ट और झक्की ही ठहरता है और अन्त मे कुछ शैतानी करता दिखाई पड़ जाता है।

फास्ट पहले की ही भाँति नाना प्रकार के कष्ट झेलता है, किन्तु हताश न होकर क्रमश आगे ही बढता जाता है। मेफिस्टोफेलेस के सभी प्रयत्न निष्फल सिद्ध होते है। अन्तिम भाग की रचना को गेटे ने अन्योक्ति-प्रधान कर दिया है। इस भाग मे, आगे चलकर, नाटकत्व तिरोहित हो जाता है, केवल रचना का स्वरूप ही नाटकीय रह जाता है। उसमे काव्य की छटा ही सर्वत्र दिखाई पडती है। इसका अन्त दु खान्त न होकर सुखान्त ही होता है। रचना आध्यात्मिक रूप लेकर समाप्ति पर पहुँची है। दार्शनिक दृष्टि से इस अश का विशेष महत्व माना जाता है।

प्रकृति-प्रेम और कल्पनाप्रियता ने स्वाभाविक स्वच्छन्दता-वाद को जन्म दिया। प्रकृति की ओर उन्मुख होने की प्रेरणा पश्चिम मे रूसो द्वारा प्राप्त हुई। प्रसिद्ध जर्मन कवि हर्डर गेटे का अन्तरग मित्र था। फ्रास की क्रान्ति ने समस्त पश्चिमी साहित्य मे परिवर्तन उपस्थित कर दिया था। काव्य अथवा साहित्य-क्षेत्र मे मौलिकता की ओर लेखक अग्रसर हुए। गेटे की कृतियो ने नेतृत्व किया।

गेटे ने दैनिक जीवन से प्रेरणा ली और अपना एक अलग पथ निकाला। उसने व्यक्तिवाद और राजनीतिक कपटाचार के बीच सघर्ष का बडा ही सुन्दर चित्रण किया है। उस युग मे व्यक्ति विद्रोही हो उठा था। वह जीवन के मानो को बदल देने के लिए कटिबद्ध था। कवि साहित्य के विषय और स्वरूप मे परिवर्तन लाकर विश्व को चमत्कृत कर देना चाहते थे। उन्होने सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्थाओ को चुनौती दे दी थी। वे असाधारण को साधारण और अपराधी को वीर मानने लगे थे। यह भावना केवल कुछ ही वर्षो तक रही।

गेटे ने अधिक अवस्था प्राप्त की थी, इसलिए वह शास्त्रीय और रोमैण्टिक दोनो युगो का नेता माना जाता है। जर्मन साहित्य मे शिलर का मृत्युकाल 'क्लासिक' युग का भी अन्तकाल माना जाता है। गेटे के फास्ट का दूसरा भाग जब पूर्ण हुआ तब जर्मन साहित्य मे स्वाभाविक स्वच्छन्दतावाद का साम्राज्य था। इसलिए फास्ट के अन्तिम भाग मे स्वच्छन्दतावाद का ही स्वरूप दिखाई पडता है।

यह स्वच्छन्दतावाद धीरे-धीरे जर्मन साहित्य मे प्रकृतिवाद का रूप ग्रहण कर रहा था। गेटे की रचनाओ मे प्रकृति की बडी ही मनोरम झाँकी मिलती है। फास्ट के अन्तिम भाग मे प्रकृति का अपना एक विशिष्ट स्थान दिखाई पडता है।

गेटे एक महान् नाटककार के रूप मे प्रख्यात है, फिर भी वह प्रथम श्रेणी का गीतिकार था। विश्व के प्रथम कोटि के गीतिकारो मे गेटे का स्थान गौरवपूर्ण है।

जीवन के अन्तिम दिनो मे गेटे की यह धारणा हो गई थी कि 'अधिक आयु ही वियोग का कारण बनती है।' वह कहता था—'कब्र के लिए आगे बढो।' अपने साहित्यिक कार्यो को समाप्त कर लेने पर अपने शेष जीवन को वह ईश्वरीय उपहार समझता था।

१८३२ ई० मे स्वर्ग से गेटे की पुकार हुई। एक विजयी सैनिक की भाँति वह अपने पग आगे बढा रहा था। अचानक एक दिन उसकी गति शिथिल हो गई। अपनी रुग्णावस्था मे पुत्रवधू को अपने समीप बिठाकर वह प्रसन्नतापूर्वक बाते करता रहा। उसका स्वर क्षीण होने लगा और अन्त मे वह मौन हो गया। इसके पश्चात् उसने सकेतो से कार्य लिया। जब उसके हाथ भी शक्तिहीन हो गये तब वह सहसा उठकर स्वय आरामकुर्सी पर बैठ गया। वही उसने शान्ति-पूर्वक अपने जीवन से बिदा ली।

उसकी समाधि उसके प्रिय मित्र शिलर की बगल मे ही है और इसके सामने उसके परिश्रमी और विजयी जीवन के उदार साथी कार्ल आगस्ट और उसकी पत्नी की काँसे की चमकती हुई समाधियाँ है।

आज भी काल्पनिक और स्वप्नलोक मे विचरण करनेवाले कलाकार जर्मनी के उस अमर महाकवि की समाधि के सम्मुख नतमस्तक होकर सम्मान प्रकट करते है।

---



# स्काट

(१७७१–१८३२ ई०)

तीन वर्ष की छोटी अवस्था मे बालक स्काट अपने मकान मे कविता पढता हुआ सुनाई पडता था। वह डेढ वर्ष का था तभी उस पर लकवा का आक्रमण हुआ और उसका दाहिना पैर सदैव के लिए शून्य हो गया।

एक दिन स्काट अपनी माता को एक कविता सुना रहा था। उसमे एक तूफान मे जहाज के नष्ट होने का वर्णन था। उसी समय उसकी माँ की चचेरी बहिन मिलने आई। बालक ने सकुचित होकर कहा—यह कविता विषादमय है, मै कुछ मनोरजक सुनाऊँ?

महिला उससे कुछ बाते करना चाहती थी। उसने मिल्टन के सम्बन्ध में कुछ प्रश्न किया। स्काट का उत्तर पाकर वह सन्तुष्ट हुई। उसे आश्चर्य था कि इतनी छोटी अवस्था मे बालक इतना प्रतिभावान् है।

स्काट का पिता राज्य-कर्मचारी था और माता एक प्रोफेसर की कन्या थी। उसे एक उच्च कुल मे जन्म लेने का सौभाग्य प्राप्त था। बचपन से ही वह पवन की भाँति चचल था। एक पादरी का कथन था कि जहाँ वह बालक है वहाँ किसी को तोप के मुख से बोलना होगा। उसका तात्पर्य यह था कि उसके सम्मुख किसी का बोलना असम्भव था।

स्कूल के सहपाठी उसके लँगडे होने के कारण व्यग्य किया करते, किन्तु वह इतना साहसी था कि लडकर उन्हे पराजित कर देता था। अन्त मे वे मित्रता कर उसकी कहानियाँ सुनते थे। स्काट बाल्यकाल से ही कहानियाँ कहने मे निपुण था।

स्काट ने कालेज में कानून की शिक्षा ग्रहण की, लेकिन उस विषय मे उसकी रुचि नही थी। परीक्षा पास करने के बाद वह अपने पिता के दफ्तर मे प्रतिलिपि करने के कार्य मे नियुक्त हुआ।

युवावस्था मे वह कविताओ की रचना करने लगा। उसका पिता इसे व्यर्थ का कार्य समझता और कहता कि कविता करने से कोई लाभ की सम्भावना नही है, किन्तु स्काट कभी निराश नही हुआ। वह अपनी गति मे निरन्तर बढता ही गया। उसका पिता वकालत करता था, अतएव स्काट को प्राय अपने पिता के मुवक्किलो से बाकी पैसे वसूल करने के लिए हाईलैण्ड जाना पडता था। इस लघु भ्रमण मे उसे अनेक आकर्षक चरित्रो से परिचय प्राप्त हुआ। उसने अनेक हृदयग्राही कहानियाँ सुनी। वह स्वय एक कुशल कहानी कहनेवाला था। अतएव उसने सावधानी से उनका अध्ययन किया। आगे चलकर उन्ही कथाओ के आधार पर उसकी कविता और उपन्यासो की सृष्टि हुई।

स्काट के सम्बन्ध मे विवरण मिलता है कि वह स्वभाव का सरल, हँसमुख और मिलनसार था। उसके व्यवहार से सभी प्रसन्न रहते थे। उसने अभिमान तनिक भी नही था।

१७९७ ई० मे स्काट ने अपना विवाह एक फ्रेंच स्त्री से किया। उसका पारिवारिक जीवन सुखी था। उसने आरम्भ मे अनेक जर्मन कविताओ का अनुवाद किया। आरम्भ मे साहित्य द्वारा जीविका उपार्जित करने की उसकी अभिलाषा नही थी। उस समय तक वह अपने पिता के विचारो से सहमत था कि साहित्य-साधना से धन प्राप्त नही हो सकता है। उसने वकालत करना आरम्भ किया। उसकी योग्यता के कारण ही उसे जिले के हाकिम का पद प्राप्त हुआ। इस पद पर उसे विशेष आय थी और समय भी कम देना पडता था। न्यायालय मे वकालत करने की उसे स्वतन्त्रता भी थी। अवकाश के समय साहित्य उसके मनोरजन का एक साधन था।

स्काट की प्रथम मौलिक कविता की पुस्तक 'दी ले आफ दी लास्ट मिनिस्ट्रल' प्रकाशित हुई। इसमे उसे पूर्ण सफलता मिली। इस आर्थिक लाभ के कारण उसे स्वय आश्चर्य हुआ। अब, ३४ वर्ष की अवस्था मे, उसे विश्वास हुआ कि कानून नही साहित्य ही उसके जीवन का अवलम्ब है। उसके दूसरे काव्य ग्रन्थ 'मारमीअन' ने उसे ख्याति के मार्ग पर अग्रसर किया। जनता ने मुग्ध होकर उसकी वन्दना की। १८१० ई० मे उसकी

तीसरी काव्य-कृति 'दी लेडी आफ दी लेक' प्रकाशित हुई। उसकी बीस हजार प्रतियाँ तत्काल ही बिक गई।

देखते-देखते उसकी काव्य-पुस्तको के अनेक सस्करण हो गये। कवि को पर्याप्त धन प्राप्त हुआ। उसके जीवन का एक स्वप्न था कि किसी ग्रामीण स्थान पर वह अपने रहने योग्य गृह बनवाकर उसी मे निवास करेगा। अब उसकी अभिलाषा पूर्ण हुई। एक जमीदारी खरीदकर वही वह निवास करने लगा। उसने एक विशाल भवन बनवाया। अतिथियो और मित्रो के लिए उसका द्वार सदैव खुला रहता था। सामन्त से लेकर साधारण कृषक तक उसके यहाँ आदर सत्कार प्राप्त करते थे।

स्काट के सम्मुख अपनी सन्तानो के भविष्य का भी प्रश्न था। इस समय तक उसके चार सन्ताने उत्पन्न हो चुकी थी। उसने अपने धन को एक मित्र के प्रेस मे लगाया। इस प्रेस का वह हिस्सेदार बना। प्रतिवर्ष वह अपनी आय उसी मे लगाता चला जाता, किन्तु दुर्भाग्य से उस छापेखाने मे घाटा ही होता रहता।

स्काट अपनी रचनाओ की सफलता मे अभिमान का अनुभव नही करता था। स्वय उसकी सन्तान उसकी कृतियो से अपरिचित थी। स्काट की पुत्री सोफिया तेरह वर्ष की हो चुकी थी। एक दिन स्काट के एक मित्र ने उससे पूछा—तुम्हे 'लेडी आफ दी लेक' की कविताएँ कैसी रुची? उसने उत्तर दिया कि 'पापा' ने आदेश दिया है कि युवावस्था मे खराब कविता पढना सबसे अधिक हानिकारक है। इसी लिए मैंने उसे नही पढा। उस मित्र ने सोफिया का यह उत्तर स्काट को सुनाया, तब वह केवल मुस्कराया। स्काट कभी आलोचनाओ से विचलित नही होता था।

१८०५ ई० मे स्काट ने एक उपन्यास के कुछ परिच्छेद लिखने का प्रयत्न किया था, किन्तु लोगो को रुचिकर न होने के कारण वह वैसे ही पडा रहा। १८१३ ई० मे अकस्मात् एक दिन उसकी पाडुलिपि उसे मिली। उसने उसे समाप्त करने का निश्चय कर लिया।

१८१४ ई० मे उसके लिखे 'वेवरली' उपन्यास तीन भागो मे प्रकाशित हुए। स्काट ने ऐतिहासिक रोमास को वास्तविक स्वरूप दिया। उसके पहले ही उपन्यास मे उसके निर्मित चरित्र अपनी स्वाभाविक भाषा मे बोलते दिखाई पडते है। स्काट ने अपने आरम्भिक उपन्यासो मे अपना कल्पित नाम दिया। उसने अपना नाम देना उचित नही समझा, कारण वह जानता था कि वकालत की वृत्ति ग्रहण कर उपन्यास-लेखक बनने मे कोई

महत्त्व नही है। उसके रहस्यपूर्ण और घटनात्मक उपन्यास शीघ्रता से प्रचलित हुए। पाठक अत्यन्त उत्सुकता से स्काट की नवीन रचनाओ की प्रतीक्षा मे रहते थे। जनता को कल्पित नाम के लेखक का वास्तविक नाम जानने मे भ्रम नही हुआ। उसे लेखक का पता लग गया।

स्काट ने केवल छः सप्ताह मे 'गे मेनरिङ्ग' लिखा। इसके बाद कई उपन्यास प्रकाशित हुए। १८१८ ई० मे 'दी हर्ट आफ मिडलोथियन' उपन्यास प्रकाशित हुआ। यह स्काट के उपन्यासो मे सर्वश्रेष्ठ माना जाता है।

१८२६ ई० मे लेखक को भयानक परिस्थितियो का सामना करना पडा। जिस प्रेस मे वह हिस्सेदार था, उसका अन्त हो गया। उसके मित्र जेम्स बेलेन्टेनी की मूर्खता से दिवाला घोषित करना पडा। स्काट भी उसमे सम्मिलित था, अतएव एक लाख तीस हज़ार पौड का ऋण उसके ऊपर था। उसके अनेक शुभचिन्तको ने सम्मति दी कि वह अपने को दिवालिया घोषित कर दे। कानून का पडित होने के कारण अपने अनेको मुवक्किलो को उसने इसी तरह का परामर्श दिया था, लेकिन वह स्वय इस अपमान को ग्रहण नही करना चाहता था। उसने कहा—मै एक-एक पैसा सब का चुकता करूँगा।

ढली अवस्था मे विलक्षण शक्ति से स्काट ने उपन्यास प्रस्तुत करना आरम्भ किया। वह एक जीवित मशीन बन गया। अपना सम्पूर्ण ऋण चुकाने के लिए वह निरन्तर परिश्रम करता रहा। ढाई वर्षो मे उसने पॉच उपन्यासो की रचना की।

लोकहार्ट स्काट का जामाता था। उसने स्काट का जो जीवनचरित्र लिखा है, बासवेल के बाद उसका दूसरा स्थान अग्रेजी जीवन साहित्य मे माना जाता है। उसमे उसने स्काट के लिखने का एक स्थान पर वर्णन किया है।

लोकहार्ट एक दिन अपने एक मित्र से मिलने गया था। उसका मकान स्काट के गृह के सामने ही था। जब लोकहार्ट ने अपने मित्र के कमरे मे प्रवेश किया तो उसने देखा कि खिडकी के समीप वह उदासीन होकर बैठा है।

लोकहार्ट ने पूछा—क्या तुम अस्वस्थ हो ?

अपने स्थान से उठकर वह लोकहार्ट के समीप बैठ गया और कहने लगा—मेरी दृष्टि के सामने एक शैतान की आकृति दिखाई पडती है, वह एक के बाद दूसरा पृष्ठ लिखता ही जाता है। उसकी गति कभी शिथिल नही होती। मोमबत्ती समाप्त होती है और दूसरी फिर जलाई जाती है।

भगवान् जाने कब उसका कार्य समाप्त होगा, क्योकि रात्रि मे नियमित रूप से वह लिखता ही रहता है, सम्भवत कोई शैतान क्लर्क है।

वह शैतान क्लर्क नही वाल्टर स्काट था जो अपने ऋण से मुक्त होने के लिए कठिन परिश्रम कर रहा था। इसका परिणाम यह हुआ कि वह रुग्ण हो गया। उसका कथन था कि वीरो का कार्य यही है कि दु खद यत्रणा मे भी अपना कार्य करते रहे। रुग्णावस्था मे वह शय्या पर पडा हुआ बोलकर लिखाता जाता था। पीडा से व्यथित होकर उसके दाँत चमक उठते थे। कष्ट से मुक्त होते ही फिर वह कार्य करने लगता। इस तरह वह अपने ऋण का तीन भाग समाप्त कर चुका था।

जीवन के उलझे दिनो मे उसकी पत्नी भी उसका साथ छोडकर चल बसी। पत्नी का देहान्त होने पर जीवन उसे एकाकी प्रतीत होने लगा, किन्तु वह अपन कार्य से कभी विमुख नही हुआ। वह उपन्यास, कविताएँ और जीवन-चरित्र आदि लिखता गया। दिन पर दिन उसका शरीर क्षीण हो रहा था। मित्रो ने उसे समुद्र-यात्रा के लिए भेजा। जहाज पर भी उसने अपने दो नवीन उपन्यास लिखने आरम्भ किये। 'मृत्यु के पहले मुझे कुछ करते रहना चाहिए'—यही उसका वाक्य था।

एक दिन उसे समाचार मिला कि जर्मनी के महाकवि गेटे का स्वर्गवास हो गया। उसने जहाज के कप्तान से कहा—देखो गेटे की मृत्यु उसके जन्म-स्थान पर ही हुई, मुझे भी मेरी जन्म-भूमि पर पहुँचा दो।

घर पहुँचने पर उसे चलने का सामर्थ्य नही था। वह कुर्सी पर बैठा दिया गया। उसने अपनी लेखनी माँगी। उसकी पुत्री ने जब लेखनी दी, उस समय उसकी उँगलियाँ लेखनी पकड नही सकी।

वह शय्या पर दो मास तक पडा रहा और अन्त मे सदैव के लिए उसकी आँखे बन्द हो गई। अनन्त शान्ति से उसने मृत्यु का आलिगन किया। उसकी मृत्यु के पश्चात् उसकी पुस्तको की आय से उसके ऋण का एक-एक पैसा चुकता किया गया।

---

# बायरन

(१७८८-१८२४)

अग्रेजी का प्रसिद्ध कवि बायरन अपनी विलक्षण प्रेम-कहानियो के लिए विख्यात है। वह योरोपीय साहित्य मे स्वच्छन्दतावाद का जन्मदाता माना जाता है। रोमैण्टिक योरोप के अन्य देशो के लेखको पर भी उसका प्रभाव पडा और वे लोग उसके अनुयायी बने थे। फ्रास का समूचा रोमैण्टिक सम्प्रदाय बायरन से प्रभावित था। इसके अतिरिक्त रूस मे पुश्किन और लर-मोनटोफ, जर्मनी मे हेनी, स्पेन मे इसप्रोनथेडा और इटाली मे लिओपार्डी आदि बायरन को अपना पथ-प्रदर्शक मानते थे।

बायरन का पिता दुष्ट मनोवृत्ति का व्यक्ति था। वह ऋण लेने मे बडा कुशल था। वह स्त्रियो को धोखा देकर उनकी सम्पत्ति नष्ट कर डालता था। अपनी प्रथम पत्नी का सब धन उडा देने पर वह उसके साथ दुर्व्यवहार करता रहा। उससे उसे आगास्टा नाम की एक कन्या उत्पन्न हुई थी। इसके पश्चात् केथराईन गोर्डन से उसने अपना विवाह किया। इसका सर्वनाश करके वह चल बसा। बायरन इसी स्त्री से उत्पन्न हुआ था। पति की नीचता और दुर्व्यवहारो का दुष्परिणाम यह हुआ कि वह अपने पुत्र से भी घृणा करने लगी।

बायरन जब तीन वर्ष का था तब उसके पिता का देहान्त हुआ। मूर्च्छा का रोग, अर्थाभाव और पति का दुराचार इन सभी बातो ने बायरन की माँ का मस्तिष्क बिगाड दिया था। वह क्रोध मे उत्तेजित होकर बायरन को खूब पीटती और जोरो से चिल्लाती थी। उसने अपने पुत्र की ओर तनिक भी ध्यान नही दिया। उसकी उदासीनता के कारण बायरन का छोटी अवस्था मे चरण स्थूल हो गया, जिसके कारण वयस्क होने पर उसे समाज के सम्मुख लज्जित होना पडता था। बायरन का बचपन दु खमय व्यतीत हुआ।

बायरन की अवस्था जब दस वर्ष की हुई तब उसके चचेरे पितामह का देहान्त हुआ। वह लार्ड था। वह जीवन भर अपने महल मे निर्वासित-जीवन व्यतीत करता रहा। उसने एक बार एक व्यक्ति की हत्या कर दी थी, इसके दण्ड मे उसे मृत्युदण्ड न मिलकर आजन्म अपने महल से

बाहर न निकलने की आज्ञा हुई थी। वह बहुत नीच मनोवृत्ति का व्यक्ति था। उसने अपनी अधिकाश सम्पत्ति बेच दी थी। वह विक्षिप्त था। सौभाग्य से बायरन उसका उत्तराधिकारी हुआ।

लार्ड की उपाधि और निवास के लिए एक विशाल महल बायरन को प्राप्त हुआ। उस समय वह स्कूल मे पढता था। उसकी शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया गया और बाद मे बायरन केम्ब्रिज कालेज मे शिक्षा ग्रहण करने लगा। राजनीति मे उसने विशेष ध्यान दिया और उसका विचार था कि 'हाउस आफ लार्डस्' मे वह एक कुशल वक्ता और लिबरल नेता बनेगा।

बायरन के बाल्यकाल की कविताओ का एक सग्रह 'आवर्स आफ आइडिलनेंस' प्रकाशित हुआ। उसकी बडी कटु आलोचना हुई। खिन्न होकर बायरन ने व्यग्यात्मक कविताओ की पुस्तक प्रकाशित की। जनता इस पुस्तक से आकर्षित हुई। इसके बाद वह स्पेन, ग्रीस और एशिया माइनर का भ्रमण करने के लिए निकला। दो वर्षो के बाद वह फिर अपने महल मे ऐश्वर्य का जीवन व्यतीत करने लगा।

जनता को मुग्ध कर देनेवाली बायरन की कृति 'चाइल्ड हेराल्ड' १८१२ ई० मे प्रकाशित हुई। इसे उसने सात वर्षो के परिश्रम से प्रस्तुत किया था। अपने भ्रमण और व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर काव्य मे उसने एक अर्द्ध आत्मकहानी के रूप मे ही इसकी रचना की थी। केवल दो मास के भीतर इस पुस्तक के सात सस्करण प्रकाशित हुए। बायरन ने स्वय कहा था कि एक दिन प्रात काल निद्रा से उठने पर मैने देखा कि मै विख्यात हो गया हूँ। सचमुच समाज का प्रत्येक व्यक्ति बायरन के नाम से परिचित हो गया था।

बायरन एक सुन्दर पुरुष था। अपनी प्रतिभा और ऐश्वर्य के कारण समाज मे उसका आदर था। सभ्य और उच्च कोटि के समुदाय मे वह प्राय आमत्रित होता। उसे जीवन के विभिन्न स्वरूपो का अध्ययन करने का पर्याप्त अवसर मिला था। बचपन से जीवन के प्रति जो उदासीनता उसके हृदय मे व्याप्त थी, उसी ने उसमे, समाज और मानव के आडम्बर और नियमो के प्रति विद्रोह की भावना उत्पन्न की।

बायरन क्रान्ति का उपासक था। उसने रूसो के सिद्धान्तो का अवलम्बन किया। उसे विश्वास था कि समाज ही मानव की दुर्गति का मूल कारण है। उसका कवि-हृदय पवन की भाँति स्वच्छन्द था। उसकी अस्थिर भावुकता ने अगणित अपवादो को जन्म दिया। सभ्य और शिक्षित लोग

अपने अपराधो पर आवरण डाले रहते है, किन्तु बायरन अपनी सभी भावनाओ का चित्रण अपनी कविताओ मे करता था। यही उसकी विशेषता थी।

१८१५ ई० मे बायरन ने इसाबेला मिलबेक नाम की एक धनी महिला से विवाह किया। इस विवाह के बन्धन मे मूल लक्ष्य एकमात्र धन ही था। कारण दोनो की प्रकृति एक दूसरे से भिन्न थी और आपस मे सदैव अनबन रहती थी। इसाबेला को बायरन की कविताएँ रुचिकर नही प्रतीत होती थी। इसके अतिरिक्त अन्य स्त्रियो के प्रति उसका सम्बन्ध भी प्रधान कारण था। एक वर्ष मे ही एक कन्या उत्पन्न हुई। इसके बाद बायरन की पत्नी सदैव के लिए उसका साथ छोडकर अपने पिता के घर चली गई। इस सम्बन्ध से बायरन को लाभ यही हुआ कि पत्नी की वार्षिक आय मे उसे आधा हिस्सा मिलता था।

मित्र, समाज और समाचारपत्रो मे बायरन के चरित्र पर आक्षेप होने लगा। जिस तरह प्रसिद्धि उसे प्राप्त हुई थी, उसी भॉति उसकी अपकीर्ति भी सर्वत्र फैल गई। लन्दन नगर मे उसका रहना कठिन हो गया। अन्त मे सदैव के लिए लन्दन छोडने का विचार कर वह स्विजरलैड गया। वहाँ कवि शेली से उसकी भेट हुई। दोनो मे घनिष्ठ मित्रता हुई। वे दोनो एक दूसरे को प्रसन्नतापूर्वक अपनी रचनाएँ सुनाते। बड़े चैन से दिन कटने लगे। बायरन ने शेली के गृह के समीप ही एक सुन्दर बँगला खरीद लिया था। उन दिनो गेटे के 'फास्ट' से प्रभावित होकर उसने 'मैनफ्रेड' काव्य-नाटक की रचना की।

बायरन ने अपना महल विक्रय कर दिया। इससे उसे पर्याप्त धन प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त उसे अपनी पुस्तको की रायल्टी का सात हजार पौण्ड प्राप्त हुआ और पत्नी की आय का आधा भाग तो वह प्राप्त कर ही चुका था। उसने अपना सब ऋण चुका दिया था। इसके बाद भी उसके पास बहुत धन था। धन का मद भी उसके मस्तिष्क को स्थिर रखने मे बाधक सिद्ध हुआ।

वह अपनी क्षणिक बुद्धि के कारण एक स्थान पर अधिक समय नही व्यतीत कर सकता था। वहाँ से वह वेनिस गया। वेनिस मे विलासिता की चरम सीमा पर पहुँचकर वह अपनी वासनाओ के साथ नृत्य कर रहा था। वह इटाली के एक नगर से दूसरे नगर मे जाता रहा। उसे कही शान्ति नही मिलती थी। उस समय उसने 'चाइल्ड हेराल्ड' के आगे का अश, 'डोन जुआन', 'केन' आदि अपनी अमर कृतियो की रचना की थी।

अचानक नाव-दुर्घटना मे शेली की मृत्यु का समाचार मिला। बायरन

के ऊपर इसका विशेष प्रभाव पडा। वासनाओ की प्रतिक्रिया ने उसे सचेत किया। वीरता का गान करनेवाले कवि-हृदय ने जीवन को सार्थक करने की अभिलाषा मे यूनानियो के स्वतन्त्रता-युद्ध मे भाग लिया।

बायरन ने धन एकत्र कर दो मस्तूल का एक अग्रेजी जहाज खरीदा और अपने दल के साथ जिनेवा से ग्रीस के लिए प्रस्थान किया। वहाँ पहुँचने पर उसने देखा कि यूनानियो का सगठन व्यवस्थित रूप मे नही था। वह लेपान्टो मे तुर्कों के विरुद्ध लडनेवाली सेना का प्रधान सेनापति बनाया गया।

परिश्रम और खराब मौसिम के प्रभाव के कारण बायरन के ऊपर ज्वर का आक्रमण हुआ। उससे वह मुक्त नही हो सका और, ३६ वर्ष की अवस्था मे, उसके जीवन का अन्त हो गया। वहाँ पर सम्मान से उसका शव-सस्कार हुआ।

बायरन की मानसिक वेदनाओ का परिचय उसकी कविताओ मे मिलता है। जीवन के पिछले समय वह अपने जीवन से हताश हो गया था। उसकी एक कविता की चार पक्तियो का भावार्थ है—मेरे दिन पीली पत्तियों मे है, प्रेम के पुष्प और फल सब नष्ट हो चुके है। पश्चात्ताप, घाव और व्यथा ही एकमात्र मेरी है।

बायरन की कविताएँ सरल है। उसमे प्रकृति के अकन की अपूर्व योग्यता थी। मृत्यु के बाद बायरन की रचनाओ का निरन्तर प्रचार हुआ। उसके सम्बन्ध मे सैकडो पुस्तके प्रकाशित हुई। उसकी कृतियाँ और उसका चरित्र आज तक साहित्यिको के अनुसधान का विषय है। अपने विलासी-जीवन से हटकर उसने सहसा वीरता के कृत्यो से ससार को चकित कर दिया था।

---



# बालजाक

(१७९९–१८५० ई०)

अग्रेजी के प्रसिद्ध उपन्यासकार हेनरी जेम्स का कहना था कि बाल-जाक हम सब उपन्यासकारों का पिता है।

इसमे सन्देह नही कि विश्व के उपन्यासकारो मे बालजाक एक सम्राट् की भाँति दिखाई पडता है।

बालजाक ने आरम्भ मे कानून का अध्ययन किया था, लेकिन उसकी रुचि उस ओर नही थी। उसने पहले ही से यह उच्चाकाक्षा बना ली थी कि वह पेरिस को अपनी साहित्यिक प्रतिभा से जीत लेगा। उसने अपने पिता से एक प्रस्ताव किया जो अन्त मे स्वीकृत हो गया। उसके पिता ने स्वीकार कर लिया कि जब तक वह अपनी प्रतिभा की परीक्षा करेगा, तब तक वह उसकी आर्थिक सहायता करेगा। यदि वह अपनी साहित्यिक आय से जीवन यापन कर सके तो वह इस क्षेत्र मे आगे बढ़ सकता है अन्यथा उसे कानून का पेशा ग्रहण करना पडेगा।

२१ वर्ष की अवस्था मे पेरिस की एक तग कोठरी मे वह किसी प्रकार अपना जीवन व्यतीत कर रहा था। उसकी आरम्भिक रचनाओ को सफ-लता नही मिली। उस समय उसने अनेक उपन्यास लिख डाले थे, किन्तु उनसे विशेष आय नही हुई। उसका कमरा सर्द और असुन्दर था। सामान बहुत कम थे। फिर भी चादर मे लिपटा हुआ वह रात-दिन काम करता रहा। उसका भोजन अत्यन्त साधारण था। कभी-कभी वह केवल काफी पीकर ही रह जाता और भोजन करने बैठता तो इतना खा जाता कि अजीर्ण हो जाय।

बालजाक की एकमात्र अभिलाषा थी कि उसे ख्याति और प्रेम प्राप्त हो। वह इतना परिश्रमी था कि १८२१ से १८२४ ई० तक उसने ३१ पुस्तको की रचना की थी। उसने देखा कि पुस्तके लिखकर वह विशेष धन नही प्राप्त कर सकेगा, अतएव उसने पुस्तको के प्रकाशन का व्यवसाय आरम्भ किया। उसमे उसे हानि उठानी पडी। इसके बाद वह मुद्रक और टाइप-फाउण्डर बनकर अपना व्यवसाय चलाने लगा। इसमे भी हानि हुई। व्यवसाय के लिए जो कुछ कर्ज लिया था उसे बालजाक चुका नही सका और अन्त मे, एक दिवालिये की भाँति, सबके सम्मुख अपराधी समझा गया। उस समय उसकी अवस्था २९ वर्ष की थी और उसे चार हजार पौड कर्ज चुकाना था।

कुछ वर्षो के बाद बालजाक को सफलता मिलने लगी। वह १५ से १८ घटे दिन-रात मे काम करता था। इस तरह वह सदैव धन उपार्जित करने मे व्यस्त था। वह अपूर्व धनराशि की कल्पना मे सदा लीन रहता था।

१८३० ई० से विलासिता और ऐश्वर्य की ओर उसकी प्रवृत्ति का प्रसार हुआ। इस समय उसका जीवन कम दु खमय था। वह कर्ज लेने मे अभ्यस्त हो गया था और ज्यो-ज्यो कर्ज बढता, उसी भाँति उसका परिश्रम भी बढता जाता था।

१८३३ ई० मे एक बडी आकर्षक घटना बालजाक के जीवन मे हुई। पोलैण्ड की एक महिला मैडम-हन्सका ने उसकी रचना की प्रशसा मे एक पत्र लिखा। इस पत्र को पढते ही बालजाक के हृदय में प्रेम की लहरे उठने लगी और उसने बडी भावुकता से उसका उत्तर दिया। इस तरह पत्र-व्यवहार द्वारा प्रेम का उज्ज्वल रूप दिखाई पडने लगा। मैडम-हन्सका विवाहित स्त्री थी और उसका पति धनी काउण्ट था। केवल पत्र द्वारा ही दोनो अपनी भावनाओ को व्यक्त करते रहे। वर्षो के बाद जिनेवा मे दोनो की भेट हुई। अनेक वर्षो के बाद हन्सका के पति की मृत्यु हुई। बालजाक ने हन्सका से विवाह का प्रस्ताव किया और १७ वर्ष बाद उसकी अभिलाषा पूर्ण हुई।

बालजाक की यह प्रेम-कहानी बडी विस्तृत है। उसकी रचनाओ मे उसके जीवन के इस रोमास की छाप स्पष्ट अकित हुई हैं। दोनों के पत्र-व्यवहार को देखने से भली भाँति विदित होता है कि इस प्रेम-सम्बन्ध के कारण बालजाक के जीवन का स्तर निरन्तर विकसित होता गया और धन की लालसा एव ऐश्वर्य के मार्ग पर वह सदैव आगे बढता गया।

बालजाक ने देखा कि परिश्रम करते-करते जीवन ही समाप्त हो

जायगा और फिर भी अभिलाषा पूर्ण नही होगी। अतएव वह सार्डिनिया की चॉदी की खान खुदवाने के प्रयोग मे वहॉ गया, लेकिन उसने अपने इन विचारो को एक इटालियन व्यवसायी के सम्मुख प्रकट कर दिया था और उसने इससे विशष लाभ उठाया। बालजाक अन्त मे निराश हुआ।

इसके पश्चात् उसने पेरिस से पॉच मील दूर कुछ जमीन खरीदी और वहॉ वह फलो का एक बडा बगीचा लगाना चाहता था। अरेबियन नाइट्स के 'हीरो' की भॉति बालजाक भी कल्पना-लोक मे विचरण करने लगा। उस जमीन मे पेड लगेगे, फल होगा, पेरिस मे बिकेगा और इस तरह १६ हजार पौड प्रतिवर्ष उसे आय होगी।

अपनी प्रेमिका हन्सका को एक पत्र मे उसने लिखा था कि असफलताओ से युद्ध करते हुए अब फिर आशा का सचार हुआ है। इस भूमि के द्वारा मेरी अभिलाषाऍ पूर्ण होगी और समस्त जीवन मे सुख से यहॉ व्यतीत करूँगा। इसकी आय इतनी होगी कि बडी सरलता से मै अपने ऋण से भी मुक्त हो जाऊँगा।

१४ मार्च १८५० मे बालजाक का विवाह हन्सका के साथ हुआ। काउण्टेस ईव अब मैडम-डी-बालजाक हो गई। बालजाक की हार्दिक कामना सफल हुई। लेकिन उसका अन्त कितना कारुणिक है। इतने बडे उपन्यासकार का अन्तिम जीवन ही एक हृदय-विदारक उपन्यास की भॉति दिखाई पडता है।

विवाह के पूर्व बालजाक ने एक बडा सुन्दर भवन बनवाया था। उसमे सभी वस्तुऍ प्रथम श्रेणी की रखी गई थी। कहते है कि राजाओ की भॉति उसका भवन अत्यन्त सुन्दर सामग्रियो से सुसज्जित था। बालजाक की कामना थी कि अपनी पत्नी के साथ वह आनन्द से दिन व्यतीत करेगा। लेकिन विधाता का विधान विचित्र होता है। बालजाक का स्वास्थ्य जीर्ण अवस्था मे था। उसकी पत्नी भी गठिया के रोग से ग्रस्त थी। जीवन की प्रसन्नता का वसन्त आपत्ति और सकट का आलिगन करता हुआ बालजाक का भाग्य बना हुआ था। वह एक मरणासन्न पुरुष की भॉति जीवित था।

बालजाक प्रजातान्त्रिक और पूँजीवादी औद्योगिक समाज का प्रथम प्रशसक था। उसकी मुख्य भावना धन के एकत्रीकरण से सम्बद्ध है। उन्नीसवी शताब्दी के उपन्यासकारो मे केवल बालजाक और स्टेन्ठाल ने ही धन से घृणा नही प्रकट की है। बालजाक को विश्वास था कि सम्पत्ति,

सुखी जीवन और उपभोग्य वस्तुओ का सुखोपभोग शान्तिपूर्ण व्यापार द्वारा ही सम्भव है। वह समझता था कि व्यक्ति को अपनी प्रतिभा से अपने मानसिक और शारीरिक सुख का सम्पादन करना चाहिए। इसके लिए उसे अपने पास-पडोस के लोगो की आवश्यकताओ को पूरा करना चाहिए, यह नही कि दूसरो की उत्पादित वस्तुओ को लूटे-खसोटे।

बालजाक ने अपने जीवन मे देखा कि दूषित प्रवृत्ति के कारण उनके अधीन लोग विपन्नावस्था मे रहेगे। उसने यह भी देखा कि धन के बल से लोग राजनीतिक शक्ति अपनाने जा रहे है। उसने देखा कि सम्पत्ति के आधार पर नये-नये वर्ग और श्रेणियाँ उत्पन्न होने जा रही है। लेकिन यह सब कुछ होते हुए भी वह दूसरे मध्यमवर्गीय लेखको की भाँति धन से घृणा नही दिखाता था। वास्तव में लेखक के रूप मे वह धन एकत्र करना चाहता था। ख्याति से अधिक उसका लक्ष्य धन ही था। पर वह सफल नही हुआ। वह जन्म भर ऋण चुकाने मे व्यग्र रहा और अन्त में जब कुछ धन एकत्र कर सका तब उसकी मृत्यु हो गई।

बालजाक ने अपने समय के समाज का पूरा चित्र उपस्थित किया। उन्नीसवी शताब्दी के पेरिस के जीवन के लिए इतिहास के विद्यार्थी इतिहास से अधिक बालजाक के उपन्यासों से जानकारी प्राप्त कर सकते है।

१८४२ ई० मे बालजाक का 'ला कोमेजी हूमेन' लिखने का विचार हुआ जो उसकी प्रमुख कृति है। इस रचना का उद्देश्य लेखक के शब्दों में 'मनुष्य के हृदय की सभी भावनाओं को जानना और सामाजिक इतिहास के सभी अङ्गो का अध्ययन करना था', अर्थात् उसके समय के जीवन का विस्तृत अध्ययन ही उसका लक्ष्य था।

बालजाक की उक्त रचना को भिन्न-भिन्न भागो मे विभाजित किया गया है। उदाहरणार्थ, व्यक्तिगत जीवन, प्रादेशिक जीवन, नगर का जीवन, राजनीतिक और सैनिक जीवन, दार्शनिक और विश्लेषणात्मक अध्ययन इत्यादि। लेखक की योजना के अनुसार यह रचना १३३ भागो मे प्रकाशित होनेवाली थी, पर इसके बहुत से भाग अलिखित ही रह गये। किसी भी उपन्यासकार ने इतनी बडी योजना नही बनायी, न किसी ने इतना लिखा ही।

बालजाक की रचनाओ मे स्त्री-जाति को प्रमुखता दी गई है। उसने यथार्थवाद को जन्म दिया। वह सत्य के अतिरिक्त और किसी बात की चिन्ता नही करता था। वह जीवन के अच्छे और आकर्षक पक्ष की अपेक्षा बुरे और घृणित पक्ष को सामने रखने मे अधिक सफलता प्राप्त करता था।

बालजाक, विक्टर ह्यूगो से अत्यधिक प्रभावित था, लेकिन रोमैण्टिक धारा के उपन्यासकारो को वह हवा मे उडनेवाले घुडसवार कहा करता था। आलोचको का कथन है कि वह स्वय अपने को रोमैण्टिक प्रभाव से बचा नही सकता था और बार-बार उसमे फँस जाया करता था।

बालजाक को लिखने के अतिरिक्त कभी अवकाश नही मिलता था। एक बार एक धनी व्यक्ति लार्ड हर्टफोर्ड ने बालजाक से मिलने के लिए समय निर्धारित किया, पर हर्टफोर्ड को बताया गया कि वह अपने घर से इस समय नही निकल सकता क्योकि ऋण न चुका सकने के कारण पुलिस उसको गिरफ्तार करने के लिए तैयार है। इस पर हर्टफोर्ड ने पूछा—उसे कितना ऋण चुकाना है? उत्तर मिला—चालीस या पचास हजार फ्रेंक।

हर्टफोर्ड ने कहा—वह यहाँ आ जाय, मै उसका ऋण चुका दूँगा।

बालजाक को ये सब बाते ज्ञात हुईं, लेकिन फिर भी वह उससे मिलने नही गया।

जिस वर्ष बालजाक का विवाह हुआ, उसी वर्ष उसकी जीवन-कहानी भी समाप्त हुई। उसके मरने के बाद उसके ऋण की एक-एक पाई चुकता कर दी गई थी। उसकी पत्नी उसकी मृत्यु के बाद ३२ वर्ष तक जीवित थी।

२० वर्ष निरन्तर लिखने के बाद उसने पचासी उपन्यास समाप्त किये। उसने दो हजार चरित्रो का निर्माण किया। उसकी जीवन-कहानी ही अतृप्त मानव की उज्ज्वल आकाक्षाओ का रहस्यमय इतिहास है।

---



# पुश्किन

(१७९९–१८३७ ई०)

रूसी-साहित्य को नव-जीवन देने का सबसे अधिक श्रेय पुश्किन को है। रूसी लेखक आज तक उसी के पदचिह्नो पर चले आ रहे है। रूस के नवीन यथार्थवादी साहित्य का इतिहास ही पुश्किन से आरम्भ होता है।

उस समय शास्त्रीय साहित्य के नियमो का पालन होता था। रूसी भाषा का स्वरूप अपने शिशुकाल मे था। पुश्किन ने अपनी रचनाओं द्वारा रूसी-साहित्य मे युगान्तर उपस्थित किया।

योरोप के सभी देशो के साहित्य मे जीवन के स्वाभाविक स्वच्छन्दतावाद को महत्त्व दिया जा रहा था। इँग्लैण्ड मे बायरन, जर्मनी मे गेट और फ्रास मे फ्लोबेयर ने साहित्य को शास्त्रीय नियमो के बन्धनो से मुक्त किया था। पुश्किन के ऊपर बायरन का प्रभाव पडा था।

पुश्किन की कविताएँ जब प्रकाशित हुई तब साहित्य मे उसका जोरों से विरोध होने लगा, किन्तु कवि ने सर्वसाधारण मे बोली जानेवाली सरल भाषा को सुन्दर आवरण मे प्रस्तुत किया, अतएव वह जनता मे प्रचलित हो गया।

पुश्किन का जन्म मास्को के एक सभ्य कुल मे हुआ था। उसका पिता धनी था। पैसेवालों की दुनिया मे उसका आदर था। ऐश्वर्य से परिपूर्ण उसका जीवन व्यतीत हुआ। उस युग के प्राय सभी प्रतिष्ठित साहित्यिको का उसके यहाँ सत्कार होता था।

पुश्किन का चाचा भी कवि था और उसने हास्यरस की कविताएँ लिखकर ख्याति प्राप्त की थी। इसमे सन्देह नही कि पुश्किन-परिवार का साहित्यिक वातावरण भी बालक पुश्किन को उस ओर आकर्षित करने मे सहायक हुआ। पुश्किन आठ वर्ष की अवस्था मे कविता करने लगा था।

बाल्यकाल मे पुश्किन को अपनी दादी और एक दाई द्वारा रूसी भाषा का ज्ञान प्राप्त हुआ था। शरत् काल की विस्तृत रात्रि मे लोक-गीत और कहानियाँ उनसे सुनकर उसकी प्रतिभा प्रखर हुई थी। अपने इसी ज्ञान के बल पर आगे कर पुश्किन ने अपनी कृतियो को रूसी स्वरूप प्रदान किया था। स्कूल छोडने के पहले ही वह एक सफल कवि माना जाता था।

कालेज छोडने के बाद पुश्किन का जीवन कुछ समय तक सभ्य समाज के ससर्ग मे अव्यवस्थित व्यतीत हुआ। उसके उग्र स्वभाव के कारण प्राय मित्रो से उसकी अनबन हो जाया करती थी। यही कारण था कि कभी-कभी वह अपने साहित्यिक और क्रान्तिकारी विचारो के मित्रो से अलग होकर धनी, आलसी और विलासी युवको की मडली मे अपने को खो बैठता था। इससे भी लेखक को लाभ ही हुआ, क्योकि उसने अपनी रचना 'इवगिन आनजिन' मे ऐसे पात्रो का सजीव चित्रण उपस्थित किया है।

१८१४ ई० मे पुश्किन की कविताएँ मासिक पत्रिका मे प्रकाशित होने लगी थी। उसने परियो की कहानी के रूप मे अपनी प्रथम कृति 'रूसनल और ल्डमिला' कविता मे प्रस्तुत की। प्रकाशित होते ही उसका प्रचार बढने लगा। कवि जनप्रिय हुआ।

पुश्किन की श्रेष्ठ रचना 'इवगिन ओनजिन' पद्य मे एक उपन्यास है। यह सत्य है कि बायरन के 'चाईल्ड हेराल्ड' से उसे अपनी पुस्तक की आकृति बनाने मे सहायता मिली थी, किन्तु उसकी यह रचना पूर्ण रूप से रूसी थी। उसमे रूसी जीवन का अत्यन्त मार्मिक वर्णन हुआ है। पुश्किन ने राजधानी से लेकर रईसो की छोटी जमीदारी तक के जीवन का वास्तविक चित्रण करने मे अपूर्व सफलता प्राप्त की थी।

सासारिक जीवन मे प्रविष्ट होने पर समाज के भिन्न-भिन्न अङ्गो का अध्ययन करने का पुश्किन को अवसर मिला। जार निकोलस प्रथम का शासनकाल था। पूँजीवादी अपनी विलासिता मे लीन थे। दूसरी ओर बन्धक-दासो के साथ वे अत्याचार कर रहे थे। शासन के प्रति विद्रोह की ज्वाला धधकती, लेकिन वह तत्काल ही बुझा दी जाती और अनेक देशभक्त वीर बलिदान हो जाते थे। पुश्किन ने स्वय अपनी आँखो से सब कुछ देखा था।

ओनजिन उस युग के युवक समाज का व्यजक प्रतिनिधि था। उसकी शिक्षा कभी जर्मन और कभी फ्रेंच शिक्षक द्वारा हुई थी। उन्नीस वर्ष की अवस्था मे वह एक बडी सम्पत्ति का मालिक होता है। इस वैभव मे उसे बन्धक-दास भी मिलते है, जिनकी ओर वह कुछ ध्यान नही देता। वह

पीटर्सबर्ग के उच्च जीवन मे प्रविष्ट होता है। वह प्रीतिभोजो मे सम्मिलित होता है। नाटक-गृहो मे भी वह बराबर जाता है। नृत्य-गृह मे वह बडे उत्साह से भाग लेता है, किन्तु वह जीवन से एक निराश युवक की भाँति दिखाई पडता है, जिसके ऊपर पूर्ण रूप से 'बायरनिज्म' का प्रभाव पडता है।

वह अपनी जमीदारी पर ग्रीष्मकाल व्यतीत करने के लिए बाध्य होता है। वही पर एक युवक कवि से उसका परिचय होता है। उस कवि की शिक्षा जर्मनी मे हुई थी और उस पर जर्मन स्वच्छन्दतावाद का पूर्ण प्रभाव था, वे दोनो अपने एक पडोसी परिवार से भी परिचित हुए थे। इस परिवार मे एक वृद्ध महिला थी। उसकी दो पुत्रियाँ ओलगा और टाटियाना स्वभाव मे एक दूसरी से भिन्न थी। ओलगा एक कलाहीन युवती थी जो किसी भी प्रश्न मे उलझी नही दिखाई पडती थी और प्रसन्नतापूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर रही थी। कवि उसके प्रेम मे उन्मत्त था और दोनो का विवाह शीघ्र ही होनेवाला था।

टाटियाना एक भावुक युवती थी और पुश्किन ने अपनी कला के पूर्ण सौन्दर्य से उसे एक आदर्शमय महिला चित्रित किया है। ओनजिन आरम्भ मे उससे प्रभावित होता है। वह उससे प्रेम करने लगती है। लेकिन ओनजिन राजधानी के उच्च वर्ग मे अपनी अगणित सफलताओ क परिणाम मे एक निराश और अस्त-व्यस्त जीवन ही प्राप्त करता है। वह टाटियाना जैसी ग्रामीण युवती के प्रति विशेष ध्यान नही देता। वह अपना प्रेम और भावनाएँ बडे सरल और स्पष्ट शब्दो मे एक पत्र द्वारा उसे सूचित करती है, लेकिन ओनजिन केवल उसका उपहास करता है।

एक दिन एक नृत्य-समारोह मे ओनजिन ओलगा के साथ मजाक करता है। ओलगा अपने प्रति ओनजिन की उत्सुकता देखकर प्रसन्न होती है। उसका प्रेमी कवि अपमान अनुभव करता है और अपने मित्र ओनजिन को 'डुएल' लडने के लिए प्रस्तुत करता है। ओनजिन द्वन्द्व करता है। कवि की हत्या होती है। अपने कवि मित्र की हत्या करने के पश्चात् ओनजिन उस प्रदेश से चला जाता है।

कई वर्ष बीत जाते है। बीमारी से उठने के बाद एक दिन टाटियाना उस गृह मे जाती है जहाँ ओनजिन ठहरा हुआ था, लेकिन जीवन के प्रति टाटियाना का कोई आकर्षण नही रहता। टाटियाना अपनी माँ के आग्रह पर मास्को जाती है और वहाँ वह एक वृद्ध सेनापति से विवाह कर लेती

है। विवाह के पश्चात् वह पीटर्सबर्ग आती है और अधिकारी वर्ग मे अपना एक विशेष स्थान बना लेती है। इस वातावरण मे ओनजिन उसे देखता है और पहचान नही पाता, किन्तु वह उसके प्रेम मे लीन हो जाता है। वह उसकी ओर ध्यान नही देती और उसके पत्रो का कोई उत्तर भी नही देती है।

एक दिन ओनजिन टाटियाना के घर जाता है। वह देखता है कि टाटियाना उसके पत्रो को पढ रही है और आँखो मे अश्रु भरे है। उसने जो उत्तर दिया था वह इतना मार्मिक और कारुणिक है कि रूसी-साहित्य मे इसका विशेष महत्त्व माना जाता है।

'ओनजिन! उस समय मै युवती थी और सुन्दरी थी और मैने तुम्हे प्यार किया था। लेकिन एक ग्राम्य-बाला का प्रेम ओनजिन के लिए तुच्छ था। तुमने मेरी ओन तनिक भी ध्यान नही दिया, लेकिन अब एक-एक पग पर तुम मेरा पीछा कर रहे हो, यह इसलिए कि मै एक धनी महिला के रूप मे हूँ और उच्च समाज मे मेरा आदर है।'

टाटियाना यह स्वीकार करती है कि वह ओनजिन को प्यार करती है, किन्तु अब जिसके साथ वह वैवाहिक बन्धन मे पड गई है, उसके प्रति वह अपने कर्तव्य से विमुख नही होगी।

पुश्किन ने टाटियाना के चरित्र को इतना उज्ज्वल और आदर्शमय चित्रित किया ह कि आगे चलकर सभी रूसी लेखक इस चरित्र से प्रभावित हुए है। टाटियाना जैसी युवती के स्वरूप का विकास ही तुर्गनेव और अन्य रूसी लेखको की रचनाओ मे भली भाँति दिखाई पडता है।

पुश्किन ने 'बोरिस गोडोनोफ' नाम का एक ऐतिहासिक नाटक लिखा था। उसने 'कैप्टन्स डाटर' उपन्यास गद्य मे लिखा था। रूसी-साहित्य के इतिहास मे इस पुस्तक का विशेष महत्त्व माना जाता है।

पुश्किन की स्वतन्त्र विचारधारा किसी बन्धन मे नही रह सकती थी। पुश्किन ने 'ओड टू लिबरटी' और अन्य अनेक छोटी कविताओ मे अपने क्रान्तिकारी विचारो को व्यक्त किया। उसने शासक के प्रति भी व्यग्य किया था। इसका परिणाम यह हुआ कि १८२० ई० मे केवल २० वर्ष की अवस्था मे, दक्षिण रूस मे वह निर्वासित कर दिया गया। उस समय उसका जीवन अनियन्त्रित था और अपनी भावुकता मे, कुछ समय के लिए वह भ्रमण करनेवाली 'जिप्सी' जाति की मडली मे सम्मिलित हो गया था। इसके बाद उसे क्रीमिया और काकेशस की यात्रा

करने की आज्ञा मिली। इस काल मे कवि ने अपनी उत्कृष्ट गीतात्मक कविताओ को जन्म दिया।

१८२४ ई० मे ओडेसा मे उसका रहना कठिन हो गया। इसका प्रमुख कारण यह था कि वहाँ से वह ग्रीस की स्वतन्त्रता के युद्ध मे भाग लेने के लिए बायरन के साथ सम्मिलित होना चाहता था। इस घटना से अग्रेज कवि बायरन से उसकी घनिष्ठता का परिचय मिलता है। जार द्वारा तत्काल ही उसे आज्ञा मिली कि वह मध्य रूस मे अपनी जमीदारी के स्थान पर निवास करे। पुश्किन ने उस समय अपनी सुन्दर रचनाओ का निर्माण किया।

दिसम्बर १८२५ ई० मे जब सेण्ट पीटर्सबर्ग मे विद्रोह फैला, उस समय पुश्किन अपनी जमीदारी मे ही रहता था, अन्यथा अपने अनेक मित्रो के साथ उसका जीवन भी साइबेरिया के निर्वासन मे ही समाप्त हो जाता। उसने अपने निवासस्थान पर गुप्त पुलिस के पहुँचने के पहले ही सावधानी से अपने सभी पत्रो को अग्नि की गोद मे समर्पित कर दिया था। इसलिए उसके विरुद्ध कोई प्रमाण नही मिल सका। इस घटना का प्रभाव जार के ऊपर ऐसा पडा कि प्रसन्न होकर उसने उसे सेण्ट पीटर्सबर्ग आने का आदेश दिया। पुश्किन मुक्त तो हुआ, किन्तु उसकी कविताओ का परीक्षण स्वय जार करता था कि कही उनमे कोई आपत्तिजनक भावनाएँ तो नही है। कुछ समय बाद राजभवन मे उसे एक अधिकारी का पद प्राप्त हुआ, किन्तु पुश्किन वहाँ के जीवन से सन्तुष्ट नही था।

पुश्किन को आरम्भ से ही उच्च वर्ग के लोगो का जीवन अध्ययन करने का अवसर मिला था, किन्तु जीवन-यात्रा समाप्त करने के पूर्व उसकी विचार-धाराएँ परिवर्तित हो गई थी। धनी और सभ्य लोगो के विलासी-जीवन का वर्णन कैसे शोभा देता जब कि उस वर्ग के लोगो द्वारा बन्धक-किसान दासो के ऊपर भयानक अत्याचारो का आक्रमण हो रहा था। दूसरी ओर शासन की निरकुशता ने जनता को भयभीत और त्रस्त कर दिया था।

पुश्किन ने केथराइन द्वितीय के शासनकाल मे होनेवाले किसान-विद्रोह का जब ऐतिहासिक विवरण लिखा, उस समय किसानो का वास्तविक जीवन और उनकी विपत्तियो का भी वह अनुभव करने लगा था। राष्ट्र के भविष्य का प्रश्न उसे पहले से अधिक विस्तृत दिखाई पडा। उसका विश्वास था कि वह समय आवेगा जब रूस अपनी निद्रा से जागरित होगा और प्रसन्नता का प्रभात उसके सम्मुख होगा।

पुश्किन के 'केपटनस् डाटर' और 'हिस्ट्री आफ पगाचेव' नाम की अपनी लिखी दोनो पुस्तको मे किसान-विद्रोह का ऐतिहासिक वर्णन किया है। पुश्किन ने ही गोगल की 'डेड सोल्स' का कथानक बतलाया था।

पुश्किन ने जीवन का अन्त बहुत रहस्यपूर्ण रहा। वह एक 'डुएल' मे मारा गया। इस सम्बन्ध मे दो मत है। एक का कथन है कि अपनी पत्नी के कारण उसे द्वन्द्व मे लड़ना पडा। दूसरे का विश्वास है कि जार के कुचक्रो द्वारा उसे इस द्वन्द्व मे अपना जीवन समर्पित करना पड़ा। जनता मे उत्तेजना न फैले इसलिए जार ने आज्ञा दी थी कि उसका शव-सस्कार गुप्त रूप से ही किया जाय। जो हो, केवल ३७ वर्ष की अवस्था मे पुश्किन इस ससार से चला गया था।

---



# ह्यूगो

(१८०२–१८८५ ई०)

विक्टर ह्यूगो का पिता नेपोलियन की सेना मे जेनरल था। विक्टर ह्यूगो जब ग्यारह वर्ष का था उस समय उसने नेपोलियन को पेरिस की सडको से जाते हुए देखा था। उसने लिखा है कि उस समय मेरा आकर्षण उस जनता के प्रति नही था जो गाती-बजाती हुई बादशाह के साथ चल रही थी, बल्कि अपनी वीरता से परिपूर्ण स्वय शासक का व्यक्तित्व ही मेरे आकर्षण का विषय था।

ह्यूगो की माता का राज-वश के प्रति विशेष आदर और सम्मान था। यही कारण था कि माता और पिता का प्रभाव बालक पर भी पड़ा और विक्टर ह्यूगो राज्य के प्रति प्रेम रखने लगा।

माता-पिता के अव्यवस्थित जीवन के कारण बालक विक्टर ह्यूगो की शिक्षा की उचित व्यवस्था नही हुई। वह एक नगर से दूसरे नगर मे शिक्षा पाता रहा। इस तरह पेरिस, बोर्डो और मेडरिड मे उसका अध्ययन चलता रहा। सरकारी नौकरी के कारण विक्टर ह्यूगो के पिता की बदली एक स्थान से दूसरे स्थान पर होती रही। मेडरिड के गवर्नर होने के पश्चात जब उसका पिता पेरिस मे एक सम्मानित जेनरल के पद पर आया तभी से विक्टर ह्यूगो की शिक्षा व्यवस्थित रूप से हो सकी। परिणाम यह हुआ कि निश्चित रूप से किसी विषय का अध्ययन न कर प्रत्येक विषय का साधारण ज्ञान उसे प्राप्त हुआ। उसकी माता ने अपनी एक परिचिता से कहा——सचमुच यह सभी विषयो का साधारण ज्ञान रखता है।

विक्टर ने तेरह वर्ष की अवस्था मे महाकवि र्वाजल की कुछ कविताओ का अनुवाद किया था। स्कूल की काव्य-प्रतियोगिता मे उसे प्रथम पुरस्कार भी प्राप्त हुआ था। उसने अपने विद्यार्थी-जीवन मे ही वीर-काव्य, एक नाटक और एक उपन्यास लिख डाला था। उसके शिक्षकों का विश्वास था कि वह असाधारण प्रतिभावान् है।

१९ वर्ष की अवस्था मे एडली नाम की एक युवती से उसका विवाह हुआ। विवाह के बाद ही उसके जीवन मे रोमास आरम्भ हुआ। सुख-दुख मे उलझी हुई उसकी भावुकता विकसित होती रही। विक्टर ह्यूगो के नाटक 'हेरनानी' ने अत्यन्त कोलाहल उत्पन्न' किया। इस नाटक के प्रदर्शन के बाद मन कल्पित साहित्य के समर्थक और शास्त्रीय साहित्य के पक्षपातियो म युद्ध छिड गया। ह्यूगो ने इस नाटक के सम्बन्ध मे घोषणा की——मैंने इस नाटक मे सभी प्राचीन नियमो और सिद्धान्तो का उल्लघन किया है। मैंने सौन्दर्य पर ढँके हुए पुराने आवरण को नष्ट कर दिया है और अब, आगे चलकर, लेखक स्वतन्त्र होगे। उन्हे नियमो के बन्धन मे न पडना होगा।

ह्यूगो का यह नाटक अत्यन्त सफल हुआ। वह जनता मे विशेष सम्मान की दृष्टि से देखा जाने लगा। इसके बाद उसने 'नात्री-डेम-डी-पेरिस' नाम का उपन्यास लिखा। केवल छ मास मे ही उसने इस उपन्यास को लिखकर समाप्त किया था।

१९३० ई० की राज्यक्रान्ति मे परिवर्तन हुआ। चार्ल्स दशम को राज्यत्याग करना पड़ा। लुइस फिलिप गद्दी पर बैठा। इसी समय से ह्यगो लोकतन्त्री बना। उसने जनता का सक्रिय पक्ष लिया। १८४८ ई०

की क्रान्ति मे उसने भाग लिया था। उस समय उसने अपने जीवन तक की परवाह न की थी। तीन राते उसने जगकर भूख-प्यास से त्रस्त होकर व्यतीत की थी। उधर वह जनता के विद्रोह मे सम्मिलित था, इधर स्वय उसके मकान पर जनता ने आक्रमण कर दिया था। विद्रोहियो के नेता ने जब विक्टर ह्यूगो के कमरे मे प्रवेश किया तो 'ला मिजरेबल' के कुछ हस्तलिखित पृष्ठ बिखरे पडे थे। उसे पढकर ही उसे विश्वास हुआ कि लेखक भी उसी के पथ का है।

ह्यूगो ने 'ला मिजरेबल' उपन्यास को पेरिस मे लिखना आरम्भ किया था; लेकिन कुछ ही समय बाद नेपोलियन तृतीय के प्रति विद्रोह करने के कारण वह गुर्नसी नाम के टापू मे निर्वासित कर दिया गया और वही पर उसने उसे समाप्त किया। दुर्भाग्य ने एक साथ ही आक्रमण किया था। उसकी एक लडकी नदी मे डूबकर मर गई थी और दूसरी का असमय मे ही देहान्त हो गया। उसकी तीसरी पुत्री अपने असफल प्रेम मे पागल हो गई थी। इस तरह की पारिवारिक दुर्घटनाओ के वातावरण मे 'ला मिजरेबल' की रचना हुई।

'ला मिजरेबल' मानव जीवन की अत्यन्त कारुणिक कहानी है। लेखक ने मृत्यु के आतंक के मध्य मे जीवन-कुसुम प्राप्त किया था।

जीवन-कुसुम, आशाहीनों की आशा, निरीहो का जीवन-गान और विपदाग्रस्तो के प्रति भगवान् का असीम प्रेम–यही उसके उपन्यास की आधारशिला है। यत्रणा का दया मे और दया का प्रेम मे परिवर्तन ही उसकी विशेषता है। जिस दिन यह उपन्यास प्रकाशित हुआ था, कुछ ही घण्टो मे उसकी पचास हजार प्रतियाँ पेरिसवालो ने खरीद ली थी। इसमे सन्देह नही कि विक्टर ह्यूगो लेखक के रूप मे अपने जीवन मे पर्याप्त यशस्वी हुआ। उसकी रचनाओ से उसे अत्यधिक धन प्राप्त हुआ।

वृद्धावस्था मे भी ह्यूगो की शक्ति क्षीण नही हुई थी। वह कहता था— 'मेरे उज्ज्वल केशो मे वसन्त का प्रेम निवास करता है।' उसका सिद्धान्त था कि दु:ख ही सुख के आरम्भ का गायन है। उसके दो पुत्रों का देहान्त हुआ। पत्नी भी चल बसी। इस तरह भयानक आघातो के कारण वह कर्तव्यशून्य नही हुआ। १८७० ई० मे जर्मनी ने फ्रास पर आक्रमण किया। ह्यूगो निर्वासन मे था। उसने बडे ओजस्वी और प्रभावशाली शब्दो मे जनता को युद्ध का सामना करने के लिए उत्साहित किया।

अस्सी वर्ष की अवस्था मे ह्यूगो का जन्मदिवस पेरिस मे बड़े समारोह

से मनाया गया था। फूलो से लदी गाडियाँ चली आ रही थी। पचास हजार बालक-बालिकाएँ गाती और नृत्य करती अपने बूढे दादा ह्यूगो के सम्मान मे प्रदर्शन कर रही थी और हजारो मजदूर लेखक का विख्यात राष्ट्रीय गान गा रहे थे।

ह्यूगो की ख्याति और यश अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुका था। उसकी चिर-प्रेयसी जुलियट भी वृद्धावस्था मे उसका साथ छोडकर चली गई। अब उसकी एक पगली पुत्री जीवित थी। बूढा लेखक अपने पौत्रो के बीच मे घिरा हुआ दिन काट रहा था। जब उसे मृत्यु का आमत्रण मिला तो उसने बच्चो से कहा—मेरे प्यारे बच्चो, अब मै तुम्हे छोड रहा हूँ। मै अब स्वर्ग के अपने उन स्वर्गीय कुसुमो को देखने जा रहा हूँ। तुम मुझे नही देखोगे, लेकिन मै सदैव तुम्हारे साथ रहूँगा और तुम्हे आशीर्वाद दूँगा।

मृत्यु के बाद उसके मित्र उसका शव-सस्कार राजकीय सम्मान के साथ करना चाहते थे, लेकिन ह्यूगो की अन्तिम आकाक्षा थी कि वह गरीबो के कब्रिस्तान मे ही दफन किया जाय। उसने अपना पचास हजार फ्रैक गरीबो के लिए अर्पित किया था।

उसका अन्तिम विश्वास था—'मेरे शव-सस्कार के समय चर्च की सभी प्रार्थनाओ का बहिष्कार किया जाय। मै एकमात्र भगवान् मे विश्वास करता हूँ।'

फ्रास मे गणतन्त्र का गान करनेवाली आत्मा सदैव के लिए विलीन हो गई।

विक्टर ह्यूगो फ्रेच साहित्य का महारथी था। उसने साहित्य के सभी अगो की पूर्ति की थी। अपने समय मे वह पेरिस मे सबसे सुन्दर युवक था। उसका व्यक्तित्व अत्यन्त प्रभावशाली था। उसका कवि-हृदय अत्यन्त भावुक और काल्पनिक था।

इँग्लैण्ड के युगान्तरकारी कवि बायरन का उस पर प्रभाव पडा था। ह्यूगो ने प्राचीन शास्त्रीय साहित्य का खण्डन करते हुए नवीन स्वच्छन्द साहित्य का निर्माण किया।

योरोपीय साहित्य मे ह्यूगो ने प्रथम बार अपराधी श्रेणी के चरित्रो का चित्रण किया है। उसने उपन्यास-ससार के सम्मुख नवीन आदर्श उपस्थित किया।

इस वर्ष (१९५२ ई०) रूस मे सर्वत्र ह्यूगो का डेढ सौ वर्षीय जन्म दिवस बडे उत्साह से मनाया गया है। सोवियत रूस की ४४ भाषाओ मे ह्यूगो की रचनाओ का अनुवाद प्रकाशित हो चुका है।

---



# ड्यूमस

(१८०२–१८७० ई०)

अलिक्जेन्डर ड्यूमस जब चार वर्ष का था, तब उसके पिता का देहान्त हो गया था। उसकी माता जब शव वाले कमरे से बाहर आ रही थी, तब उसने देखा कि उसका नन्हा पुत्र सीढियो पर चढकर एक भारी बन्दूक उतारने का प्रयत्न कर रहा है।

'कहाँ जा रहे हो बेटा?'—माँ ने पूछा।

'मै स्वर्ग मे जा रहा हूँ'—बालक ने उत्तर दिया।

'अरे! किस लिए दयानिधान?'—माँ ने पूछा।

'भगवान् से युद्ध करने जा रहा हूँ, क्योकि उसने मेरे पिता को मारा है?'—बालक ने कहा।

अलिक्जेन्डर के आरभिक जीवन की यह घटना इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि वह एक उद्धत प्रकृति का व्यक्ति था। इसमे सन्देह नही कि जीवन की विकट समस्याओ से युद्ध करने मे वह सदैव एक प्रचण्ड योद्धा के समान कटिबद्ध रहता था।

उसका पितामह एक टापू मे राजा की भाँति शासन करता था। वहाँ अगणित काले दास और दासियाँ उसकी सेवा मे प्रस्तुत रहते थे। उन्ही मे से लुईस ड्यूमा नाम की एक दासी थी। वह अपने स्वामी की विशेष कृपापात्री थी। उसी के गर्भ से अलिक्जेन्डर के पिता टामस का जन्म हुआ था।

अपनी युवावस्था मे टामस सेना मे सम्मिलित हो गया था। सात वर्ष मे वह सेनापति के पद पर पहुँच गया। वह सदैव अपनी सेना के अग्रिम भाग मे युद्ध करता था। एक बार आस्ट्रिया की सेना से युद्ध करते समय एक

पुल की रक्षा मे वह अकेला ही पूरी रेजिमेन्ट से लडता रहा। वह बडा साहसी योद्धा था। एक बार युद्ध मे वह बुरी तरह से घायल हो गया। उसके एक सहयोगी ने पूछा—जेनरल, आप अधिक घायल हो गये है?

उसने उत्तर दिया—कोई चिता नही, मैंने बहुतो के प्राण लिये है। यह कहते-कहते उस वीर योद्धा के प्राण निकल गये।

नेपोलियन की सेना मे भी वह बडी वीरता से लडता रहा, किन्तु जब नेपोलियन ने फ्रास का शासन-भार ग्रहण किया तब कतिपय कारणो से टामस को सेना से निकाल दिया था।

टामस ने अपना विवाह किया। उसकी पत्नी के गर्भ से अलिक्जेन्डर का जन्म हुआ। बाल्यकाल से ही अलिक्जेन्डर विद्रोह की भावना से पूर्ण था। वह कहता था—इस नीच नेपोलियन ने मेरे पिता को अपमानित किया है। मै जीवन भर ऐसे दुष्टो से लडता रहूँगा।

अलिक्जेन्डर के शरीर मे काले-गोरे रक्त का मिश्रण था, किन्तु वह स्वत गौर वर्ण का था। उसकी नीली आँखे थी, केवल उसके मोटे होठ इस मिश्रण का सकेत देते थे।

अलिक्जेन्डर की माँ उसे शिक्षित बनाना चाहती थी, किन्तु अलिक्जे-न्डर की रुचि उस ओर न थी। वह घर से भागकर कई दिनो तक जगल मे भ्रमण करता रहता।

सन् १८१५ ई० मे एक दिन अलिक्जेन्डर ने देखा कि सडक पर एक गाडी जा रही है, जिसमे नेपोलियन वाटरलू के लिए प्रस्थान कर रहा है। कुछ ही दिनो के बाद उसने फिर उसी गाडी को देखा, जिसमे हताश और क्षीण नेपोलियन वाटरलू से भागकर लौट रहा था।

नेपोलियन के पतन के बाद अलिक्जेन्डर की माता ने अपनी जीविका के लिए बहुत प्रयत्न किये। उसने अपने पुत्र को किसी कार्य मे लगने के लिए बहुत उत्साहित किया। अलिक्जेन्डर की लिखावट बड़ी सुन्दर थी, अतएव उसे एक स्थान पर क्लर्क का काम मिल गया।

साहित्य के प्रति अलिक्जेन्डर की रुचि थी। वह वाल्टेयर आदि लेखको से मिलता रहता था।

पेरिस मे आकर उसने जीवन मे आगे बढने का प्रयास किया। वह एक नाटचशाला मे गया और वहाँ एक प्रसिद्ध अभिनेता से मिला। अभिनेता ने पूछा—मेरे मित्र! तुम क्या काम करते हो?

उसने उत्तर दिया—मै एक क्लर्क हूँ, लेकिन मै एक नाटककार बनना चाहता हूँ।

अभिनता ने उसे उत्साहित किया और आशीर्वाद दिया कि वह इस कार्य मे अवश्य सफल होगा।

अलिक्जेन्डर उस दिन के बाद निरतर प्रयत्न करता रहा। वह कभी भी निराश नही होता था। १८२८ ई० मे वह एक सफल नाटककार माना गया। जनता ने उसका अभिनन्दन किया। उसे पेरिस के रगमच के नवीन राजा का गौरवपूर्ण पद प्राप्त हुआ। उसके नाटक अत्यन्त सफलता से खेले जाते थे। वह अपनी विजय पर प्रसन्नता से खिल उठता था।

उन दिनो चार्ल्स दशम ने प्रेस की स्वतन्त्रता हरण कर ली थी। डयूमस ने इसके विरोध मे बहुत कार्य किया। उसने क्रान्ति मे प्रमुख भाग लिया। उसकी साहित्यिक सफलता बहुत आगे बढ गई थी। उसका 'एनटोनी' शीर्षक नाटक जनता मे समादृत हुआ था।

इस ससार मे सुख-दुख के ताने-बाने से ही तो नियति अपना खिलवाड करती रहती है। अच्छे और बुरे दिन जीवन में आते-जाते रहते है। डयूमस को भी जीवन मे संघर्ष करना पडा। उसके जीवन मे भी अनेक घटनाएँ घटित हुई। उस पर हैजे का आक्रमण हुआ। इसके बाद बन्दी होने के भय से उसे देश छोडकर भागना पडा। परिस्थितियाँ जैसे उसे निश्चिन्त होकर नही बैठने देना चाहती थी; परन्तु वह अपने जीवन को सुखमय बनाने मे सदैव प्रयत्नशील रहता था। वह अत्यन्त चतुर और कुशल व्यक्ति था। जब कभी उसे अपमान का सामना करना पडता तो वह केवल मुस्करा देता था। एक बार एक सभ्य सज्जन ने अपने वश के गर्व मे उससे पूछा—आप अपने पूर्वपुरुषो का परिचय दीजिए।

अलिक्जेन्डर ने कहा—मेरे पिता क्रिओल, मेरे दादा नीग्रो, और मेरे परदादा बन्दर थे। मेरे वश का आदि वही है जो तुम्हारे वंश का अत है। इसमे सदेह नही कि डयूमस के इस परिहासपूर्ण उत्तर से वे सज्जन अवश्य ही पानी-पानी हो गये होगे।

एक बार किसी साहित्यिक गोष्ठी मे डयूमस की बालजाक से भेंट हुई। साहित्यिक पुरुषो में भी परस्पर ईर्ष्या इत्यादि के भाव रहते ही है। बालजाक ने कुशल नाटककार डयूमस पर व्यग्य कसते हुए कहा—मेरी प्रतिभा जब समाप्त हो जायगी तब मै नाटक लिखना आरभ करूँगा।

अलिक्जेन्डर ने चुटकी लेते हुए कहा—तब तो आप तुरन्त ही नाटक लिखना आरभ कर दीजिए।

१८३२ ई० मे ड्यूमस के नाटक 'टेरेसा' मे ईडा फेरियर नामक एक अभिनेत्री कार्य कर रही थी। उसे अपने अभिनय मे बडी ख्याति मिली। उसने लेखक से कहा—मै आपका उपकार कैसे चुकाऊँ?

कई वर्षो तक लेखक से उसका घनिष्ठ सम्बन्ध रहा। अत मे एक दिन लोगो ने आश्चर्य से सुना कि दोनो वैवाहिक बन्धन मे बँध गये है। ड्यूमस अब शान्ति से वैवाहिक जीवन व्यतीत कर रहा था। क्रान्ति और विद्रोह की भावनाएँ शिथिल हो चुकी थी। रगमच से भी उसकी रुचि हट गई थी। उसकी प्रतिभा एक नवीन मार्ग खोजने मे व्यस्त थी। वह कोई नूतन प्रयोग करना चाहता था।

ड्यूमस का यह नूतन प्रयोग ऐतिहासिक उपन्यासो की रचना है। उसका प्रथम ऐतिहासिक तथा प्रेम-परक उपन्यास 'थ्री मस्कीटिअर्स' है। उसने ऐतिहासिक अनुसधान के लिये कई लेखको को अपने यहाँ नियुक्त किया। प्राचीन उपेक्षित तथ्यो की ओर ध्यान न देकर वह इतिहास के जीवित तथ्यो पर ही विशेष ध्यान देता था।

उसकी लेखनी अब उपन्यासो पर वेग से चल रही थी। प्रातकाल सात बजे से लेकर रात मे सात बजे तक वह बराबर लिखता रहता था। कभी-कभी भोजन वैसे ही सामने पडा रहता; परन्तु उसका ध्यान खाने की ओर भी न जाता था। कोई भेट करने वाला आ जाता तो बाये हाथ से अभिवादन करके वह दाएँ हाथ से बराबर लिखता ही रहता था। अपने उपन्यास के पात्रो के साथ ही मानो उसका जीवन व्यतीत हो रहा था। वह उनसे बोलता, व्यग्य करता और विभिन्न क्रिया-कलापो की ओर प्रेरित करता रहता था। एक बार किसी अभ्यागत ने उसके नौकर से कहा—जब तुम्हारे मालिक अकेले होगे तभी मै उनसे मिलूँगा।

नौकर ने उत्तर दिया—वह अकेले है, अपने पात्रो की प्रतिध्वनि सुन रहे है।

तात्पर्य यह है कि अलिक्जेन्डर दिनभर स्वनिर्मित पात्रो के साथ रहता और रात म भी उन्ही का स्वप्न देखा करता था। जब लोग उससे पूछते कि वह कहानियाँ कैसे लिखता है तब वह उत्तर देता—मै स्वत. कहानियाँ नही लिखता प्रत्युत स्वय कहानियाँ ही मेरे मस्तिष्क से प्रकट हो जाती है।

डच्यूमस का कहना था कि लेखक को प्रसन्नतापूर्वक लिखना चाहिए, जिससे उसके पाठक भी प्रसन्न रह सके। उस कला का भला क्या महत्त्व है, जिससे जनता को कोई आनन्द ही प्राप्त न हो। उसे न तो कवि बनने की इच्छा थी, और न वह महान् पडित बनने की कामना करता था। वह तो एक कुशल कथाकार बनना चाहता था। मनोरजन ही उसका एकमात्र उद्देश्य था।

एक बार एक आलोचक ने डच्यूमस से कहा कि तुम घटनाओ का वर्णन तो करते हो, परन्तु उसका अनुभव नही करते।

डच्यूमस ने उत्तर दिया—यदि मै घटनाओ का अध्ययन करूँ तो मुझे लिखने का कब अवकाश मिलेगा?

अलिक्जेन्डर के शत्रु प्राय कहा करते थे कि उसने उपन्यासो का एक कारखाना खोल रक्खा है और वह दूसरो की सामग्री अपनी बनाकर निकालता है।

लेखक के जीवन के पिछले पहर मे उसका पुत्र स्वय एक कुशल और प्रसिद्ध लेखक बन गया था। उसके पुत्र की कई रचनाओ को स्वयं उसकी कृतियो से कही अधिक ख्याति मिली। पिता पुत्र से ईर्ष्या करने लगा। दोनो मे प्रतिस्पर्धा थी। दोनो एक दूसरे से आगे बढ जाना चाहते थे, किन्तु दोनो का आपस मे स्नेह था। पिता कहता—मैंने एक लडके को आगे बढाया है जो अब सर्प की भाँति हो गया है।

पुत्र कहता—मैंने एक पिता को आगे बढाया है, जो अब एक बालक के समान हो गया है।

१८५९ ई० मे इटालियन स्वाधीनता-सग्राम के लिये डच्यूमस ने पचास हजार फ्रैंक अर्पित किये और गेरिबाल्डी के साथ वह अपने जीवन को उत्सर्ग करने के लिए भी प्रस्तुत हो गया था।

वह कभी विश्राम लेना नही चाहता था। ६३ वर्ष की अवस्था मे इटली के क्रातिकारियो से मिलकर वह पेरिस लौटा। उसका पुत्र स्टेशन पर उससे मिला। रात्रि के दस बजे का समय था।

पुत्र ने कहा—पिताजी, आप यात्रा के कारण बहुत थक गये होगे। अब तो आप घर ही चलिएगा न?

डच्यूमस ने कहा—नही, अभी मै गोटेर से मिलना चाहता हूँ।

पिता-पुत्र जब गोटेर के मकान पर पहुँचे तो उन्होने देखा कि मकान का दरवाजा बन्द है।

डच्यूमस ने आवाज देकर उसे जगाया।

'कौन है?'—उसने पूछा।

'ड्यूमस और उसका पुत्र'—उत्तर मिला।
'लेकिन हम सब लोग इस समय सो रहे है।'
'इतनी जल्दी शय्या पर! आलसी आदमी, उठ बैठो।'
चार बजे सबेरे पिता और पुत्र वहाँ से अपने घर पहुँचे।
पिता ने पुत्र से कहा—बेटा मेरे लिये एक लैम्प ला दो।
'किस लिए'—पुत्र ने पूछा।
'मुझे कुछ कार्य करना है।'—पिता ने उत्तर दिया।

पिता अपना कार्य करने लगा और पुत्र शयन के लिये चला गया। वह जब उठा, तब प्रभात का समय बीत चुका था। मेज पर तीन पत्रिकाओ के लिए तीन लेख रखे हुए थे। ड्यूमस इस समय शीशे के सम्मुख दाढी बना रहा था और गाता जाता था।

'पापा, तुम्हे कैसा लग रहा है?'—लडके ने पूछा।

'एक पुष्प की भाँति स्वच्छ।'—पिता ने उत्तर दिया।

सहसा उसकी आँखे चमक उठी। पिता ने व्यग्य करते हुए कहा—देखो हम नौजवान लोग उतनी जल्दी नही थकते जितनी जल्दी तुम्हारे जैसे बूढे थक जाते हैं।

यही वह अदम्य उत्साह, साहस और अथक परिश्रम करने का स्वभाव है, जिसने ड्यूमस जैसे कलाकार का निर्माण किया था।

६८ वर्ष की अवस्था में उस नौजवान लेखक ने अपनी लेखनी को विश्राम दिया। उसका अतिम प्रेम-सम्बन्ध एक अमेरिकन अभिनेत्री के साथ हुआ था। किन्तु कुछ समय बाद वह अभिनेत्री घोडे से गिरकर मर गई थी और उसी के साथ मानो ड्यूमस की स्फूर्ति ने भी सदैव के लिये बिदा ले ली थी।

ड्यूमस अब अपने पुत्र के घर आया। उसने कहा—मेरे बच्चे! मै तुम्हारे यहाँ मरने के लिए आया हूँ।

इसके बाद वह गभीर और मौन हो गया। उसके मित्र कभी-कभी दु खी हृदय से कहा करते—अब हमारे मित्र ड्यूमस की प्रतिभा का अत निकट आ गया है।

पुत्र कहता—मेरे पिता की प्रतिभा कभी समाप्त ही नहीं हो सकती। यदि वह आजकल की भाषा में हम लोगो से बाते नही करता है तो इसका कारण यह है कि वह अनन्त काल की भाषा का ज्ञान प्राप्त करना चाहता है; किन्तु ड्यूमस का अतकाल अब निकट आ गया था। अपने प्रिय पुत्र के घर पर ही उसका देहान्त हुआ।



# गोगल

(१८०९-१८५२ ई०)

गोगल के साथ रूसी साहित्य का एक नया युग आरम्भ होता है। गोगल की पुस्तक का प्रकाशक जब उस स्थान पर गया, जहाँ गोगल का कहानी-सग्रह 'इवनिग्स् इन ए फार्म नियर डिकानका' कम्पोज हो रहा था तो उसने देखा कि कम्पोजिटर हँस रहे है। उसे आश्चर्य हुआ और उसने कारण पूछा। फोरमैन ने उत्तर दिया कि गोगल की पुस्तक इतनी हास्यमय है कि कम्पोज करते समय वे अपनी हँसी किसी तरह नही रोक सकते।

गोगल का जन्म यूक्रेन के एक छोटे जमीदार के गृह मे हुआ था। यूक्रेन के लोगों का जीवन उस समय मध्य रूसी भाग से भिन्न था। मध्य रूस की भाँति यूक्रेन मे सडके नही थी। बगीचे और खेतो के बीच मे छोटे-छोटे मकान बने हुए थे। वहाँ का दृश्य सुन्दर और रमणीक था। यूक्रेन के लोगो मे प्राचीन काल से वीरकाव्य और गीतो की परम्परा चली आ रही थी। उस समय से, जब कि वे स्वतन्त्र कोजाक के रूप मे उत्तर मे पोल और दक्षिण मे तुर्क जाति से युद्ध करते थे। उनकी भाषा मधुर और सगीतमय थी, किन्तु गोगल ने रूसी भाषा मे ही अपनी कृतियो का निर्माण किया। गोगल ने रूसी और यूक्रेनियन जाति के लोगो मे एकता स्थापित करने मे महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

गोगल की आरम्भिक शिक्षा एक ग्रामीण छोटे नगर मे हुई थी। १९ वर्ष की अवस्था मे ग्रेजुएट होने के पश्चात् वह सेण्ट पीटर्सबर्ग गया। गोगल की अभिलाषा थी कि वह रगमच पर अभिनेता का कार्य करे; किन्तु नाटचशाला के मैनेजर ने उसे निराश किया। उसने अपनी जीविका के लिए राजकीय विभाग मे एक क्लर्क का स्थान ग्रहण किया।

गोगल के पिता मे साहित्यिक प्रतिभा थी। उसने यूक्रेनियन भाषा मे कुछ सुखान्त नाटको की रचना की थी, किन्तु गोगल के बाल्यकाल मे ही उसका देहान्त हो गया था। गोगल मे भी साहित्यिक रुचि विकसित हो रही थी। १८३० ई० मे गोगल का प्रथम उपन्यास 'सेण्ट जोन्स ईव' एक मासिक पत्रिका मे प्रकाशित हुआ था। इसमे लेखक ने यूक्रेनियन जीवन का चित्रण किया था।

गोगल जीवन के वास्तविक स्वरूप के चित्रण को ही महत्त्व देता था। उसके निर्मित चरित्र अत्यन्त स्वाभाविक और यथार्थ रूप मे प्रकट होते है। लेखक की प्रतिभा हास्यरस की ओर जब विकसित हुई तब उसकी रचनाओ मे जीवन का दु खी वातावरण भी उनमे मिश्रित हो गया। इसलिए पुश्किन ने कहा था कि गोगल के हास्य मे अदृश्य अश्रुकण अन्तर्निहित है।

गोगल की सभी कहानियाँ किसानो के जीवन पर नही लिखी गई है। उसकी कुछ कहानियो मे छोटे नगरो के उच्च वर्ग के लोगो का वर्णन है। ऐसी ही एक कहानी है जिसका शीर्षक है—'कैसे इवान इवानोविच' ने इवान निकिफोरईच से झगडा किया ?' यह एक बडी हास्यमय कहानी है। दो पडोसी इवानोविच और निकिफोरईच आपस मे झगडा करते है। इस झगड़े का यह कारण होता है कि निकिफोरईच अपने मित्र इवानोविच के पास एक पुरानी बन्दूक देखता है और उसे वह उससे प्राप्त कर लेता है। बदले मे उसका मित्र उससे कुछ लेता नही। इस पर निकिफोरईच ने कहा कि यदि वह पैसा नही लेना चाहता तो बदले मे एक सूअर ले ले। इस बात पर उसका मित्र अत्यन्त रुष्ट होकर झगडा करता है और कहता है कि भला यह भी सम्भव है कि बन्दूक, जो वीरता की प्रतीक है, के बदले मे सूअर लिया जाय! दोनो का झगडा इतना बढता है कि एक न्यायालय से दूसरे न्यायालय मे जीवन भर भटकते हुए वे दोनो वृद्ध और निर्धन हो जाते है।

गोगल ने हास्यरस का एक सुखान्त नाटक 'इन्सपेक्टर जेनरल' लिखा है। यह नाटक इतना हास्यमय है कि दर्शक उसे रगमच पर देखकर हँसते-हँसते लोट-पोट हो जाते है। इस नाटक से रूसी साहित्य मे एक नवीन युग आरम्भ होता है। यह नाटक रूसी ही नही, विश्व-साहित्य का एक रत्न माना जाता है। इस वर्ष (१९५२ ई०) सोवियत रूस मे गोगल की जयन्ती बड़े उत्साह और समारोह से मनाई गई है। इस अवसर पर समस्त देश मे गोगल के नाटको का प्रदर्शन हुआ। उसके सम्बन्ध मे

अनेक भाषण हुए। उसकी विशाल प्रतिमा स्थापित हुई और उसकी पुस्तको का नवीन सस्करण प्रकाशित किया गया। केवल सोवियत-काल मे ही लेखक की पुस्तको के विभिन्न सस्करण, सब मिलाकर, अट्ठारह लाख प्रतियो के हुए।

'इन्सपेक्टर जेनरल' नाटक मे लेखक ने शासन के कठपुतले अधिकारी-वर्ग का बहुत ही उपयुक्त अकन किया है। मूर्खता, अनभिज्ञता और विलासिता मे लिप्त होकर किस तरह वे जनता का शोषण और उस पर अत्याचार करते है, इस पर लेखक ने इतनी कुशलता से व्यग्य की चुटकियाँ ली है कि हँसी के साथ उनके प्रति घोर घृणा के भाव भी जागरित होते है।

इस नाटक के कारण लेखक को बडी कठिनाइयो का सामना करना पडा था। बहुत प्रयत्न करने पर जार द्वारा नाटक को रगमच पर खेलने की आज्ञा मिली थी। लेखक की अन्य पुस्तक 'डेड सोल्स' का प्रथम सस्करण समाप्त हो जाने पर दूसरे संस्करण को छापने की आज्ञा किसी तरह भी नही मिली थी।

गोगल की कृतियो मे 'डेड सोल्स' एक महान् रचना है। इस उपन्यास मे बहुत ही साधारण कथा-वस्तु है। जब रूस मे गुलामी प्रथा प्रचलित थी, उस समय प्रत्येक धनी और सामन्त की प्रबल आकाक्षा रहती थी कि वह सैकडो गुलामो का स्वामी बना रहे। उनके ये बन्धक-दास गुलामों की भाँति बिकते थे।

टीचिकोफ नाम के एक धनी जमीदार ने बड़ी चतुर कल्पना के अनुसार एक नई युक्ति सोच निकाली। प्रति दस या बीस वर्ष मे देश के लोगो की जन-गणना होती थी। अन्तिम जन-गणना के अनुसार प्रत्येक गुलाम का स्वामी अपने प्रत्येक गुलाम के लिए निर्धारित कर देने के लिए बाध्य था। उन बन्धक-दासो मे जिनकी मृत्यु हो जाती, उन पर भी उन्हे कर देना पडता था। इस अनियम से लाभ उठाने के लिए टीचिकोफ मृतक गुलामो को बहुत अल्प मूल्य मे खरीदेगा। निश्चय ही गुलामो का स्वामी प्रसन्नता-पूर्वक अपना बोझ हल्का करने के लिए किसी भी मूल्य पर उनका विक्रय कर देगा। टीचिकोफ जब दो-तीन सौ इन काल्पनिक दासो को खरीद लेगा तब रूस के दक्षिणी क्षेत्र मे कही सस्ती जमीन खरीदकर इन मृतक दासो के नामो को कागज पर दर्ज करा देगा। यह कार्य इतनी कुशलता से होगा कि ऐसा प्रतीत होगा कि वास्तव मे वे दास उस स्थान पर निवास करते

है। इसके पश्चात् टीचिकोफ अपनी इस नवीन प्रकार की रियासत को 'स्टेट लैंड लार्ड बैंक' मे रेहन कर पर्याप्त धन प्राप्त कर लेगा।

अपने इन्ही विचारो को पूर्ण करने के प्रयत्न मे टीचिकोफ एक प्रान्तीय नगर मे जाता है। वहाँ वह सभी प्रमुख अधिकारियो से मिलता है।

गोगल ने अपने पात्र का इतना सजीव चरित्र-चित्रण किया है कि सचमुच पढते समय उस पात्र की आकृति आँखो के सम्मुख उपस्थित हो जाती है।

टीचिकोफ पहले गवर्नर से मिलता है, इसके पश्चात् छोटे गवर्नर, मजिस्ट्रेट, पुलिस के प्रधान आदि सभी अधिकारियो के प्रति वह सम्मान प्रकट करता है। फिर भी उसे सन्तोष नही होता और वह साधारण अधिकारियो तक के यहाँ पहुँचता है। नगर का कोई भी शासन-विभाग मे प्रमुख कार्य करनेवाला व्यक्ति उसकी दृष्टि से छूट नही जाता है। वह प्रत्येक के प्रति नम्रता और चापलूसी से बाते करता है। गवर्नर से बाते करते समय उसने कहा कि नगर मे प्रवेश करते समय मुझे ऐसा विश्वास हुआ कि मै स्वर्ग मे आ गया हूँ। नगर की सडके मखमल की तरह सुन्दर है। इसी तरह सभी को उसने लम्बी-चौडी बाते कर प्रसन्न किया। यहाँ तक कि उन स्टेट कौसिलरो को उसने 'हिज एक्सेलेसी' कहकर सम्बोधित किया जो उस सम्मान के अधिकारी नही थे। किन्तु अपनी इस असावधानी के कारण उसने उन्हे मुग्ध कर लिया।

टीचिकोफ जब अपने सम्बन्ध मे बाते करता तो अत्यन्त नम्रतापूर्वक कहता कि इस ससार मे वह एक साधारण व्यक्ति है। केवल सत्य का पथ ग्रहण करने के कारण उसे अनेक आपदाओ का सामना करना पडा और उसके बहुत से शत्रु हो गये। अब वह शान्तिपूर्वक दिन व्यतीत करने के लिए वहाँ आया है। टीचिकोफ वार्तालाप में इतना निपुण है कि किसी विषय पर कही भी कोई बातचीत चले वह बडी चतुरता से उसमे भाग ले लेता था। उसके इस स्वभाव के कारण सभी लोगो ने प्रसन्नता प्रकट की।

गोगल ने अपने इस उपन्यास मे कुछ ऐसे चरित्रो का निर्माण किया है, जो ससार के सभी पूँजीवादी देशो में आज तक दिखाई पडते है। ऐसे पात्र अपनी विभिन्न आँकृतियो मे सभी जातियो मे उत्पन्न होते है।

मेनिलोफ नाम के भूस्वामी से पहली बार टीचिकोफ मृत आत्माओ के खरीदने की बातचीत करता है। यह मेनिलोफ भी विश्वव्यापी श्रेणी का चरित्र है। उसे प्रथम बार देखकर धारणा होती है कि वह एक अच्छा

आदमी है, किन्तु अन्त मे उसका रूप गुप्त नही रहता। वह आनन्द का जीवन व्यतीत करता है। वह अपने किसानो और जमीदारी का तनिक भी ध्यान नही रखता। सब कुछ मैनेजर के अधीन है। उसके शासन मे दासो की अत्यन्त दुर्दशा होती है।

टीचिकोफ मृत आत्माओ को खरीदने एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाता है। उसके ससर्ग मे आये हुए अद्भुत चरित्रो को लेखक उपस्थित करता है। प्लियूसकिन नाम के एक कजूस का इतना मनोवैज्ञानिक चरित्र लेखक ने प्रस्तुत किया है कि सचमुच उससे अधिक कृपण पात्र का वर्णन विश्व-साहित्य मे मिलना कठिन है।

निकोलस प्रथम के पुलिस-विभाग को भली भाँति विदित था कि गोगल की रचनाओं का रूसी जनता पर विशेष प्रभाव है। उसकी रचनाओ पर बन्धन होने पर भी 'डेड सोल्स' की अगणित हस्तलिखित प्रतियाँ वितरित होती रही। जनता भली भाँति जानती थी कि लेखक ने खुलकर गुलामी का विरोध किया है। गोगल पहला लेखक है, जिसने रूस मे गुलामी के विरोध मे साहित्यिक आन्दोलन खडा किया। लेखक ने इस विषय पर अपना व्यक्तिगत विचार नही प्रकट किया। उसने केवल गुलामो के मालिको का जीवन-चित्र सामने रखा और मालिको का व्यवहार दासों के प्रति कैसा रहा इसको भी स्पष्ट किया।

गोगल यदि उन मालिको के अत्याचार और दासों के प्रति दुर्व्यवहार का वर्णन करता तो सम्भवत उतना प्रभाव न पडता जितना दासो के व्यर्थ के परिश्रम और उनका दुरुपयोग दिखाने से हुआ। इसमे सन्देह नही कि इस उपन्यास को पढकर गुलामी प्रथा के प्रति घोर घृणा होती है।

गोगल का साहित्यिक प्रभाव विशेष रूप से पडा। आज भी विश्व-साहित्य मे उसका एक महान् स्थान है। उसकी कला यथार्थवादी है, किन्तु उसमे मानवता की उन्नति के प्रति असीम अभिलाषा है। लेखक ने जब अपने हास्यपूर्ण चरित्रो को उपस्थित किया तब उसका यह उद्देश्य नही था कि केवल मानव दुर्बलता दिखलाकर हास्य उत्पन्न किया जाय। उसका एकमात्र लक्ष्य था कि सुन्दर और भव्य आकाक्षाओ के उन्नत शिखर पर मानवता आसीन हो। गोगल की दृष्टि मे कला प्रकाश का वह स्तम्भ है जिसके द्वारा उच्च आदर्श प्रदर्शित हो।

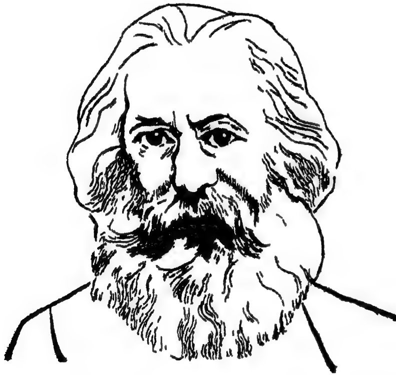
गोगल ने रूसी साहित्य मे प्रथम बार सामाजिक मूल तत्त्व को सम्मानित और महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। अब यह प्रश्न स्पष्ट है कि पुश्किन ने

नही, गोगल ने ही रूसी उपन्यासो मे यथार्थवाद का स्वरूप निर्धारित किया है। टाल्सटाय और तुर्गनेव का भी यही मत है।

प्राय देखने मे आता कि यथार्थवाद के नाम पर लेखक सदैव अश्लील और नग्न चित्रण को ही प्रमुखता देते है, किन्तु गोगल की कला की विशेषता है कि यथार्थवाद कैसे उच्च आदर्शो की सेवा के उपयोग मे सफल हो सकता है।

जीवन के अन्तिम दस वर्ष गोगल के बडे कष्टमय व्यतीत हुए। उस पर मानसिक रोगो ने आक्रमण किया था। अन्त मे दृढ धार्मिक विश्वास के साथ, मानवता की मगल-कामना करते हुए, उसकी जीवन-यात्रा मास्को मे समाप्त हुई।

---



# कार्ल मार्क्स

(१८१८–१८८३ ई०)

कार्ल मार्क्स ही एक ऐसा महापुरुष था, जिसने दीन-हीन-त्रस्त मजदूरो और किसानो के अपने स्वतन्त्र राज्य की कल्पना की थी। ससार मे साम्राज्यवाद और पूँजीपतियो का अत्याचार प्राचीन काल से चला आ रहा है; किन्तु उससे छुटकारा पाने का कोई मार्ग नही दिखाई पड रहा था। मार्क्स ने उससे छुटकारा पाने के लिए पथ-प्रदर्शन किया था। वह समस्त विश्व को दासता से मुक्त देखना चाहता था। उसने अपने जीवन मे ऐसे साहित्य का निर्माण किया, जिसके द्वारा मानव-जाति पूँजीवाद के बन्धन से मुक्त होने के युद्ध मे सफल हो। वह निरन्तर इस ओर कार्य करता रहा। यह ठीक है कि उसके जीवन मे उसके सिद्धान्तो को पूर्ण सफलता नही

मिली थी, किन्तु आज रूस और चीन उसके स्वप्नो के प्रत्यक्ष उदाहरण है। लेनिन, स्टालिन और माओ ने उसके सिद्धान्तो के अनुसार समाजवादी राज्य की स्थापना की है।

मार्क्स के सिद्धान्तो पर ही समाजवादी साहित्य का जन्म हुआ है। अतएव मार्क्स द्वारा ही विश्व-साहित्य मे एक नवीन धारा की उत्पत्ति हुई। इस समाजवादी-यथार्थवाद का प्रवर्तक मार्क्स ही है। साहित्य मे राजा की कहानी और धनियो के ऐश्वर्य एव विलासिता का वर्णन ही प्रमुख अग रहा है। अब उसका स्थान मानव के प्रतिदिन के जीवन ने ग्रहण किया है। मार्क्स भगवान् मे विश्वास नही करता था। उसके अनुयायी भगवान के स्थान पर उसके प्रति ही श्रद्धा रखते हैं। यही कारण है कि समाजवादी स्वतन्त्र देशो मे सभी स्थानो पर मार्क्स के चित्र की पूजा होती है।

मार्क्स यहूदी था। उसका पिता एक वकील था। उसका परिवार सम्पन्न और शिक्षित था। मार्क्स ने इतिहास और दर्शन का अध्ययन विश्वविद्यालय मे समाप्त कर प्रोफेसर होने का निश्चय किया था, किन्तु उसके क्रान्तिकारी विचारो के कारण उसे वह पद नही प्राप्त हो सका।

मार्क्स पर हेगल के दर्शन का विशेष प्रभाव पडा था। आरम्भ मे हेगल के आदर्शवाद का वह पक्षपाती था। इसके पश्चात् बर्लिन मे जिन लोगो ने हेगल के दर्शन से नास्तिक और क्रान्तिकारी तत्त्व निकाला उनके दल मे मार्क्स सम्मिलित हुआ। उसने राजनीतिक द्वन्द्व मे विशेष भाग लिया। १८४२ ई० मे क्रान्तिकारी सिद्धान्तो के एक पत्र का वह प्रधान सम्पादक नियुक्त हुआ। उसके सम्पादन मे पत्र की नीति प्रजापालित राज्य के सम्बन्ध मे और भी दृढ होती गई।

जर्मनी के प्रगतिशील पत्रो मे उस समय मार्क्स द्वारा सम्पादित पत्र का प्रमुख स्थान था। प्रशिया की सरकार के कडे नियत्रण मे पत्र का चलना कठिन हो गया। अन्त मे सरकार की आज्ञा के कारण पत्र बन्द हो गया।

१८४३ ई० मे मार्क्स ने अपना विवाह किया। अपनी पत्नी से बाल्य-काल से ही उसकी घनिष्ठता थी। मार्क्स की पत्नी जीवन भर उसके प्रति विश्वसनीय थी। आपत्तिकाल मे सदैव उसने अपने पति को सहयोग दिया था। वह एक उच्च कुल की महिला थी और उसके भाई ने प्रशिया की सरकार के मत्री के पद पर (१८५०–५८ ई० ) कार्य किया था। मार्क्स अपनी पत्नी के साथ पेरिस गया। जर्मनी छोडने के लिए वह बाध्य किया गया था।

पेरिस मे एगिल्स से मार्क्स की भेट हुई। एगिल्स जीवन भर मार्क्स का अभिन्न और अन्तरग मित्र था। दोनो ने मिलकर पेरिस के क्रान्तिकारी दल का पथ-प्रदर्शन किया। उस समय के प्रचलित धनियो के अनेक समाजवादी सिद्धान्तो का दोनो ने जोरो से खण्डन किया था। मार्क्स ने सामान्य जन के कम्यूनिज्म की रूपरेखा प्रस्तुत की और दृढ होकर कार्य करने लगा। मार्क्स ने एक पत्र भी निकाला, किन्तु भयकर क्रान्तिकारी होने के कारण सरकारी आज्ञा से उसे पेरिस भी छोडना पडा। वह बेलजियम गया।

बेलजियम मे मार्क्स के निर्देशानुसार १८४७ ई० मे एक गुप्त दल का कम्यूनिस्ट-लीग के नाम से सगठन हुआ। यह कम्यूनिस्ट पार्टी को विश्वव्यापी सस्था के रूप मे स्थापित करने का पहला प्रयत्न था। कम्यूनिस्ट-लीग की दूसरी काग्रेस के आदेशानुसार मार्क्स और एगिल्स ने मिलकर 'मेनिफेस्टा आफ कम्यूनिस्ट पार्टी' लिखकर प्रकाशित कराया। यह सामान्य-जन-विश्वव्यापी क्रान्तिकारी दल का पहला कार्यक्रम था। इसमे रचनात्मक कार्यक्रम के सम्बन्ध मे गम्भीरतापूर्वक विचार किया गया था। इस पुस्तिका का ऐतिहासिक महत्त्व है।

इसके बाद बेलजियम, जर्मनी और पेरिस आदि स्थानो मे कही भी मार्क्स को निवास करने की आज्ञा नही थी। अन्त मे मार्क्स लन्दन गया और उसका शेष जीवन वही व्यतीत हुआ।

मार्क्स लन्दन मे रहता था और एगिल्स मैनचेस्टर मे कार्य करता था। मार्क्स भयानक आर्थिक कष्टो मे उलझा हुआ था। वह अपने कार्य मे सदैव लीन रहता था। उसने लन्दन मे 'इटर्नेशनल वर्किङ्ग एसोसियेशन' नामक सस्था की स्थापना की और ससार के विभिन्न देशो मे मजदूर सगठन की एकता स्थापित की। वह विश्वव्यापी सामान्यजन के आन्दोलन का निर्देशन करता रहा। उसके प्रयत्न के कारण ससार के सभी देशो मे मजदूर आन्दोलन का जन्म हुआ। मार्क्स अपने घोर परिश्रम के कारण अपना स्वास्थ्य क्षीण कर रहा था।

मार्क्स के सबसे अधिक परिश्रम का कार्य 'केपिटल' पुस्तक थी। उसके निरन्तर अध्ययन और लेखन ने उसे शिथिल कर दिया। ऐसे समय मे उसका परिवार अर्थाभाव के कारण दारुण दुख भोग रहा था, किन्तु एगिल्स की उदार मित्रता ने उसे जीवित रहने का साधन प्रस्तुत किया। वह सदैव अपने प्रिय मित्र की सहायता करता रहा। यही कारण था कि

अपने दुर्दिन मे भी मार्क्स अपनी साहित्य-साधना से कभी विमुख नही हुआ। परिस्थितियो और शत्रुओ के कुचक्रो का आक्रमण भी उसे कभी विचलित नही कर सका। वह वीर योद्धा की भाँति युद्धक्षेत्र मे अपने कर्त्तव्य का पालन करता रहा।

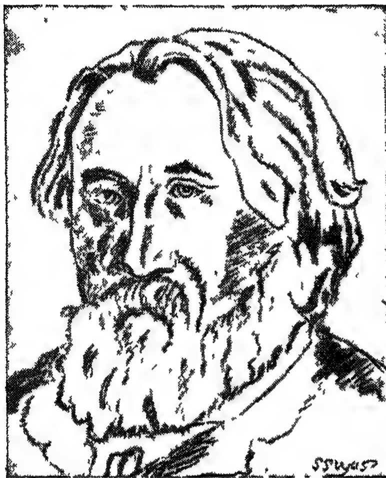
कार्ल मार्क्स योरोप की अनेक भाषाओ का ज्ञाता था। उसने अपने ग्रन्थो के लिए अन्य भाषा के ग्रन्थो से उदाहरण और प्रमाण के लिए सामग्री एकत्र की थी। उसने जितनी पुस्तके लिखी है, सबमे उसकी विद्वत्ता का परिचय मिलता है। उसने दीन-हीन, दुख-दलित और निराश्रित जनो का एक नवीन ससार बसाया है। उनके लिए कार्यक्रम, उनका क्रम-विकास और उनका राज्य! यही उसका मूल सूत्र था। प्रगतिशील-साहित्य के अध्ययन के पूर्व कार्ल मार्क्स के सभी ग्रन्थो को पढना आवश्यक है।

मार्क्स और एगिल्स के पत्र-व्यवहारो का अध्ययन करने पर सभी बातो का रहस्य खुल जाता है। जन-सामान्य का पक्ष ग्रहण करनेवाले, उनके आराध्य देव का जीवन आपत्ति और अभाव मे समाप्त हुआ। पत्नी की मृत्यु के दो वर्ष बाद आरामकुर्सी पर बैठे हुए बडी शान्ति से उसने जीवित ससार को अपना अन्तिम नमस्कार किया।

उसकी मृत्यु के बाद उसके प्यारे मित्र ने उसके अधूरे सभी कार्यो को समाप्त किया। एगिल्स ने ही 'केपिटल' के दूसरे और तीसरे भागो को पूर्ण किया था।

कार्ल मार्क्स ने अपने बाद भी समानता का एक प्रत्यक्ष उदाहरण छोडा है। लन्दन की हाई-गेट-सेमेटेरी (कब्रिस्तान) मे उसकी पत्नी और उसके स्वामिभक्त सेवक की कब्र के पास ही उसकी भी कब्र बनी हुई है।

---



# तुर्गनेव

(१८१८–१८८३ ई०)

गोगल की मृत्यु पर तुर्गनेव ने एक समवेदना-पूर्ण लेख प्रकाशित किया था। इसके कारण जार की सरकार द्वारा उसे आज्ञा मिली कि वह केवल अपनी जमीदारी मे ही निर्वासित रहेगा और किसी भी दूसरे स्थान पर नही जा सकेगा। उसके प्रति कडा नियत्रण लगा।

तुर्गनेव एक धनी कुल मे उत्पन्न हुआ था। उसकी शिक्षा मास्को, सेण्ट पीटर्सबर्ग और बर्लिन मे हुई थी। शिक्षा समाप्त करने पर एक वर्ष सरकारी विभाग मे कार्य करने के पश्चात् वह सदैव के लिए नौकरी से अलग हो गया। वह स्वतन्त्र प्रकृति का व्यक्ति था, इसलिए किसी भी बन्धन मे रहना उसके लिए कठिन था।

तुर्गनेव एक भावुक कवि था। १८४३ ई० मे उसकी कविताओ का एक सग्रह प्रकाशित हुआ था। उसका गद्य भी काव्यमय है। उसकी प्रथम गद्य-रचना १८४६ ई० मे 'ए स्पोर्टस्मैन्स् स्केचेज' प्रकाशित हुई। इसमे ग्रामीण जीवन के छोटे-छोटे शब्द-चित्र है। पुस्तक का शीर्षक भी सेन्सर की कडी दृष्टि से बचने के लिए भ्रमपूर्ण रखा गया था। तुर्गनेव की प्रतिभा का पूर्ण विकास उसकी प्रथम कृति मे झलकता है। लेखक की यह रचना दास-प्रथा के विरोध मे प्रस्तुत हुई थी। लेखक ने उन पात्रो का जीवनचित्र केवल उपस्थित किया है, जो अपने मालिको द्वारा त्रस्त थे और उन मालिको के जीवनचित्रो का अकन किया है जो अपनी तुच्छता

के कारण अत्यन्त निकृष्ट व्यक्ति थे। इन शब्द-चित्रो मे मानव-चरित्रो के भिन्न-भिन्न स्वरूपो का वर्णन वास्तविक रूप मे हुआ है और साथ ही प्रकृति का वर्णन भी आकर्षक और सुन्दर हुआ है।

जब कोई मानव-समस्या तुर्गनेव के मस्तिष्क मे चक्कर काटती थी तब वह उस पर तर्क नही करता था, वह केवल आकृति और दृश्यो मे उसे प्रस्तुत करता था।

लेखक किसी जटिल समस्या पर जब वार्तालाप करता, उस समय भी वह केवल ऐसे शब्द-चित्रो को सम्मुख रखता, जो कभी विस्मृत नही होते थे। यही प्रणाली उसकी रचनाओ मे भी दिखाई पडती है। उसके उपन्यासो मे स्त्री-पुरुष अपने स्वाभाविक रूप मे प्रकट होते है।

तुर्गनेव के उपन्यास कला की दृष्टि से बहुत ही उच्च कोटिके है। वह अपने युग का सबसे बडा उपन्यास-लेखक था। उसके दर्शन और विषाद के सम्बन्ध मे विद्वान् आलोचक जार्ज ब्रान्डेस् ने ठीक लिखा है— 'तुर्गनेव के मस्तिष्क मे उदासीनता की एक गहरी धारा बहती थी और यही कारण है कि उसकी समस्त कृतियो मे वही धारा दिखाई पड़ती है। तुर्गनेव के उपन्यासो मे उसका अपना व्यक्तित्व झलकता है और उसका यह व्यक्तित्व निश्चय ही विषादमय है। गोगल की उदासीनता निराशा-पूर्ण है, डोस्टोएईव्स्की उसी भाव को जब व्यक्त करता है, तब उसके पद-दलित और पापी पात्रो के प्रति उसका हृदय उमड पडता है। टाल्स-टाय की उदासीनता भाग्यवाद के धार्मिक रूप मे प्रकट होती है। अकेले तुर्गनेव ही एक दार्शनिक है। वह मनुष्य के प्रति प्रेम रखता है।'

जार निकोलस प्रथम का शासन-काल रूस के इतिहास मे अन्धकार-पूर्ण वर्ष थे। प्रतिभावान् व्यक्ति प्राय. निराश होकर अपना जीवन काट रहे थे। लेखको का जीवन दु खमय था। जब किसी लेखक ने शासन और शासक के प्रति तनिक भी स्वर उच्च किया, तत्काल वह कठिन कारावास का यात्री बन जाता। रूसी लेखको की रचनाओ मे जीवन के प्रति उदा-सीनता का मुख्य कारण यही था।

तुर्गनेव-जैसे, सम्पन्न कुल मे उत्पन्न होनेवाले, कलाकार को गुलामी-प्रथा का विरोध करने के कारण सबसे ससर्ग छोडकर अपनी जमीदारी म एकान्त-वास करना पडा। मूल रहस्य तो उसकी विद्रोही भावनाएँ थी, किन्तु गोगल के सम्बन्ध मे लिखे हुए एक लेख पर उसे इतना भीषण दण्ड मिला। १८५२ से १८५५ ई० तक उसका समय निर्वासन मे ही

व्यतीत हुआ। इसके बाद शेष जीवन रूस से हटकर विदेश मे ही उसे काटना पडा।

तुर्गनेव ने विदेश मे रहकर रूसी साहित्य को लोकप्रिय बनाया। उसके प्रयत्न से सभी प्रमुख रूसी लेखको की कृतियो का अनुवाद योरोप की अन्य भाषाओ मे हुआ। उसकी अपनी रचनाओ का भी योरोप मे खूब प्रचार हुआ। तुर्गनेव के जीवन-काल मे ही उसका विशेष सम्मान हुआ। वह पेरिस मे एक साहित्यिक महारथी के रूप मे निवास करता था।

फ्रास के प्रमुख लेखक फ्लोबेयर, मुपासाँ, जार्ज सैण्ड, गोकुर आदि से उसकी घनिष्ठता थी। पेरिस मे उसके यहाँ सदैव साहित्यिको का जमघट लगा रहता था। आपस मे मतभेद होने पर तुर्गनेव का निर्णय ही सबको मान्य होता था।

तुर्गनेव के उपन्यासो की विशेषता यह है कि उनमे कथा-वस्तु को विशेष महत्त्व नही दिया गया है, उनमे स्वाभाविक गति से पात्र अपने चरित्र को स्वय स्पष्ट करते है। चरित्र-चित्रण ही लेखक का मूल उद्देश्य है। लेखक ने इस सम्बन्ध मे लिखा है कि आरम्भ मे वह किसी पात्र को जब देखता था तो उसकी पूर्ण आकृति अपने मस्तिष्क मे स्थिर कर लेता था। फिर धीरे-धीरे वह पात्र खुद ही अपना चरित्र स्पष्ट करता जाता था। उसके चरित्र के विकास के लिए यह आवश्यक होता है कि दूसरे पात्रो के साथ उसका सम्बन्ध स्थापित कर उन पर प्रकाश डाला जाय।

तुर्गनेव के चरित्र-प्रधान उपन्यासो के महत्त्व को पूर्ण रूप से समझने के लिए उसके छ उपन्यासो का पढना आवश्यक है। इन उपन्यासों का शीर्षक इस तरह है—रुडिन, लीजा, ओन दी ईव, फादर एण्ड सन्स, स्मोक और वर्जिन सोयल।

इन उपन्यासो मे कवि की प्रतिभा की सम्पूर्ण शक्ति दिखाई पडती है। इसके अतिरिक्त उस समय (१८४८ से १८७६ ई०) रूस मे बुद्धिजीवियो के जीवन की भिन्न-भिन्न अवस्थाओ का वर्णन है। रूस के विकास के इस काल मे उसके उन्नत विचारो के प्रतिनिधियो के प्रति लेखक का भाव प्रकट होता है।

रुडिन उपन्यास मे लेखक ने एक ऐसी श्रेणी के पात्र को अकित किया है जो उस समय निकोलस प्रथम के राज्यकाल मे शिथिल जीवन व्यतीत कर रहा था। अपने इस पात्र के अनेक अवगुणो के साथ भी उसके प्रति लखक की सहानुभूति है।

रुडिन प्रथम बार एक शिक्षित महिला के घर पर दिखाई पडता है।

इस महिला के यहाँ विशिष्ट पुरुषो का सदैव आगमन होता है। वह क्रान्तिकारी विचारो के प्रति सहानुभूति रखती है और सेन्सर द्वारा वर्जित पुस्तके पढती है। रुडिन बडी कुशलता से बाते करता है और सभी को मुग्ध कर लेता है। जब वह स्वतन्त्रता और स्वतन्त्र विचार के सम्बन्ध मे बोलने लगता है तब उसके शब्द ज्वलन्त और काव्यमय हो उठते है। उस महिला की एक पुत्री नटाशा, रुडिन को प्यार करने लगती है।

रुडिन, नटाशा से अवस्था मे बडी है। प्रेम की चर्चा उसके लिए एक विगत कहानी है। वह कहता है—उस सिदूर वृक्ष को देखो। पिछले वसन्त की पत्तियाँ अब तक उसे घेरे है और जब तक नवीन पत्तियाँ नही प्रकट होगी तब तक वे मुरझाकर नही गिरेगी।

नटाशा इसका अर्थ यह समझती है कि रुडिन का पिछला प्रेम तभी मुरझायेगा जब नवीन प्रेमिका उसका स्थान ग्रहण करेगी। नटाशा अपना प्रेम उसे अर्पित करती है। वह एक छाया की भाँति सदैव उसके साथ रहने के लिए प्रस्तुत होती है। लेकिन रुडिन का प्रेम हृदय मे नही मस्तिष्क मे निवास करता है। वह असम्भव समझता है कि नटाशा की माँ दोनो के विवाह के लिए आज्ञा देगी। नटाशा सब बन्धन तोडकर बिना किसी की आज्ञा प्राप्त किये हुए भी रुडिन को सर्वस्व समर्पण करती है और पूछती है—अब क्या किया जाय?

'अलग होना'—रुडिन ने उत्तर दिया। जो पात्र अपने वार्तालाप मे कठिन से कठिन परिस्थितियो का सामना करने के लिए प्रस्तुत था, वही पहली ही घटना के कारण विचलित हो जाता है। केवल लम्बी-चौड़ी बाते करना ही ऐसे पात्रो की विशेषता है, वे कर्तव्य से सदैव विमुख रहा करते है।

रुडिन एक बार फिर दिखाई पड़ता है। वह उस समय तक किसी कार्य मे नही लगा था। वह दरिद्रावस्था मे भटकता रहा। एक स्थान से दूसरे स्थान पर निर्वासित होता रहा। अन्त मे पेरिस के एक विद्रोह मे उसकी मृत्यु होती है।

'लीजा' उपन्यास मे लीजा एक ऐसे व्यक्ति को प्यार करती है, जिसका विवाह हो गया था। वह अपनी पत्नी से दु:खित था और यह समझता था कि दुर्घटना मे उसकी मृत्यु हो गई है, किन्तु एकाएक वह प्रकट होती है। लीजा बीमार होकर अलग होती है। इस उपन्यास मे लेखक ने बडी निपुणता से पात्रो का चरित्र-चित्रण किया है। लीजा का चरित्र त्यागमय और सरल है।

'ओन दी ईव' उपन्यास मे लेखक ने हेलन के रूप मे उस श्रेणी की

एक स्त्री का चित्रण किया है, जो रूस के उत्थान मे महत्त्वपूर्ण कार्य करती है। हेलन अपने घर मे सन्तुष्ट नही रहती। वह अपने जीवन का उपयोग अच्छे कार्यों मे करना चाहती है। कुछ समय के बाद इनसारोफ नाम के एक बलगेरिया के निवासी युवक पर हेलन आकर्षित होती है। इनसारोफ दार्शनिक विचारो की उदासीनता मे लीन नही रहता। वह अपने देश को स्वतन्त्र करने के उद्योग मे दृढ रहता है और वीरतापूर्वक कार्य करता है। उसे जब विश्वास होता है कि वह हेलन पर आसक्त है, तब वह मास्को छोड देना चाहता है। वह हेलन के घर जाता है और अपने निश्चय की उसे सूचना देता है। हेलन दूसरे दिन जाने के पहले एकबार भेट कर लेने का आग्रह करती है, लेकिन वह वचन नही देता है।

हेलन उसकी प्रतीक्षा करती है, किन्तु वह आता नही है। हेलन उसकी खोज मे निकलती है। वर्षा और गडगडाहट के कारण हेलन एक गिरजाघर मे जाती है। वही इनसारोफ से भेट होती है। दोनो की आपस मे बाते होती है। इनसारोफ को विश्वास होता है कि हेलन को अपनाकर उसकी शक्ति दूनी हो जायगी। वह हेलन को भगवान् और मनुष्य के सम्मुख अपनी पत्नी स्वीकार करता है।

हेलन का चरित्र बडा उज्ज्वल है। उसके रूप मे उस श्रेणी की एक नारी का दर्शन होता है जो आगे चलकर रूस की स्वतन्त्रता और दु:खी जनता की सहायता मे पूर्ण भाग लेती है, जिसे कठोर कारावास और भयानक कष्ट कभी विचलित नही कर सकता।

तुर्गनेव के उपन्यासो मे 'फादर एण्ड सन्स्' सबसे अधिक प्रसिद्ध है। इस उपन्यास मे एक क्रान्तिकारी बाजरोफ का चरित्र अत्यन्त आकर्षक चित्रित हुआ है। इसमे पुरानी और नवीन पीढी के लोगो की मनोवृत्तियो का वर्णन बहुत ही स्वाभाविक रूप मे हुआ है। बाजरोफ निहिलिस्ट विचारों का युवक है। वह डाक्टरी की शिक्षा समाप्त कर अपने मित्र आरकेडी के साथ उसके घर देहात जाता है। आरकेडी की छोटी बहन कत्या से उसका प्रेम हो जाता है। बाजरोफ अपने पिता के घर वापस आता है। कुछ समय बाद एक शव का पोस्टमार्टम करते समय कीटाणुओं से वह न बच सका और अन्त मे छूत के कारण उसकी मृत्यु हुई।

इस उपन्यास के कारण दोनो ओर से विरोध हुआ। पुराने लोग कहते कि लेखक स्वय निहिलिस्ट विचारो का व्यक्ति है और युवको का मत था कि लेखक ने बाजरोफ के साथ अन्याय किया है।

तुर्गनेव ने इस सम्बन्ध मे अपना मत स्पष्ट किया है। उसने लिखा था कि मेरे इस उपन्यास मे महाकुलीनता के प्रति विरोध है। बाजरोफ का चरित्र-चित्रण मेरे समस्त उपन्यासों मे विशिष्ट है। उसके प्रति मेरी सहानुभूति है और मै स्वय उससे प्रेम करता हूँ, लेकिन यदि पाठक उससे प्रभावित नही होते तो इसमे मेरी त्रुटि है। यदि मै बाजरोफ मे अधिक मिठास भर देता तो निश्चय ही रूसी युवक मुझसे सन्तुष्ट होते, किन्तु मैने ऐसा नही किया।

वास्तव मे तुर्गनेव सत्य का पक्षपाती था। वह किसी को प्रसन्न करने के लिए अपने सिद्धान्त से कभी विमुख नही हो सकता था। वह जिस पात्र का रूप जैसा देखता था वैसा ही उसका चित्रण करता था। उसका विश्वास था कि पात्र का वास्तविक स्वरूप निर्धारित करने मे लेखक को उसके अच्छे और खराब दोनो पक्षो को दिखाना आवश्यक होता है।

तुर्गनेव अपने पात्रो के क्रम-विकास का लेखा उसी तरह रखता था, जैसे पुलिसवाले अपराधी का 'हिस्ट्रीशीट' रखते है अथवा गुप्तचर किसी विद्रोही राजनीतिक व्यक्ति के लिए अपनी डायरी भरते है।

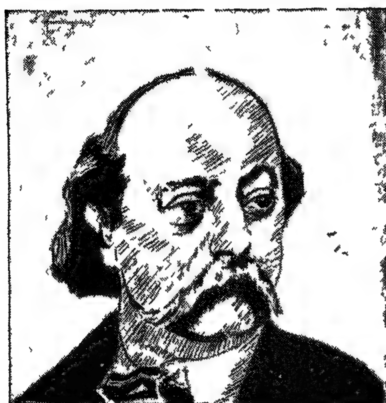
'स्मोक' उपन्यास मे लेखक ने रूसी समाज की, शक्तिशाली श्रेणी की, एक महिला का कलापूर्ण विवरण दिया है। 'वर्जिन सोयल' मे तुर्गनेव ने "जनता की ओर' वाले आन्दोलन का वर्णन किया है, जो १८७० ई० मे आरम्भ हुआ था। तुर्गनेव के उपन्यासो को पढने पर वास्तविक पात्रो के साथ उस समय के रूस की स्थिति का भी अनुभव होता है।

जीवन के पिछले दिनो मे क्रान्तिकारी आन्दोलन के प्रति तुर्गनेव की सहानुभूति थी। मरने के कुछ मास पूर्व उसका उपन्यास 'ओन दी थ्रेस-होल्ड' प्रकाशित हुआ था। इसमे उन महिलाओ की गाथा है, जिन्होने क्रान्तिकारी-आन्दोलन के प्रति अपना जीवन सर्मपित किया था।

तुर्गनेव के अन्तिम कुछ वर्ष बहुत कष्ट मे व्यतीत हुए। डाक्टरो ने गठिया का निदान किया, किन्तु उसकी रीढ की हड्डी मे केन्सर था। वह कोच पर ही पडा दिन काट रहा था। उसके अन्तिम काल के पत्र बड़े कारुणिक और उल्लासमय दोनो ही है।

तुर्गनेव ने अपने जीवन-काल मे अनेक उपन्यास, काव्य-ग्रन्थ और कहानियो की रचना की थी। रुग्णावस्था मे भी वह अपनी अधूरी पुस्तको को पूर्ण करना चाहता था; किन्तु विधाता की आज्ञा नही थी।

---



# गुस्तेव फ्लोबेयर

(१८२१–१८८० ई०)

फ्लोबेयर उन कलाकारो मे सर्वश्रेष्ठ था, जिन्होने किसी भी वस्तु का वर्णन तटस्थ और यथार्थ रूप मे किया था। उसकी भाषा मे एक ही गति, ताल या शैली नही दिखाई पडती है। पग-पग पर वह बदलती रहती है। इसमे सन्देह नही कि फ्लोबेयर जो कुछ लिखता था, बडे परिश्रम से धीरे-धीरे लिखता था। यह इसलिए नही कि उसे उपयुक्त शब्द नही मिलते थे, अपितु इसलिए कि जीवन भर वह रोमानी और यथार्थ साहित्य मे फँसा रहा। वह स्वय कुछ स्थिर न कर पाया कि वह किस ओर जाय।

फ्लोबेयर का जन्म फ्रास के रुआँ नगर मे हुआ था। वह नगर के प्रधान सर्जन का पुत्र था। माता की ओर से वह नोरमेंडी के एक कुलीन वश का था। फ्लोबेयर की माँ अपने उच्च वश पर गर्व करती थी और उसने अपने पुत्र मे भी वही गर्व भर दिया, जिससे फ्लोबेयर जनसाधारण के लिए सदैव घृणा का भाव बनाये रहता था। माता की ममता के कारण बचपन से ही फ्लोबेयर बिगाड दिया गया था। आठ वर्ष की अवस्था तक वह किसी स्कूल मे पढने के लिए नही भेजा गया। घर पर ही उसकी शिक्षा होती रही। नौ वर्ष की अवस्था मे ही गेटे और बायरन की रचनाओ को पढने के बाद उसने लेखक बनने का निश्चय कर लिया था। स्कूल जाने पर वह अपनी पढाई पर ध्यान न देकर उपन्यास और कविता मे ही व्यस्त रहने लगा। तेरह वर्ष की अवस्था मे उसने एक नाटक लिखा, जिसमे बायरन का रेखा-चित्र अकित किया गया था।

छोटी अवस्था मे ही उसके हृदय मे घृणा की भावनाएँ जागरित हो गई थी। वह अपने पिता के यहाँ आये हुए रोगियो की बाते बडे ध्यान से सुनता था। अल्पावस्था मे ही वह भयकरता, आश्चर्य और दूषित मनो-वृत्तियो की ओर प्रवृत्त हुआ। तेरह वर्ष की अवस्था मे उसका सर्वप्रथम प्रेम एक अग्रेज युवती से हुआ। इसके बाद एक-एक कर इतनी स्त्रियाँ उसके सम्मुख आई कि उन सबका विवरण देना व्यर्थ है। अपनी एक प्रेमिका को पत्र मे उसने लिखा था—यदि मै तुम्हे प्रतिदिन देखूँ तो सम्भ-वत तुमसे कम प्रेम करने लगूँ। तुम मेरे हृदय के अन्त कोष्ठो मे रहती हो और रविवार को वहाँ से निकलती हो।

फ्लोबेयर की प्रकृति बडी विचित्र थी। वह जीवन भर अविवाहित ही रहा। अपने चरित्र से अरुचि होने के कारण उसने 'मादाम बोवारी' उपन्यास की रचना की थी।

१८४० ई० मे फ्लोबेयर के पिता ने उसे कानून पढने के लिए पेरिस भेजा था। पॉच वर्ष अध्ययन के पश्चात् वह फिर सब कुछ छोड़कर साहित्य-रचना में लग गया। १८४५ ई० मे अपनी विधवा माता के साथ वह रुआॅ के पास क्रवासे नगर के एक पुराने मकान मे रहने लगा। जीवन के अन्त तक वह यही रहा। कभी-कभी अपने मित्रो, तुर्गनेव, दोदे, रना, तेन, गोकुर, जोला, गोच्ये से मिलने वह पेरिस जाया करता था।

युवावस्था मे फ्लोबेयर एक प्रकार के मस्तिष्क रोग से पीड़ित था। इसी कारण उसकी प्रतिभा का विकास बाद मे हुआ। उसके लिखे हुए पत्रों का अध्ययन करने पर कभी-कभी वह एक सनकी-सा दिखाई पडता है। जैसे—मै चाहता हूँ कि इस सृष्टि को नष्ट कर दूँ और फिर शून्य मे लय हो जाऊँ, मै जलती हुई हड्डियो के कडकडाने का शब्द सुनना चाहता हूँ, शव से भरी नदियो को पार करना चाहता हूँ, घुटने टेके हुए राष्ट्रो को कुचलकर रौदकर, जाना चाहता हूँ; मै चगेज खॉ, तैमूर लग और निरो होना चाहता हूँ।

उन्नीसवी शताब्दी मे लेखको मे यह भावना व्याप्त थी कि लेखक या कलाकार होना ही जीवन का एकमात्र मूल्यवान् उद्देश्य है। फ्लोबेयर भी इस भ्रान्ति का शिकार था। वह लेखक और कलाकारो को छोड़कर सभी लोगो पर व्यग्य कसा करता था। आरम्भ से अन्त तक के अपने पत्रो मे वह निरन्तर लेखको के महत्त्व पर लिखता रहा। अपनी वृद्धावस्था मे भी उसने जार्ज सैंड को इस प्रकार लिखा—'हम, केवल हम ही अर्थात्

साहित्यकार, हम ही वास्तविक जनता है। हम ही मानवता की वास्तविक परम्परा है।' इसी पत्र मे वह अपने दूसरे मन्तव्यो को भी स्पष्ट करता है —'बुर्ज्वा लोगो से घृणा करना ही सद्गुण का आरम्भ है।' यहाँ बुर्ज्वा से अभिप्राय स्त्री पुरुष दोनो से है।

फ्लोबेयर की लिखी 'मादाम बोवारी' 'सेंटिमेंटल एजुकेशन' और अपूर्ण 'बुवार और पेकुशे' ये सभी रचनाएँ एक असन्तुष्ट व्यक्ति की प्रतिहिसा मात्र है, एक ऐसे व्यक्ति की, जिसने जीवन से बहुत कुछ आशा की और जब उसकी रोमानी आशा के अनुकूल बाते नही हुई तब वह प्रतिहिसा के लिए प्रस्तुत हो गया। फ्लोबेयर के तथाकथित वस्तु-परक उपन्यासो का रहस्य तभी खुलता है, जब उसकी युवावस्था की घटनाओ का हम अध्ययन करते है। उसने अपनी भावनाओ से सघर्ष किया था और अपनी प्रवृत्तियो को कुचलने की चेष्टा की थी।

'मादाम बोवारी' लिखने मे फ्लोबेयर का सात वर्ष का समय लगा; क्योकि उसने एक कृत्रिम वस्तु ले ली थी, जिसे पूर्ण करने के लिए उसे निरन्तर अपने आपसे सघर्ष करना पडा। 'मादाम बोवारी' असुखी वैवाहिक जीवन की कहानी है, जिसका अन्त आत्महत्या द्वारा होता है।

'टेमटेशन आव् सेण्ट एन्थोनी' फ्लोबेयर की सर्वश्रेष्ठ कृति है। इसमे एक तपस्वी के पतन और उत्थान का मार्मिक वर्णन है। लेखक ने आरम्भ मे उसकी जो रचना की थी, बीस वर्ष बाद उसमे इतना परिवर्तन कर दिया कि उसका स्वरूप ही बदल गया। इस पुस्तक का परिवर्तित रूप ही कला की दृष्टि से उच्च कोटि का माना गया है। फ्लोबेयर की यह एक विशेष प्रकृति थी कि वह अपनी रचनाओ से कभी सन्तुष्ट नही होता था। जितनी बार प्रूफ अथवा सशोधन करना पडता, वह इतना परिवर्तन कर देता कि रचनाओ का एक नया स्वरूप ही हो जाता था। फ्लोबेयर ने सेण्ट एन्थोनी का चरित्र इतनी कुशलता से चित्रित किया है कि पढते समय वह आँखो के सम्मुख आ जाता है। इसमे लेखक के कवि-हृदय की रगामेजी का अपूर्व चित्रण है।

फ्लोबेयर की एक कहानी 'सेंटिमेंटल एजुकेशन' मे एक सरलहृदय स्त्री की कोमल भावनाओ का दर्शन होता है। यह कहानी बडी आकर्षक है और इसमे लेखक की विद्वत्ता का परिचय मिलता है।

फ्लोबेयर अपनी पुस्तको पर घोर परिश्रम करता था। १८५८ ई० मे वह प्राचीन कार्थेज के स्थल पर निरीक्षण के लिए तुनिस गया था। उन दिनो वह अपने उपन्यास 'सालाम्बो' के लिए सामग्री एकत्र कर रहा था।

बालजाक के बाद फ्लोबेयर का फ्रेंच उपन्यास-साहित्य मे दूसरा स्थान माना जाता है। फ्लोबेयर यथार्थवादी सम्प्रदाय का पथ-प्रदर्शक और अपने युग का प्रकाण्ड विद्वान् था। वह अपनी शैली के लिए अमर है।

---



# डौस्टोएईव्स्की

(१८२१-१८८१ ई०)

अट्ठाईस वर्ष की अवस्था मे डौस्टोएईव्स्की ने जार के विरुद्ध षड्यत्र मे भाग लिया था। वह क्रान्ति द्वारा जार के शासन को उलटकर गणतन्त्र की स्थापना करना चाहता था। पुलिस ने भेद खोल दिया और डौस्टोएईव्स्की को गोली से उडा देने की आज्ञा मिली। मृत्यु के अन्तिम क्षण मे जार की आज्ञा मिली कि वह आजन्म कारावास का दण्ड भोगेगा।

डौस्टोएईव्स्की का पिता मास्को मे गरीबो के एक अस्पताल का डाक्टर था। बचपन से ही डौस्टोएईव्स्की को निरीहो और रोगियो की हृदयविदारक स्थिति के देखने का अवसर मिला था। वह अस्पताल के उन रोगियो को देखता, उनकी बाते सुनता और उनके प्रति सहानुभूति रखता। उसके पिता का कठोर शासन था। वह अपने पुत्र को घर से बाहर नही निकलने देता, अन्य बालको के साथ खेलने की भी उसे आज्ञा नही थी। इसलिए सोलह वर्ष की अवस्था मे जब उसने पीटर्सबर्ग के इजिनियरिंग स्कूल मे प्रवेश किया, उस समय उसके शिक्षक और सहपाठी उसे गँवार ही समझते रहे।

डौस्टोएईव्स्की स्वप्नों के ससार मे विचरण करता था। वह पुस्तको

के अध्ययन और मनन मे ही अपना समय व्यतीत करता था। कारण, उसकी आर्थिक स्थिति ऐसी नही थी कि वह सामाजिक आमोद-प्रमोद मे सम्मिलित हो सकता।

एक दिन डौस्टोएईव्स्की को एक पत्र मिला, जिसमे उसके पिता की दुखद मृत्यु का समाचार था। उसके पिता की एक छोटी सी जमीदारी थी। वही वह लगान वसूल करने गया था, मार्ग मे एक गाडी पर जाते हुए कुछ कृषक दासो ने मिलकर उसकी हत्या की थी। उसकी कठोरता के कारण ही गॉव के लोगो का उस पर सम्मिलित आक्रमण हुआ था। डौस्टोएईव्स्की के ऊपर इस घटना का इतना प्रभाव पडा कि पिता की हत्या का समाचार पढते ही उसे मूर्छा आ गई। उसे मृगी का रोग भी था।

अब, असहाय अवस्था मे, उसे अपने जीवन-निर्वाह का साधन उपलब्ध करना आवश्यक था। अतएव कुछ समय बाद सरकारी इजिनियरिंग-विभाग मे उसकी नियुक्ति हुई। इस कार्य मे मन न लगने पर भी जीविका के लिए बाध्य होकर उसे काम करना पडता था। दिन का कार्य समाप्त कर रात्रि मे वह शिलर, गेटे, बालजाक और रासीन की रचनाएँ पढता था।

वह अपनी लेखनी द्वारा अपनी जीविका उपार्जित करने का स्वप्न देख रहा था। उसने अपने जीवन के उलझे विचारो को अपनी लेखनी से लिखना आरम्भ किया। उसे युवावस्था मे घोर कष्ट और आपत्तियो का सामना करना पड़ा था। वह मानव स्वभाव के अध्ययन मे अग्रसर हुआ। दरिद्रो के प्रति उसकी सहानुभूति थी। वह उनसे बाते करता, उनके जीवन की रहस्यमयी बातो का पता लगाता। निरीह और अभागे लोगों से बाल्यकाल मे ही वह परिचित हो चुका था। अस्पताल मे ऐसे लोगो से वह दिल खोलकर बाते किया करता था।

डौस्टोएईव्स्की अग्रेजी, जर्मन और फ्रेच भाषाओ का ज्ञान प्राप्त कर चुका था। उसका आरम्भिक कार्य एक पुस्तक का अनुवाद था जो एक प्रकाशन-सस्था के लिए किया गया था। इसके साथ ही वह उस युग के कुछ महान् लेखको—तुर्गनेव, सोलोगब, टाल्सटाय आदि के—ससर्ग मे आया। उसका प्रथम उपन्यास 'पूअर फोक्स्' गोगल का अनुकरण था। इस उपन्यास की सफलता और प्रचार देखकर कुछ लेखको को ईर्ष्या हुई। तुर्गनेव तक ने डौस्टोएईव्स्की के विरोध मे एक कविता प्रकाशित की थी।

डौस्टोएईव्स्की का विश्वास था कि जुआ मे धन प्राप्त कर, अपनी स्थिति का वह सुधार कर सकेगा, इसलिए जुआ खेलने की प्रवृत्ति उसकी

निरन्तर बढती ही गई और इसके कारण उसे भयानक परिस्थितियो का सामना करना पडा ।

उन दिनो रूस मे जार का अत्याचार चरम सीमा पर पहुँच चुका था। जनता त्रस्त थी। शिक्षित समाज भी विलासिता मे लीन था। कुछ नव-युवक विद्रोह की भावना जागरित कर रहे थे। डौस्टोएईव्स्की ने ऐसे एक दल का सगठन किया। अन्त मे उसे साइबेरिया का निर्वासन हुआ। साइबेरिया का जीवन मृत्यु से भी भयानक था। एक बन्दी निर्वासन का समाचार सुनकर पागल हो गया। दूसरा कहने लगा—'इससे कही अच्छा होता यदि मै गोली से उडा दिया जाता।' इस तरह के जीवन मे डौस्टो-एईव्स्की को पदार्पण करना पडा।

क्रिसमस की सन्ध्या के समय बन्दियो का दल पिटर-पाल-किले के बन्दीगृह से साइबेरिया के लिए जानेवाली ट्रेन पकडने जा रहा था। हथकडी बेडी से जकडा हुआ डौस्टोएईव्स्की भी उसी दल मे चला जा रहा था। मार्ग मे एक महिला ने उसे बाइबिल की एक पुस्तक भेट की। बाद मे पुस्तक को पढते समय उसमे उसे पचीस रूबल का एक नोट भी मिला था।

खूनी, पतित और अपराधियो के साथ मे मानवता की मगल-कामना करने वाले लेखक को भी वही दण्ड प्राप्त हो, यह विचार डौस्टोएईव्स्की के मस्तिष्क मे व्याप्त था। उसने बडी सहनशीलता से कार्य किया। जो लेखक केवल लेखनी चलाता था, उसे दिन भर शारीरिक कठोर परिश्रम करना पडता था। चार वर्ष के कठिन परिश्रम से उसे मुक्ति मिली। फिर भी वह स्वतन्त्र नही हुआ था। एक सैनिक से एक उच्च सैनिक कर्मचारी के पद पर पहुँचने के बाद ही उसे छुटकारा मिलेगा। यही नियम था। उस जीवन का यथार्थ चित्रण लेखक ने अपनी 'दी हाउस आफ दी डेड' और 'क्राइम एण्ड पनिशमेट' नामक पुस्तको मे किया है।

सैनिक जीवन मे ही डौस्टोएईव्स्की एक विवाहित स्त्री पर आकर्षित हुआ। यह स्त्री उस कम्पनी के कप्तान की पत्नी थी, जिसमे वह काम करता था। डाक्टरो ने डौस्टोएईव्स्की को आदेश दिया था कि जिस रोग मे वह ग्रस्त है, अवस्था ढलने पर उसका परिणाम घातक होगा। यही कारण था कि डौस्टोएईव्स्की विवाह के बन्धन मे नही पडना चाहता था। लगभग तीस वर्ष की अवस्था मे पहली बार वह इस स्त्री के ऊपर आसक्त हुआ। बाद में, कप्तान की मृत्यु के पश्चात्, डौस्टोएईव्स्की ने उसकी

पत्नी से अपना विवाह किया। उस स्त्री की दयनीय और असहाय अवस्था के कारण ही बाध्य होकर उसे यह सम्बन्ध करना पडा था। आगे चलकर उसका यह वैवाहिक जीवन अत्यन्त कलह और वेदनापूर्ण बना।

डौस्टोएईव्स्की की पत्नी पहले ही रोगिणी थी। दिन पर दिन बीतने लगे और उसका क्षयी का रोग भीषण रूप धारण करता गया। जीवन अत्यन्त वेदना के अन्धकार मे छिपा हुआ था। साहसी लेखक पत्नी की शय्या के समीप बैठकर अपने साहित्य का निर्माण करता रहा। अन्त मे अनेक कटु शब्दो और दुर्व्यवहारो का प्रयोग कर उसकी पत्नी मेरिया चल बसी।

साइबेरिया के निर्वासन से वह मुक्त हो चुका था। जीवन मे स्वतत्रता-पूर्वक चलने का मार्ग उसे दिखाई पडा। कटु अनुभवो ने उसका मार्ग-प्रदर्शन किया। उसके विचारो मे परिवर्तन हुआ। अब क्रान्ति द्वारा शासन उलटने की उसकी धारणा बदल गई। उसका विश्वास हुआ कि एक शक्तिशाली मानव प्रकट होगा और वही उचित मार्ग-प्रदर्शन करता हुआ मानवता की रक्षा करेगा।

जर्मन दार्शनिक नित्जे ने लिखा है कि केवल डौस्टोएईव्स्की ही एक ऐसा मनोवैज्ञानिक लेखक है, जिसकी रचनाओ से मैने शिक्षा ग्रहण की है।

डौस्टोएईव्स्की के उपन्यास बडे कारुणिक है। उनमे मानव-जीवन को दुखद घटनाओ का वर्णन है, लेकिन कभी दुखद वातावरण मे भी उसके पात्र व्यग्य और हास्य करते है। उसके चित्रित पात्र भूले नही जा सकते।

मेरिया की मृत्यु के पश्चात् वह सदैव अपने नवीन उपन्यासो मे व्यस्त रहा करता था। उसकी भावनाओ को लिखने के लिए एक टाइपिस्ट और स्टेनोग्राफर की आवश्यकता पडी। उसने एक पत्र मे विज्ञापन प्रकाशित कराया। दूसरे दिन एना ग्रोवेना नाम की एक सुन्दर युवती उसके सम्मुख आई। वह शिक्षित और प्रसन्नचित्त थी। प्रतिदिन वह बोलता जाता और वह लिखती रहती। अन्त मे पॉच महीने बाद लेखक ने उसे अपनी पत्नी के रूप मे ग्रहण किया। उनका पारिवारिक जीवन शान्त और सुखी बना। एना ग्रोवेना को एक पुत्र और एक पुत्री उत्पन्न हुई। डौस्टोएईव्स्की की पत्नी ने जो अपनी आत्म-कहानी लिखी है, वह निस्सन्देह उत्कृष्ट रचना है। उसमे प्रेम और सद्भावनाओ का अपूर्व मिश्रण है। उसकी पुत्री ने डौस्टोएईव्स्की का सबसे सुन्दर और प्रामाणिक जीवनचरित्र लिखा है। उसमे उसने बोलशेविको के विरुद्ध विचार प्रकट किये है।

आज से पचीस वर्ष पहले मैने डौस्टोएईव्स्की के उपन्यासों का

अध्ययन किया था, किन्तु आज भी उसके कई पात्र चिर-परिचित से प्रतीत होते है। 'ब्रदर्स करामाजोव' लेखक की सर्वोत्तम कृति है। ससार के दस सर्वश्रेष्ठ उपन्यासो मे इसकी भी गणना है। इसमे लेखक अपनी कला को बडी कुशलता से प्रदर्शित करता है। लेखक ने अपने दार्शनिक और धार्मिक विचारो को पात्रो द्वारा व्यक्त किया है।

एक स्थान पर एक डाक्टर अपना विचार प्रकट करता है—मै मानवता से प्रेम करता हूँ, लेकिन मै अपने प्रति आश्चर्य करता हूँ। मानवता के प्रति मेरा प्रेम जितना अधिक होता है, उतना व्यक्तिगत रूप से मानव के प्रति वह प्रेम शिथिल हो जाता है। कभी-कभी मै मानवता के लिए कल्याणकारी सेवाओ की कल्पना करता हूँ। मै अपने प्राण तक उत्सर्ग कर सकता हूँ, यदि उसकी सहसा आवश्यकता पडे, किन्तु ऐसे विचार होते हुए भी मै किसी भी मनुष्य के साथ दो दिनो तक एक कमरे मे नही रह सकता। यह मेरा व्यक्तिगत अनुभव है। जैसे ही किसी व्यक्ति को म अपने समीप देखता हूँ, मेरी स्वतन्त्रता मे बाधा आ पडती है। चौबीस घण्टे के अन्दर मै सबसे अच्छे आदमी के प्रति घृणा करने लगता हूँ। जैसे मुझे वह आदमी भला नही लगता जो घण्टो भोजन मे लगा देता है, दूसरा वह जो शीत लग जाने पर बार-बार अपनी नाक छिनकता है। मनुष्य जितना ही अधिक मेरे निकट आता है, उतना ही मै उसके विरुद्ध हो जाता हूँ। लेकिन सदैव ऐसा ही होता है कि जब व्यक्तिगत रूप से मै मानव का तिरस्कार करता हूँ, तब मानव के प्रति मेरा असीम प्रेम जागरित होता है।

डौस्टोएईव्स्की ने अपराधी, पापी और हत्यारो के प्रति भी प्रेम और सहानुभूति की भावनाओ को आश्रय दिया है। उसने भगवान् की सृष्टि के सभी जीव-जन्तुओ, पशु-पक्षियों और सृष्टिकर्ता की निर्मित समस्त रचना और उसमें सिकता के एक-एक कण के प्रति प्रेम का सदेश दिया है।

जीवन के पिछले पहर मे वह विचारो मे लीन होकर मानव के सम्बन्ध मे चिन्तन करता रहता था। उसे आश्चर्य होता था कि मनुष्य अपनी समस्त चतुराई मे भी कितना मूर्ख रहता है। वह अपने निर्मित अपराधी, मूर्ख, सन्त और भोगी सभी पात्रो से उनकी रहस्यमय जीवन-पहेली का उत्तर माँगता था। वह मार्ग मे चलते हुए नर-नारियो को बडी गूढ दृष्टि से देखता था, उनकी बाते सुनता था। उनकी निराश आकृति, उनकी फीकी हँसी और केवल उनके एक शब्द से लेखक के प्रश्नों का उत्तर मिल जाता था।

डौस्टोएईव्स्की ने अपने शराबी पिता के चरित्र के आधार पर ही 'करामाजोव बर्दस' उपन्यास मे बूढे करामाजोव का चित्रण किया है जो अत्यन्त दुष्ट और नीच मनोवृत्ति का था। उसके अत्याचारो के कारण अन्त मे कृषक-दासो ने उसकी हत्या की।

डौस्टोएईव्स्की का एक उपन्यास 'हाऊस आफ दी डेड' पढकर स्वय सम्राट् जार की ऑखो से ऑसू छलक पडे थे और उसने साइबेरिया मे होनेवाले अन्याय मे सुधार किया था।

डौस्टोएईव्स्की का सदेश था कि प्रत्येक मनुष्य के कार्य के लिए समस्त मानवता उत्तरदायी है और समस्त मानवता के कृत्य के लिए प्रत्येक मनुष्य उत्तरदाता है। जीवन का रहस्य यही नही है कि मनुष्य एक पीढी से दूसरी पीढी मे उत्पन्न होता रहे; उसका महत्त्व इसी मे है कि वह क्रूर से देवदूत के रूप मे परिवर्तित हो जाय और पापी से बदलकर सन्त का रूप धारण करे।

सूर्यास्त का समय था। डौस्टोएईव्स्की बैठा हुआ था। सहसा उसके हाथ भीग गये थे। उसने देखा रक्त की लालिमा हाथो मे छा गई थी। फेफडे से खून गिरा था। 'जीवन से उपेक्षा करना उचित नही है और मृत्यु से भयभीत भी नही होना चाहिए।' उसके यही वाक्य उसके सम्मुख जैसे अकित थे। 'यत्रणा और वेदना द्वारा ही सत्य की उत्पत्ति होती है। यह समूची सृष्टि अन्धकार से प्रकाश मे फैलती है।'

भगवान् मे उसकी अटल भक्ति थी। दरिद्रो और दुखियो के हृदय-देवता को वह सम्मान मिला जो किसी सम्राट् को भी रूस मे प्राप्त नही हुआ था। लाखो आदमी उसकी मृत्यु का समाचार सुनकर एकत्र हो गये थे। उसकी अर्थी के साथ सभी वर्ग के लोग थे।

अर्थाभाव मे केवल एक गिलास काफी पीकर साहित्य का निर्माण करने-वाले कलाकार का यह सम्मान! तेरी बलिहारी है मानव-जाति!!

---

# इबसन

(१८२८–१९०६ ई०)

१९वी शताब्दी मे योरोप के नाटको मे क्रान्तिकारी परिवर्तन उपस्थित करने का श्रेय नार्वे के उद्भट नाटककार हैनरिक इबसन को ही प्राप्त है।

इबसन के पूर्वज समुद्री बेड़े के अध्यक्ष थे। इन लोगो ने स्कौच तथा जर्मन जाति की स्त्रियो से विवाह किये थे, अत हैनरिक इबसन की नसो मे कई जातियो के रक्त का मिश्रण विद्यमान था। इबसन की माता गभीर तथा तटस्थ प्रकृति की महिला थी, अत उसके सस्कार उसके पुत्र इबसन मे भी आ गये थे। इधर इबसन के पिता की प्रकृति आनदी और परिहास-प्रिय थी, किन्तु उसकी यह परिहास-प्रकृति कभी-कभी बडी कटु हो जाया करती थी। जिन लोगो से वह अप्रसन्न हो जाता था, उन्हे वह आडे हाथो लेता था। अत उसके परिवार के लोग तथा पडोसी भी उससे कुछ भयभीत से ही रहते थे। इबसन मे पिता के सस्कार भी थोड़े-बहुत रूप मे विद्यमान थे और उन्ही सब सस्कारो से प्रेरित होकर उसने 'दी कौमेडी आफ लव' और 'यगमेन्स लीग' जैसे नाटको की रचना की थी।

इबसन का जन्म नार्वे के दक्षिणी भाग मे, स्कीन नामक नगर मे, हुआ था। वह अपने माँ-बाप का प्रथम पुत्र था। उसका घर एक बाजार के बीच मे था, जहाँ एक ओर गिरजाघर तथा दूसरी ओर दडस्थान था। पास ही बदीगृह, पागलखाना और टाउनहाल भी था। इस सब वातावरण का बालक इबसन पर पर्याप्त प्रभाव पडा था। गिरजाघर की पवित्रता, दडस्थान की कठोरता, पागलखाने के भय इत्यादि ने उसे एक विचित्र गभीर प्रकृति का बना दिया था। फिर भी उसके हृदय मे प्रकृति के मनोरम स्थानो के प्रति आकर्षण विद्यमान था।

इबसन एक कुलीन वश का व्यक्ति था। उसके घर के आस-पास जो लोग रहते थे, उनमे दो ही वर्ग थे। एक धनवान् कुलीनो का और दूसरा सामान्य लोगो का। ऐसी परिस्थिति मे कुलीनता की भावना का कुछ अधिक उद्दीप्त हो जाना सर्वथा स्वाभाविक है। इबसन के स्वभाव मे भी यही भावना व्याप्त हो गई थी। उसके वशज धनवान् भी थे और कुलीन भी।

अपने वाक्-चातुर्य और मिलनसार स्वभाव के कारण इबसन बहुत से लोगों को अपनी ओर आर्कषित कर लेता था। जो लोग उसके यहाँ आते उनका वह खान-पान से पर्याप्त सत्कार करता था, किन्तु जब उसकी अवस्था आठ वर्ष की थी तब उसे बाध्य होकर अपनी इस उदारता को छोड देना पड़ा। उसके पिता का दिवाला निकल गया था और लोगो का हिसाब चुकाने के बाद उनके पास छोटी सी जमीदारी मात्र बच गई थी।

अपनी कौमार्यावस्था मे भी वह अपनी असाधारण गभीरता से लोगों का ध्यान आर्कषित कर लेता था। जब उसके चार छोटे भाई बहिन बाहर खेलते रहते, तब वह एक छोटे से कमरे मे अपने आपको बन्द करके पुस्तके पढा करता था। चाहे जाडा हो चाहे गर्मी, सभी ऋतुओ में उसकी यही दिनचर्या थी। उसके भाई-बहिन इस दशा मे उसे प्राय. तग करते रहते थे। वे लोग उसके दरवाजे पर ककड या बरफ के गोले बनाकर फेका करते थे। इस पर वह बाहर निकल आता और अपने भाई बहनो को दूर तक खदेडकर पुन दरवाजा बन्द करके पढने लगता था।

पुस्तको के पश्चात् उसके मनोरजन का साधन जादू के खेल थे। प्राय किसी रविवार की सध्या को वह जादू के खेल दिखाने का आयोजन करता था। पडोसी लोग दर्शक बन जाते थे। एक बडे सदूक के पीछे खड़ा होकर वह अपने खेलो को दिखाता रहता था। वह अपने छोटे भाई को सदूक के भीतर छिपा देता, इसके लिए वह पहले से ही अपने भाई को कुछ इनाम दे देता था। यही नही उसका छोटा भाई उससे प्राय बहुत सी चीजे ले लिया करता था। वह कहता यदि तुम मुझे पर्याप्त पारितोषिक न दोगे तो में दर्शको के सम्मुख तुम्हारा सब भेद खोल दूँगा। इस डर के कारण वह अपने भाई को सदैव सतुष्ट रखता था। इसमे सदेह नही कि उसके जादू के खेलो से लोगो का बडा ही मनोरजन होता था।

इबसन का प्रथम ऐतिहासिक नाटक 'केटीलिना' है। इस नाटक में इबसन ने अपनी युवावस्था की भावनाओ और अनुभवों को व्यक्त किया है। इस नाटक के प्रमुख पात्र की भावनाएँ वस्तुत नाटककार की ही भावनाओ का प्रतिबिम्ब है।

एक बार इबसन ने अपनी बहिन से कहा था कि उसके जीवन का एकमात्र उद्देश्य अपनी कला को चरमोत्कर्ष पर पहुँचाना है।

बहिन ने कहा—और जब तुम अपने इस उद्देश्य मे सफल हो जाओगे तब क्या करोगे ?

उसने विश्वास के साथ उत्तर दिया—तब मेरे जीवन का अत हो जायगा।

इबसन को 'केटीलिना' के प्रकाशन के लिए न तो कोई प्रकाशक मिला और न उसे खेलने के लिए कोई नाटक-मंडली ही तैयार हुई। मित्रो के उत्साह दिलाने से इबसन ने उसे स्वय प्रकाशित किया, किन्तु उसकी केवल ३० प्रतियाँ बिकी। एक दिन अर्थाभाव और भूखे पेट की यन्त्रणा से व्यथित होकर उसने गुदडीवाले के हाथ अपनी पुस्तक की सब प्रतियाँ बेच दी। यह भी भाग्य की विडबना है कि इबसन की पुस्तक इस प्रकार रद्दी कागज़ो के भाव मे बिकी।

लगभग २० वर्ष की अवस्था मे इबसन की कवित्व-शक्ति का भी पर्याप्त विकास हो गया था, परतु उसकी उस समय की कविता मे नैराश्य, उदासीनता इत्यादि का रग कुछ अधिक गहरा हो गया है। इबसन की यह निराशावादी मनोवृत्ति आगे चलकर उसकी रचनाओ मे और भी अधिक आभासित होने लगती है। उसकी मनोवृत्ति केवल शुभ्र ज्योत्स्ना की रमणीयता मे ही नही रमती, प्रत्युत भीषण झझावात से युक्त किसी भयानक रात्रि की कालिमा भी उसे उतना ही आकर्षित करती है।

इबसन स्त्रियों के बीच मे पहुँचकर बडा गभीर हो जाता था। उसकी यह गभीरता यद्यपि कुछ स्त्रियो को आश्चर्यान्वित भी करती थी, परन्तु अधिकाश स्त्रियाँ उसके इस स्वभाव के कारण तटस्थ ही रहा करती थी।

१८६६ ई० मे उसे नार्वे की पार्लियामेट की ओर से, उसके लेखो और कृतियो के लिए, पेशन मिलनी आरभ हुई। यह एक पुरस्कार था जो उपर्युक्त पार्लियामेट देश के ख्यातिप्राप्त लेखको को प्रदान किया करती थी। जब इबसन को यह पारितोषिक प्रदान करने का प्रस्ताव उपस्थित हुआ तब, कुछ लोगो ने इबसन का विरोध भी किया था। उनकी धारणा थी कि नार्वे के पादरियो और चर्च के विरोध मे लिखनेवाले लेखक को यह पुरस्कार न मिलना चाहिए। परन्तु अत मे यह पुरस्कार इबसन को बहुमत से प्राप्त हुआ।

इबसन ने भ्रमण भी पर्याप्त किया था। वह रोम, ड्रेसडन, वियेना इत्यादि स्थानों मे घूमता रहा। इस पुरस्कार के कारण तथा प्रकाशकों द्वारा अधिक धन मिलने से ही उसे भ्रमण की सुविधा मिली थी। १० वर्ष बाद पुन वह अपने देश में कुछ महीनो के लिए लौटा। इबसन की ख्याति बढ जाने से अब नार्वे मे भी उसके प्रति लोगों की श्रद्धा जागरित हो उठी थी। अत अपने देश मे उसका पूर्ण स्वागत हुआ।

इबसन अपनी पुस्तको मे बराबर सशोधन करता रहता था। उसको लिखी हुई पुस्तको के प्रथम सस्करण से द्वितीय सस्करण मे इतना अधिक

अतर उपस्थित हो जाता था कि दूसरा सस्करण एक नवीन वस्तु सा प्रतीत होने लगता था।

इबसन की शैली का विकास वर्षो की साधना का परिणाम था। उसकी आरम्भिक रचनाओ मे भावानुभूति का प्राधान्य है। आगे चलकर उनमे जातीय भावनाओ का समावेश है। उसकी शैली का अधिक विकास समास शैली मे हुआ। कम से कम शब्दो मे अधिक से अधिक भाव भर देने की ओर वह अधिक ध्यान देता था। 'कैटिलीना' के प्रथम प्रकाशन के लगभग २५ वर्ष बाद मानो उस पुस्तक की रजत जयती के रूप मे जो नवीन सस्करण प्रकाशित हुआ था, उसमे तो यह परिवर्तन इतना अधिक आ गया है कि पुराने सस्करण की शायद ही कोई पक्ति ऐसी है जिसमे कुछ परिवर्तन उपस्थित न हुआ हो।

दस वर्षो के परिभ्रमण के पश्चात् स्वदेश लौटने मे केवल उसकी व्यक्तिगत ख्याति ही एक कारण नही थी, प्रत्युत उसके हृदय मे यह देखने की लालसा भी जागरित हो उठी थी कि अपने देशवासियो के मध्य मे उसका व्यक्तिगत स्थान क्या है? इसके अतिरिक्त उसकी कला मे भी एक नवीन दृष्टिकोण उपस्थित हो रहा था। यह नवीन दृष्टिकोण 'डी अन्जेस फोर बड' मे सर्वप्रथम दृष्टिगोचर होता है। तर्क और विवेचना से परिपुष्ट ऐतिहासिक नाटक लिखने की प्रवृत्ति मानो पीछे छूटने लगी थी और नित्य-प्रति की व्यावहारिक समस्याओ से ओत-प्रोत नाटको की ओर उसका ध्यान द्रुत गति से आकृष्ट हो रहा था। वह अपने युग के सजीव पात्रो का दिग्दर्शन कराना चाहता था। यह भी एक कारण था, जिससे इबसन के लिए एक बार पुन नार्वे की भूमि पर कुछ समय के लिए पदार्पण करना आवश्यक हो गया था।

सत्य, स्वतत्रता और प्रेम की नीव पर ही इबसन के साहित्य का प्रासाद निर्मित हुआ है। और यदि इबसन के सम्पूर्ण साहित्य का सम्यक् अनुशीलन किया जाय तो यह देखकर सचमुच आश्चर्य होता है कि उसकी कृतियाँ इस सम्बन्ध मे कितनी परिपूर्ण है। तर्क और विवेचन को लेकर उसका मस्तिष्क अद्वितीय रूप मे अग्रसर हुआ है। उसने अपने पाठको के सम्मुख जो कुछ उपस्थित किया है, उसमे उसकी कुछ प्राचीन मान्यताएँ भी है और कुछ नवीन अनुभव भी। कही-कही वह अपनी प्राचीन विचार-धारा को छोडकर नये दृष्टिकोण के साथ बढता हुआ स्पष्ट दिखाई पडता है। इबसन के साहित्य की यही कडियाँ उसके मस्तिष्क के क्रमिक विकास को स्पष्टत. इगित करती है। वस्तुत यह कथन इबसन के साहित्य के

सम्बन्ध मे जितना सत्य है, उतना ही उसके जीवन के सम्बन्ध मे भी घटित होता है। प्रेम-परक नाटको की अपेक्षा उसके ऐतिहासिक नाटक अधिक उत्कृष्ट है और ऐतिहासिक नाटको की अपेक्षा आधुनिक जीवन से सम्बन्धित नाटक अधिक श्रेष्ठ है।

इबसन की कला के उत्तरोत्तर विकास के साथ उसकी शैली मे भी एक नूतनता का समावेश हुआ। यह नूतनता स्वाभाविकता से ओत-प्रोत है। इसकी सबसे बडी मार्मिक विशेषता यह है कि इसके अनुसार सामान्य नाटको की भाँति इबसन के नाटको का आरभ नही होता। प्रत्युत जहाँ पर सामान्य नाटकों का अन्त होता है वही से इबसन के नाटको का प्रारम्भ होता है। अन्य सामान्य नाटकों मे चाहे मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से कुछ अधिक सामग्री मिल जाय; परन्तु इबसन के नाटको मे जो कलात्मकता है, वह मानव की आत्मा का ही स्पष्टीकरण कर देती है। इसी कलात्मक विशेषता के कारण इबसन अपने पत्रों की गूढ से गूढ और गुप्त से गुप्त हृद्गत भावनाओ को बिना स्वगत कथन का आश्रय लिये ही सफलता-पूर्वक व्यक्त कर देता है। इसके अतिरिक्त उसके सम्भाषण उत्तरोत्तर अधिक प्राकृतिक और स्वाभाविक होते चले जाते हैं। अधिकाश नाटकों मे यह दोष दिखाई पडता है कि पात्र रगमच पर आकर थोडे-बहुत रूप में वही सब बोलने लगते है, जो नाटककार चाहता है। इसके सर्वथा विपरीत इबसन के नाटकीय पात्रो का स्वतत्र अस्तित्व स्पष्टतः परिलक्षित होता है। प्रत्येक पात्र अपनी विशेषता के साथ बोलता है।

इबसन का जीवन शान्त और सुखी था। इबसन को बीमार होते हुए कभी किसी ने नही देखा। वृद्धावस्था के साथ शरीर मे जो शैथिल्य व्याप्त हो जाता है, उसका भी इबसन पर कोई प्रभाव न था। वह मानो स्वास्थ्य की साक्षात् प्रतिमा था।

उसका वैवाहिक जीवन भी बडा सुखी था। नार्वे छोडने के पश्चात्, जर्मनी और इटली मे वह अपनी पत्नी और पुत्र के साथ आनन्द से रहता था।

इबसन के स्वभाव की एक विशेषता सुव्यवस्था थी। वह जो कार्य करता वह एक व्यवस्थित प्रणाली से होता। यही उसके जीवन की सफलता का रहस्य था। अपने किसी विचार को लिखने के पूर्व भी वह उसपर पर्याप्त मनन कर लेता था। जब वह घूमने जाता, उसी समय वह अपनी नवीनतम रचनाओ पर विचार करता रहता था और पर्याप्त मनन के पश्चात् ही किसी विषय पर वह अपनी लेखनी उठाता था।



# टाल्सटाय

(१८२८–१९१० ई०)

टाल्सटाय ने जीवन का वास्तविक चित्रण करने मे अपूर्व सफलता प्राप्त की थी। वह अपने युग का एक महान् लेखक, विचारक और दार्शनिक था। उसके सिद्धान्तो के कारण ससार मे एक नवीन प्रणाली और आदर्शो की सृष्टि हुई है।

टाल्सटाय के सम्बन्ध मे एक कहानी प्रसिद्ध है। एक दिन तुर्गनेव के साथ टाल्सटाय देहात मे भ्रमण कर रहा था। वहाँ उसने देखा कि एक बूढा घोडा एक निर्जन मैदान मे अपने जीवन की अतिम साँसे गिन रहा है। उसे देखकर टाल्सटाय का कोमल हृदय द्रवीभूत हो गया और उसने तुर्गनेव के सम्मुख अपने हृदय के करुण उद्‌गार बड़े ही मर्मस्पर्शी शब्दो मे अभिव्यक्त कर दिये। उन दिनो डार्विन के नवीन विचार प्रचलित हो चले थे। अत तुर्गनेव ने उपहास करते हुए कहा—मुझे पूर्ण विश्वास है कि तुम्हारे पूर्वजो मे घोडे का रक्त अवश्य रहा होगा।

टाल्सटाय जिस वस्तु का वर्णन करता, उसका इतना सजीव चित्र उपस्थित कर देता था कि कही भी अस्वाभाविकता परिलक्षित न होती थी। जब वह बच्चो का वर्णन करता था, तब मानो वह स्वयं ही एक छोटा बालक बन जाता था। टाल्सटाय की लिखी हुई आत्म-कहानी 'चाइल्डहुड' और 'ब्वायहुड' मे उसी के जीवन की वास्तविक घटनाओ का चित्रण हुआ है।

टाल्सटाय का जन्म यन्सा पोल्येना मे, एक कुलीन वश मे, हुआ था। वह जब दो वर्ष का था, तब उसकी माता का देहान्त हुआ और जब उसकी आयु नौ वर्ष की हुई, तब उसके पिता भी ससार मे उसे अकेला छोडकर चले गये। अत उसकी शिक्षा का प्रबन्ध एक स्त्री द्वारा हुआ जो उसकी सम्बन्धी थी। १५ वर्ष की अवस्था मे वह कजान विश्वविद्यालय मे भर्ती हुआ। उस समय वह अपनी एक चाची के यहाँ रहता था। चार वर्षो तक टाल्सटाय इस विश्वविद्यालय मे कानून और 'ओरियन्टल फेकल्टी' का अध्ययन करता रहा। १८४७ ई० मे, उन्नीस वर्ष की अवस्था मे, टाल्सटाय ने विश्वविद्यालय छोड दिया और यन्सा पोल्येना की उन्नति के कुछ प्रयोगो मे लीन हो गया।

सम्पन्न परिवार मे जन्म लेने के कारण उसे ऐश्वर्य की सभी वस्तुएँ उपलब्ध थी, अतएव उसके यौवन के प्रारम्भिक चार वर्ष विलासिता मे व्यतीत हुए। अन्य धनवान् तथा विलासी युवको की भाँति वह भी अपना जीवन व्यतीत करने लगा, किन्तु शीघ्र ही उसे इस प्रकार के जीवन से घृणा हो गई।

१८५१ ई० मे अपने भाई निकोलस के साथ वह सैनिक शिक्षा के लिए भर्ती हुआ। सैनिक शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त उसकी नियुक्ति कोजाक के एक गाँव मे हुई। वहाँ के प्राकृतिक दृश्यो का उस पर विशेष प्रभाव पड़ा। उसकी कल्पना जाग्रत हुई और वही उसने अपनी प्रथम कृति 'चाइल्डहुड' की रचना की।

टाल्सटाय फ्रास के विलक्षण लेखक रूसो के दर्शन से भी विशेष प्रभावित था। १६ वर्ष की अवस्था मे उसका धर्म से विश्वास हट गया था। प्रकृति ने उसे अपनी ओर आकर्षित किया। रूसो पर उसकी अपार श्रद्धा थी। रूसो के ही सिद्धान्तो के अनुसार उसने अपना आरम्भिक उपन्यास 'ए रशियन लैन्डलॉर्ड' लिखा।

युद्धकाल मे वह पहाडो का सौन्दर्य देखने मे तल्लीन रहता था। इस समय उसका जीवन विभिन्न धाराओ मे प्रवाहित हो रहा था। वह एक ओर सैनिक जीवन व्यतीत कर रहा था। दूसरी ओर प्रेम की भावनाएँ उसके हृदय मे निवास कर रही थी। अपने सैनिक जीवन मे भी वह साहित्य का निर्माण कर रहा था। बाल्यकाल और युद्ध की कहानियाँ, कोसाक लोगों के सम्बन्ध मे उपन्यास, निबन्ध और पत्र उसकी लेखनी से निरतर प्रसूत हो रहे थे।

साहित्य-साधना मे अधिक व्यस्त रहने के कारण टाल्सटाय अपने सैनिक कर्तव्यो की ओर विशेष ध्यान न दे सका। यह सर्वथा स्वाभाविक भी है; क्योकि जिसकी रुचि निर्माण की ओर होती है वह विध्वस की ओर आकृष्ट हो भी कैसे सकता है? २४ वर्ष की अवस्था मे उसने 'दी इन-वेजन' लिखा। इस पुस्तक मे उसने युद्ध के विरुद्ध प्रथम बार अपने विचार प्रकट किये।

१८५३ ई० मे रूस ने तुर्की के विरुद्ध युद्ध छेड दिया था। टाल्सटाय ने इस युद्ध मे सक्रिय भाग लिया, किन्तु युद्ध में भीषण सहार और मानवता के सर्वनाश को देखकर उसका हृदय युद्ध से विरत हो उठा था। उसने बहुत पहले ही युद्ध के सम्बन्ध मे तीन पुस्तके लिखी थी। उसने स्पष्ट शब्दो मे लिखा था कि ससार के शासक अपनी प्रजा को केवल तोप का भोजन बना रहे है। ५ मार्च १८५५ ई० के दिन उसने अपनी डायरी मे भी लिखा था—'मेरे हृदय मे यह भावना प्रबल हो गई है। मै अपने समस्त जीवन को इस नवीन धर्म के लिये उत्सर्ग कर दूँगा। यह धर्म अप्रतिरोध, विश्व-बन्धुत्व और विश्वशान्ति है।'

१८५६ ई० मे टाल्सटाय सेना छोडकर सेटपीटर्सबर्ग (लेनिनग्रेड) आया। उसकी ख्याति तो सर्वत्र फैल ही चुकी थी, अत नगर के सभी प्रमुख कलाकारो ने उसका स्वागत किया। ये लेखक और कलाकार प्राय उच्च वर्ग के लिए ही साहित्य-रचना करते थे तथा सर्वसाधारण को अशिक्षित समझकर हीन दृष्टि से देखते थे। टाल्सटाय का विचार इसके सर्वथा विपरीत था। उसके लिए साहित्य ही धर्म था, अत. सौन्दर्य और बुद्धि का पवित्र सदेश वह सभी के लिए समान रूप से ग्रहणीय समझता था। इस कारण उसने कतिपय विशिष्ट लोगो के लिए न लिखकर सदैव मनुष्य मात्र के लिए ही लिखा।

टाल्सटाय साधारण मनुष्यो के जीवन से पूर्णत. परिचित न था। उच्च कुल मे होने के कारण उसे सामान्य जनता के सपर्क मे रहने का अवसर भी नही मिला था; अत. सामान्य जनता के निकट पहुँचकर अनुभव प्राप्त करना उसने अतीव आवश्यक समझा।

टाल्सटाय ने यन्सा पोल्येना मे किसानो के लिए एक स्कूल खोला। वह रूस मे प्रचलित शिक्षाक्रम का विरोधी था। उसका सिद्धान्त था कि स्वय बच्चे यह स्पष्ट कर देते है कि उन्हे कैसी शिक्षा मिलनी चाहिए, और इस प्रकार, प्रत्येक बालक की रुचि के अनुसार ही उसकी शिक्षा का क्रम होना आवश्यक है। रूसो के विचारो से प्रभावित होकर टाल्सटाय

अपने इस स्कूल मे नवीन प्रयोगो के द्वारा ही बालको को शिक्षा प्रदान करता रहा। टाल्सटाय को इसमे बहुत सफलता मिली। वह कोई कहानी अथवा वर्णन बालको को सुनाता, और जब उस पाठ के ऊपर वह बच्चो से प्रश्न पूछता तो वे उसके कहे हुए एक-एक शब्द को ज्यो का त्यो दोहरा देते थे। उसके स्कूल में किसी नियम का पालन न होता था। अत मे रूसी सरकार की क्रूर दृष्टि टाल्सटाय की इस सस्था पर पडी। पुलिस ने इस स्कूल और टाल्सटाय के घर की छानबीन की। टाल्सटाय की चाची पर इसका इतना भयानक प्रभाव पडा कि तभी से वह बीमार पड गई। उन दिनों टाल्सटाय घर पर नही था। लौटने पर जब उसे सब समाचार विदित हुए, तब वह बडा क्रोधित हुआ और उसने बादशाह जार के यहाँ यह सूचना भिजवाई कि 'मै अपना पिस्तौल सदैव भरा हुआ रखता हूँ। जो भी पुलिस अफसर मेरे यहाँ आवेगा वह इसका शिकार होगा।' इस घटना के पश्चात् वह स्कूल बन्द हो गया। टाल्सटाय ने अब सदैव के लिये रूस छोडकर लन्दन में रहने का निश्चय किया।

१८६२ ई० मे टाल्सटाय ने अपना विवाह किया। उसकी पत्नी की आयु केवल सत्तरह वर्ष की थी, और टाल्सटाय की अवस्था उससे दूनी थी। इस समय वह अपनी जमीदारी की देख-भाल करते हुए अपना अधिकाश समय साहित्य-रचना मे लगा रहा था। टाल्सटाय की पत्नी साहित्य-निर्माण मे उसे पूर्ण सहयोग प्रदान करती थी। कभी वह उसे लिखने के लिये उत्साहित करती तो कभी उसकी रचनाओ की पाडुलिपि प्रस्तुत करने मे तल्लीन रहती थी।

पन्द्रह सोलह वर्ष तक निरंतर परिश्रम करके टाल्सटाय ने 'वार एड पीस', तथा 'अन्ना करेना' ये दो अमर उपन्यास प्रस्तुत किये। 'वार एड पीस' ससार के साहित्य मे पहला ऐतिहासिक उपन्यास है, जिसमे युद्ध की भीषणता का चित्र पाठको की आँखो के सम्मुख उपस्थित हो जाता है। इस उपन्यास में मानवता की रक्षा के लिए लेखक ने युद्ध का घोर विरोध किया है। इस विशाल उपन्यास मे एक सौ से अधिक पात्रो का समावेश हुआ है। प्रत्येक पात्र का अपना एक स्वतन्त्र व्यक्तित्व है। टाल्सटाय ने अपने पात्रो का चरित्र-चित्रण ऐसा सजीव किया है कि कोई भी पाठक उन पात्रो को जल्दी नही भूल सकता।

टाल्सटाय की समस्त रचनाओ मे 'अन्ना करेना' सब से अधिक प्रच-लित उपन्यास है। आरभ से अन्त तक इसमे अत्यत स्वाभाविक दृश्यो का

वर्णन है। इन स्थलो को पढते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि मानो पात्रो की आत्मा खुलकर बाते कर रही है। अन्ना लिखते समय स्वय लेखक के जीवन मे अन्तर्द्वन्द्व चल रहा था। अन्ना मे बाइबिल के वाक्य, 'वेजेन्स इज माइन, एड आई विल रिपे',—अर्थात् बदला मेरा है और मै उसे चुकाऊँगा—का रहस्य अन्तर्निहित है।

कभी-कभी टाल्सटाय जीवन से अत्यधिक ऊब उठता था। उसके स्थान पर यदि कोई साधारण मनुष्य होता तो ऐसी मनोदशा मे या तो आत्महत्या कर बैठता अथवा मदिरा मे व्यस्त होकर अपना अन्त कर डालता। टाल्सटाय ने लिखा है कि 'मै जीवन के सम्बन्ध मे जितना ही विचार करता हूँ, उतना ही स्पष्ट रूप से मुझे यह विश्वास होता है कि जीवन बडा ही अधम और दुष्टता से ओत-प्रोत है।' उसे ऐसा प्रतीत होता था कि उसका जीवन निरुद्देश्य है। वह लिखता है—'यदि स्वर्गलोक से कोई परी मेरी अभिलाषा को पूर्ण करने के लिए मेरे सामने आ खडी होती तो मै यह नही बता सकता था कि मेरी क्या आकाक्षा है। मै जीवन मे सत्य से भी परिचित होना नही चाहता था; क्योकि मै जानता था कि सत्य यही है कि जीवन तुच्छ है।'

टाल्सटाय के हृदय मे धीरे-धीरे ज्ञान का उदय हुआ। उसकी दार्शनिक बुद्धि विकसित हुई। उसे अनुभव हुआ कि दूसरो के लिए जीवित रहना ही जीवन का सर्वोच्च उद्देश्य है। पशु-पक्षी भी तो एक-दूसरे की सहायता मे सलग्न रहते है। इस प्रकार टाल्सटाय ने अपने जीवन का उद्देश्य 'जनता के लिए' बना लिया। उस समय रूस मे इस सिद्धान्त के लिए बडा आदोलन चल रहा था। अगणित व्यक्ति जारशाही के कुचक्र मे पिस रहे थे। टाल्सटाय के उपन्यास 'वार एड पीस' मे भी प्रमुख दृष्टिकोण जनता-जनार्दन की सेवा ही है।

टाल्सटाय ने ईसाई धर्म का विस्तृत अध्ययन किया था। उसने अनेक पुस्तके धर्म के सम्बन्ध मे लिखी। उसका सबसे बड़ा सिद्धान्त यह था कि 'दुराचारियो का अन्त हिंसा से न करो'। वैसे भी टाल्सटाय आरम्भ से ही हत्या का विरोधी था और रूस के क्रान्तिकारी आदोलन से सदैव अलग रहता था। उसने स्पष्ट शब्दो मे यह घोषणा की कि रूसी चर्च एक व्यावसायिक सस्था है। इसमे ईसा से अधिक जार का प्रभुत्व है।

टाल्सटाय एक नवीन धर्म का भविष्यवक्ता माना जाता है; किन्तु उसका यह नवीन धर्म वस्तुत. कोई नवीन सदेश नही देता। उसके इस धर्म मे बुद्ध, ईसा और कन्फूशस की प्रतिध्वनि है, जिसे जनता भूल बैठी

थी। टाल्सटाय का सिद्धान्त 'मानवता की रक्षा' ही है। त्याग, उदारता, अहिसा, और सत्य ये ही उसके अस्त्र है। यही कारण है कि उसके जीवनकाल मे ही सपूर्ण ससार मे उसका मान होने लगा था, और एक महात्मा के रूप मे उसका आदर होने लगा था, किन्तु अपने ही घर मे वह महामूर्ख समझा जाता था। अपनी पत्नी से उसका सदैव मतभेद रहता था।

टाल्सटाय ने अपना जीवन एक साधारण किसान की भाँति बना लिया था। प्रतिदिन वह शारीरिक श्रम द्वारा जीविकोपार्जन करता था। उसके इस वास्तविक जीवन को देखकर उसके घरवाले और बाहर के सभ्य समाज के लोग प्राय. व्यग्य और उपहास करते रहते थे।

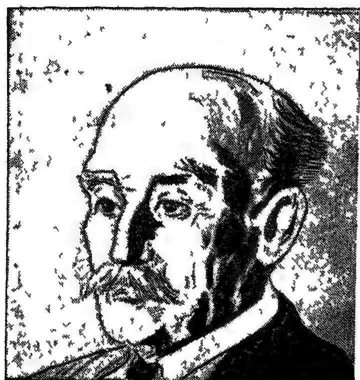
टाल्सटाय ने अपने अतिम उपन्यास 'पुनर्जन्म' मे एक बूढ़े तपस्वी की आत्मा को एक युवक पापी के शरीर मे प्रविष्ट कराया है। यह भी ध्यान देने की बात है कि लेखक के प्रथम उपन्यास मे प्रधान पात्र का जो नाम 'नेखल्दोव' है, वही नाम उसके अतिम उपन्यास के प्रधान पात्र का भी है। उसका जीवन दुराचार से आरभ होकर देवता के रूप मे परिणत हो जाता है। यह लेखक की वृद्धावस्था की रचना है। टाल्सटाय ने दया की भावना से परिपूर्ण यह श्रेष्ठतम कृति ससार को प्रदान की है।

भाग्य का यह भी एक विचित्र विधान है कि ऐसे महान् लेखक की मृत्यु बडी ही करुण दशा मे हुई। उसने ८२ वर्ष की अवस्था मे एक साधारण कृषक के वेष मे अपने गृह का परित्याग किया। मानो जीर्ण शरीर और आलोकित मुख वाला यह पथिक अतिम यात्रा के लिए चल पडा हो। भगवान् बुद्ध ने जीवन की खोज मे घर का परित्याग किया, और टाल्सटाय ने मृत्यु की खोज मे घर छोडा। वह कही निर्जन स्थान मे अपनी जीवन-लीला सवरण करना चाहता था। करुणा के चरणो पर उसने अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया था। उसके घर मे मतभेद का वातावरण चरम सीमा पर पहुँच गया था। वह अपने परिवार की दया से दूर हटकर घर से निकल खडा हुआ था। वह गाँव-गाँव फिरता रहा। अत मे मार्ग मे ही ऐसा गिरा कि फिर कभी उठ ही न सका।

अतिम समय मे जो डाक्टर उसकी देखभाल कर रहा था, उससे उसने कहा—इस पृथ्वी पर लाखो पीडित मनुष्य है, फिर तुम केवल मेरी ही चिता क्यो करते हो?

प्रभात के समय अत मे अनन्त शान्ति के साथ उसने मृत्यु का आलिगन किया। उसके अतिम शब्द थे—'मृत्यु, तेरा मगल हो।'

---



# हार्डी

(१८४०–१९२८ ई०)

टामस हार्डी धनी कुल का नही था। उसका पिता गृह-निर्माण-कार्य मे कुशल था और ठेके पर मकान बनवाकर अपनी जीविका उपार्जित करता था।

टामस हार्डी जब उत्पन्न हुआ तब बडा दुर्बल और शक्तिहीन था, किन्तु उसका मस्तक विशाल था। डाक्टर ने देखते ही कहा—यह जीवित नही ज्ञात होता है।

विधाता की रचना कि उसे नब्बे वर्ष की अवस्था प्राप्त हुई। पिता ने इस निर्बल बालक को स्कूल भेजना उचित नही समझा। हार्डी स्वच्छन्द होकर विचरता था। प्रकृति ही उसकी पाठशाला थी। वह घण्टो झरने के समीप बैठा देखता रहता। वह पेड और पशु-पक्षियो की भाषा समझने का प्रयत्न करता था।

नौ वर्ष की अवस्था मे हार्डी शिक्षा ग्रहण करने के लिए स्कूल जाने लगा। स्कूल से लौटते समय, एक पत्थर के पुल के मध्य मे खडा होकर, वह मार्ग मे चलनेवाले लोगो का अध्ययन करता था। उसे ऐसा प्रतीत होता कि मानव-आकृति मे अत्यन्त रहस्यमयी कहानियाँ छिपी पडी है।

१६ वर्ष की अवस्था मे जब वह ग्रेजुएट हुआ उस समय लैटिन, फ्रेंच और अंग्रेजी साहित्य से पूर्ण रूप से परिचित था। शेक्सपीयर के नाटक उसे कण्ठस्थ थे। जीविका के लिए हार्डी ने एक मकान बनानेवाले दफ्तर में कार्य करना स्वीकार किया। वह मकान का नक्शा बनाता था। इस कार्य मे उसकी रुचि नही थी फिर भी कर्तव्य-पालन से कभी वह विमुख नही हुआ।

अपने अवकाश के समय मे हार्डी ग्रीक भाषा का ज्ञान प्राप्त करता रहा। तीन वर्षो के परिश्रम मे उसने होमर और यूनानी नाटककारो की रचनाओ का अध्ययन कर लिया था। प्रकृति ने प्रेरणा दी और टामस हार्डी की हृदय-तंत्री बज उठी। वह कविता करने लगा। उसकी आरम्भिक कविताओ को कोई महत्त्व नही मिला। अनेक वर्षो तक सम्पादको ने उसकी रचनाओ की ओर ध्यान नही दिया था। बूढे होने पर भी हार्डी अपनी कृतियो के विज्ञापन मे कुशल नही था।

हार्डी का पहला उपन्यास 'डिस्परेट रेमेडीज' १८७१ ई० मे प्रकाशित हुआ था। लेखक ने अपने जीवनकाल मे पन्द्रह उपन्यास और अनेक कहानी-सग्रह प्रस्तुत किये थे।

कथा-वस्तु की दृष्टि से हार्डी अत्यन्त कुशल था। अपनी शिल्पी प्रतिभा के कारण उसने अपने उपन्यासो का निर्माण भी प्रवीणता से किया है। अंग्रजी के उपन्यास-लेखको मे उसका महत्त्वपूर्ण स्थान है। पात्रो के चरित्र-चित्रण मे भी वह दक्ष था। वह नियति के चक्रो मे विश्वास करता था। इसलिए उसके चित्रित पात्र-पात्री प्राय भाग्य की डोर मे बँधी रहती है। लेखक ने अपनी रचनाओ मे प्राकृतिक दृश्यो का वर्णन बड़ी सुन्दरता से उपस्थित किया। ऐसा प्रतीत होता है जैसे हम स्वय अपनी आँखो से सब देख रहे है। हार्डी के उपन्यासो मे कवि की भावुकता प्रदर्शित होती है।

हार्डी ने अपना विवाह एक ऐसी स्त्री से किया जिसका सामाजिक स्तर उससे उच्च था। सगीत की ओर उसकी रुचि थी और घोडे पर चढने मे वह निपुण थी। हार्डी सदैव पैदल चलना ही पसन्द करता था। अतएव जीवन-यात्रा मे दोनो एक ही गति से चलने मे असमर्थ थे, लेकिन लेखक ने इसके लिए कभी दु.ख नही प्रकट किया। वह अपनी स्थिति के अनुसार अपनी पत्नी की आवश्यकताओ की पूर्ति करने मे तत्पर रहता था। अपनी पत्नी के आग्रह पर ही उसने उपन्यासो की रचना की थी।

हार्डी ने स्वय लिखा है कि मै उपन्यास कभी भी लिखना नही चाहता था, किन्तु परिस्थितियो के कारण मुझे बाध्य होकर उपन्यासो की रचना करनी पडी। और इस तरह एक ऐसी स्त्री—जिसका प्रेम उसके पति को प्राप्त नही था—के खटखटाने पर अग्रेजी साहित्य मे सर्वश्रेष्ठ प्रेम-कहानियाँ निर्मित हुई थी।

हार्डी के उपन्यासो के चरित्र प्राय असफल प्रेम के कारण पथविहीन होकर भटकते दिखाई पडते है। कोई किसी को प्यार करता है और वह

उसे नही किसी दूसरे ही को प्यार करता है। यह अभिशाप है कि दोनो कभी आपस मे एक दूसरे को प्यार नही करते। यही लेखक का प्रधान लक्ष्य है। हार्डी के उपन्यासो मे व्यग्य और दया की प्रधानता है। स्वर्ग के प्रति व्यग्य और मनुष्य के लिए दया ही उसका मूल रहस्य है।

अपनी आरम्भिक कृतियो मे लेखक विधाता के प्रति असन्तोष प्रकट करता है। इसलिये कि वह अपनी सृष्टि के प्राणियो को दुख भोगने के लिए छोड देता है और उन पर ध्यान नही देता। आगे चलकर वह भगवान् से हटकर मनुष्य को दोष देता है। वह समझता है कि मनुष्य के भाग्य का दोष नही है, किन्तु स्वय उसकी दुर्बलताएँ ही उसके विपरीत हो जाती हैं। इसके पश्चात् वह समाज को ही अपराधी ठहराता है, जिसके कारण व्यक्ति को यत्रणा और वेदना के असह्य आक्रमण मे उलझना पडता है।

वृद्धावस्था मे समाज के प्रति लेखक का द्वन्द्व और भी तीव्र हो उठा था। उसका एकमात्र विश्वास था कि समाज ही व्यक्ति के असीम क्रन्दन का कारण है। लेखक के दर्शन का वास्तविक स्वरूप 'टेस' नाम के उपन्यास मे स्पष्ट होता है।

टेस का पिता आवारा था। किसी तरह उसे यह ज्ञात हो गया था कि वह एक प्रतिष्ठित कुल का वशज है। अतएव वह अपनी पुत्री का विवाह एक सम्पन्न कुल मे करना चाहता था। टेस स्वय अपनी जीविका उपार्जित करती थी। एलेक नाम के एक सुन्दर युवक से उसका सम्बन्ध हो जाता है। वह नीच मनोवृत्ति का था। अन्त मे एक सन्तान उत्पन्न हुई। उस बच्चे की भी मृत्यु हो गई। टेस फिर अपने घर वापस आती है। वह फिर अपनी जीविका के लिए कार्य करती है। अब क्लेयर नाम के एक युवक से उसका प्रेम होता है। दोनो की घनिष्ठता बढती है।

जब क्लेयर अपना प्रम प्रकट करता है, तब टेस मे इतना साहस नही होता कि वह अपनी पिछली जीवन-कहानी उसे सुना सके। विवाह का दिन समीप आता है और टेस अपने जीवन की घटनाओ का विवरण एक पत्र मे लिखकर अपने पति को सूचित करती है, किन्तु भाग्य का खेल! उसका वह पत्र कमरे के गलीचे मे छिपा रह जाता है। विवाह के बाद टेस को अपना लिखा हुआ वह पत्र दिखाई पडता है; किन्तु उस समय उसमें साहस नही रहता कि वह उस पत्र को अपने पति के सम्मुख रखे और घृणा की दृष्टि से देखी जाय।

एक दिन उसका पति अपने एक अपराध की घटना सुनाता है। एक

स्त्री से उसका सम्बन्ध हो गया था। इसके लिए वह अपनी पत्नी से क्षमा-याचना करता है। वह प्रसन्नतापूर्वक उसे क्षमा कर देती है। इसके बाद टेस अपने अपराध का वर्णन करती है। उसका पति इसके लिए उसे किसी तरह क्षमा नही करता।

समाज का कठोर नियम! स्त्री कभी पाप नही कर सकती। दोनो अलग हो जाते है। टेस फिर अपने घर चली आती है। वह घोर परिश्रम द्वारा अपनी उपार्जित आय से अपने माता-पिता की सहायता करती है।

काम छूट जाने पर भूख और निराशा से टेस के दिन कटते है। एक बार वह अपने पति को खोजने निकलती है, लेकिन उसका कोई समाचार नही मिलता। अकस्मात् एक दिन एलेक से उसकी भेट होती है वह उसे अपने साथ रहने का आग्रह करता है। पिता की मृत्यु के बाद अब टेस के सामने जीवन व्यतीत करने का कोई भी साधन नही है। अतएव विवश होकर वह एलेक के साथ रहने लगती है।

टेस सदैव क्लेयर की खोज मे रहती है। वह उसका स्वप्न देखा करती थी और क्लेयर भी टेस के लिए विकल था। उसका क्रोध शान्त हो चुका था और वह अपनी पत्नी को फिर से ग्रहण करना चाहता था।

एक दिन क्लेयर ने टेस को एक सुसज्जित बोर्डिंग हाउस मे देखा। उसका जीवन एक बहिष्कृत स्त्री की भाँति कट रहा था। लेखक समाज के कठोर नियम मे बँधे उसके भाग्य की रेखाओ का चित्रण करता है कि वे दोनो एक दूसरे के लिए व्यग्र होते हुए भी मिल नही सकते।

नगर की सडक पर एक दिन क्लेयर से टेस की भेट होती है। वह उसे सूचित करती है—मैंने उसकी हत्या कर डाली है। उसने तुम्हारे सम्बन्ध मे अपशब्दों का प्रयोग किया था। तुम्हे प्राप्त करने का यही एक मार्ग था।

हाथ मे हाथ मिलाकर वे दोनो अपने दुखद दिनो से छुटकारा पाते है, लेकिन दूसरे दिन सूर्योदय के समय टेस गिरफ्तार की जाती है।

सूर्य के उदय के साथ ही उसकी आशा का अन्त होता है। वह अपराधी प्रमाणित हुई। उसे मृत्युदण्ड मिला। इस तरह टेस ने सामाजिक नियम के प्रति अपना ऋण चुकाया।

हार्डी ने स्त्री-चरित्रो के चित्रण मे अत्यन्त सफलता प्राप्त की थी। स्त्री-चरित्रो का स्वाभाविक चित्रण और जीवन के प्रति उनकी वास्तविक गति लेखक की विशेषता है। लेखक ने अपने पात्र-पात्रियो को जैसा समाज

मे देखा वैसा ही उपस्थित करने का प्रयत्न नही किया है। विधाता ने जैसा मनुष्यो को उत्पन्न किया है, उसी रूप मे लेखक ने उन्हे प्रस्तुत किया है।

टेस उपन्यास के प्रकाशन के पश्चात् लेखक की बडी कटु आलोचनाएँ हुई। सर्वत्र उसका विरोध हुआ। समाज के स्पष्ट चित्रण को कोई स्वीकार करना नही चाहता था।

जब हार्डी के मित्रो ने उन आलोचनाओ की ओर उसका ध्यान आकर्षित किया तब उसने कहा—मै अपनी इस पुस्तक से सन्तुष्ट हूँ। इसमे मैने अपनी कला को पूर्णतया प्रकट किया है।

लेखक ने अपनी कला का प्रयोग अपने अगले उपन्यास 'जूड' मे भी किया। इस उपन्यास के प्रकाशित होते ही अग्रेजी साहित्य मे जैसे तूफान सा उठ गया। लोग लेखक की निन्दा और विरोध करने लगे। समाज अपने नग्न रूप को कैसे देखना स्वीकार करता ?

परिणाम यह हुआ कि हार्डी ने दु खित होकर उपन्यास लिखना ही बन्द कर दिया। उसने कहा—मै समझता था कि मै बुद्धिमान् पाठको के लिए लिखता हूँ।

अन्त मे हार्डी काव्य-रचना करने लगा। उसका विचार था—मेरी कविताओ से किसी को आघात नही होगा, क्योकि कोई उसे पढने का कष्ट नही करेगा।

हार्डी ने अपनी गीतात्मक कविताओ का सग्रह आठ भागो मे प्रकाशित कराया। इसके अतिरिक्त उसने नेपोलियन के जीवन पर भी नाटकीय कविता की रचना की। वास्तव मे हुआ भी ऐसा ही, लोगो ने उसकी कविताएँ नही पढी, किन्तु उसकी ख्याति निरन्तर बढती ही गई।

दुर्भाग्य से उसकी पत्नी का देहान्त हो गया। लेखक के जीवन मे रोमास का अभाव दीखता है। वह शान्तिपूर्ण अपने निवासस्थान मे दिन व्यतीत करता रहा। पत्नी की मृत्यु के बाद उसका जीवन शिथिल हो गया। उसे जीवन-सचार के लिए एक नारी की आवश्यकता प्रतीत हुई। ७४ वर्ष की अवस्था म ३५ वर्ष की एक स्त्री से उसने फिर विवाह किया। इसमे सन्देह नही कि श्रीमती हार्डी अपने पति की ख्याति और यश से आकर्षित हुई थी।

जीवन-द्वन्द्व मे कठिनाइयो के विस्तृत मार्ग पर चलते हुए, विजय प्राप्त करने का सदेश देनेवाले महान् लेखक की जीवन-यात्रा समाप्त होती है। आयु की ऊँची अट्टालिका पर चढकर उसने विजय और सम्मान प्राप्त किया था। उसके बाद उसकी बहिष्कृत और जला दी जानेवाली कृतियाँ 'टेस' और 'जूड' उसकी सर्वोत्कृष्ट रचनाएँ मानी जाती है।



# जोला

(१८४०–१९०२ ई०)

'नग्न, भ्रष्ट और कुत्सित।' इन शब्दो मे जोला के साहित्य की परिभाषा की जाती है, किन्तु स्वय जोला अपने साहित्य को यथार्थवादी न कहकर प्रकृतिवादी ही कहता था।

१८७४ ई० की बात है। उन दिनो प्रतिमास जोला, फ्लोबेयर, तुर्गनेव, और दाउदे पेरिस के एक होटल मे एकत्र हुआ करते थे। वहाँ वे अपनी आगामी रचनाओ के सम्बन्ध मे आपस मे विचार-विनिमय करते और साहित्य के जटिल प्रश्नो को हल करते थे। रात सात बजे से वे लोग होटल की मेज के पास बैठ जाते और बारह बजे मध्यरात्रि मे होटल छोडते थे। इसके बाद तीन चार बजे तक वे पेरिस की सडको पर सैर करते रहते थे। तुर्गनेव और दाउदे तो कभी जल्दी भी फ्लोबेयर का साथ छोड़ देते थे, किन्तु जोला फ्लोबेयर को उसके घर तक पहुँचाकर ही बिदा होता था।

फ्लोबेयर कहता—मेरे पुत्र, इस ससार मे जो कुछ कहा जा सकता था, वह सब लोगो ने पहले ही कह डाला है, अब उन्ही बातो की पुनरावृत्ति के अतिरिक्त शेष कुछ कहने के लिए हमारे पास नही है, लेकिन हमारे लिए उन बातो को अत्यन्त सुन्दर शब्दो मे कहना आवश्यक है।

जोला सदैव अपने शिक्षक के आदेशो का पालन करता था। उसने अपने नवीन प्रयोगो को ऐसे सुन्दर शब्दो मे उपस्थित किया है कि वे आज तक विश्व मे प्रतिध्वनित हो रहे है।

जोला मे अनेक जातियो के रक्त का मिश्रण था। उसकी दादी ग्रीक और माता फ्रेंच थी। पिता इटालियन था।

जोला का पिता इजीनियर था। वह नहर विभाग मे काम करता था, जो नहर पहाडो से पानी लाकर नगर को हरा-भरा बनाती थी। उसका देहान्त असमय मे ही हो गया, उस समय जोला की अवस्था केवल सात वर्ष की थी। उसकी माता निराश्रित होकर अपने पुत्र की चिन्ता मे लीन रहती थी।

पॉच वर्षो तक स्कूल मे शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् जोला कालेज मे उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए भेजा गया। वहॉ वह अपने सहपाठियो से तुतलाकर बोलता था। अपने साथियो के व्यग्य से तिलमिलाकर वह लडने के लिए प्रस्तुत हो जाता था। उसके उन्ही साथियो मे पाल जेनी भी था जो आगे चलकर फ्रास का महान् चित्रकार हुआ।

कालेज के विद्यार्थी जीवन मे १३ वर्ष की अवस्था मे ही जोला एक लेखक बन गया था। उसने एक उपन्यास और तीन अको का एक नाटक लिख डाला था। प्राय वह अपनी कक्षा को छोडकर चला जाता। कालेज की पढाई मे उसका मन नही लगता था। परीक्षा मे उसे शून्य ही प्राप्त होता था। वह प्राय. ह्यूगो, मानटेन, और रेबले की रचनाएँ पढता रहता। इन सब बातो से उसकी माता बड़ी दुखी और निराश रहती थी। वह अपने पुत्र को अपने पति के समान एक सफल इजीनियर देखना चाहती थी, किन्तु उसकी यह आशा कभी पूर्ण नही हुई।

२० वर्ष की अवस्था मे उसे एक बन्दरगाह मे क्लर्क का काम मिला, वहाँ के जीवन और परिश्रम से वह ऊब उठा। उसने नौकरी छोड दी।

जोला प्रतिदिन अपनी आवश्यकताओ से युद्ध कर रहा था। स्वार्थ, तिरस्कार और घृणा की भावनाओ से ओत-प्रोत ससार को देखकर वह क्षुब्ध हो उठता। वह एक ऐसे लोक का स्वप्न देखा करता जिसमे ऐसी दुर्भावनाओ का अस्तित्व न था। इस ससार के लिए वह एक पवित्र सदेश की सृष्टि करना चाहता था। वह चाहता था कि मानव इस पृथ्वी पर ही स्वर्ग का उपभोग करे। वह एक नई बाइबिल देना चाहता था। उसके पेट मे क्षुधा की भीषण ज्वाला जल रही थी।

पेरिस मे एक दिन उसकी भेट अपने सहपाठी पाल जेनी से हुई। दोनो की दशा बहुत कुछ एक-सी थी। अब उन दोनो ने मिलकर एक कमरा किराये पर लिया। दोनो साथ रहने लगे। एक ओर जोला अपनी कविताएँ रचता और दूसरी ओर जेनी चित्र बनाता रहता। दुर्भाग्य से दोनो को प्रकाशक नही मिलते और न उनकी कृतियो का जनता द्वारा ही आदर

होता। भूख से त्रस्त होकर दोनो ही कष्ट उठा रहे थे, किन्तु इस आपत्तिकाल मे भी जोला रगीन स्वप्न देखता था। वह जेनी से कहता—निश्चय ही मै किसी दिन एक महान् रचना प्रस्तुत करूँगा। तुम प्रतीक्षा करो और एक दिन तुम देखोगे कि मेरा कथन सर्वथा सत्य सिद्ध हुआ है।

कुछ समय बाद जोला को पुस्तको का बन्डल बनाने का काम मिला। अपने अवकाश के समय वह कहानियाँ और आलोचनाएँ लिखा करता था। १८६४ ई० में एक दिन जोला अपनी कुछ कहानियो की हस्तलिखित प्रतियाँ लेकर एक अन्य पुस्तक-प्रकाशक के यहाँ गया। उसने बडी नम्रता से कहा—महोदय, क्या आप कृपा करके मेरी इन कहानियो मे से एक भी पढने का कष्ट उठावेगे? आप देखेंगे कि मुझमे प्रतिभा है।

उसकी अस्तव्यस्त दशा और कहने के ढग से प्रभावित होकर प्रकाशक ने उसे उन कहानियो के पढने का वचन दिया।

कई सप्ताह बाद जोला को सफलता मिली और उसकी पुस्तक प्रकाशन के लिए स्वीकृत हो गई। उन दिनो वह अपनी माता के साथ रहा करता था। उसे विश्वास था कि उसे अब जीवन में आगे बढने का अवसर प्राप्त हो गया है। पत्र-पत्रिकाओ में भी उसकी कहानियाँ प्रकाशित होने लगी थी।

एक दिन जब जोला अपने कमरे से बाहर निकल रहा था तब उसने देखा कि एक सुन्दरी युवती बैठी हुई आँसू बहा रही है। यह युवती उसके मालिक मकान की पुत्री थी। वह जोला से अपनी बाते नही कहना चाहती थी, लेकिन जोला ने धीरे-धीरे सब बातो का पता लगा लिया। वह अपने प्रेमी द्वारा तिरस्कृत हुई थी। उसका प्रेमी उसे छोड कर कही चला गया था। जोला को उसके प्रति सहानुभूति उत्पन्न हुई। उसने उसे अपने यहाँ गृह-प्रबन्धिका के रूप मे रख लिया और कुछ दिनो बाद पत्नी के रूप मे उसे ग्रहण कर लिया।

जोला कुरूप था, किन्तु उसकी पत्नी अलेकोन्डाराईन स्वप्न की भाँति सुन्दरी थी। जोला उसके सौन्दर्य पर मुग्ध था और उसकी पत्नी उसकी आत्मा पर मुग्ध थी।

जोला की ख्याति अब बढने लगी थी। उसका गृह भी अब सुसज्जित हो गया था। नियमित रूप से कार्य करने की उसे पूर्ण सुविधा हो गई थी। जोला समाज के गुप्त रोगो को स्पष्ट रूप से समाने रखना चाहता था, जिससे उनका निदान हो सके। वह जो कुछ देखता अथवा अनुभव करता,

उसका वास्तविक स्वरूप पाठको के सम्मुख उपस्थित कर देता था। उसके उपन्यासो का खूब प्रचार हुआ। सभ्य ससार उसपर अपशब्दो की वर्षा करने लगा। लोग उसका विरोध करते और उसे घृणा की दृष्टि से देखते, किन्तु जोला अपनी साधना मे अविचल रूप से सलग्न था।

उसके साहित्य को पढनेवाले पाठको की सख्या बढने लगी और साथ ही जोला को अधिकाधिक धन भी प्राप्त होने लगा। जोला शिष्टाचार और आदर्श की ओर ध्यान न देकर अपनी स्वच्छन्द गति से साहित्य निर्माण मे अग्रसर हो रहा था। अपने उपन्यासो के पात्रो को ऐसे जीते-जागते रूप मे वह पाठको के सम्मुख रखता था कि कही नाम को भी अस्वाभाविकता न रह जाती थी। आशा, भय, विश्वास, प्रेम, छल, प्रवचना इत्यादि विभिन्न मनोवृत्तियो का यथातथ्य निरूपण ही जोला की कला की मार्मिक विशेषता है। समाज का अध्ययन करने के लिए वह मानव-मनोवृत्ति का सूक्ष्म निरीक्षण करता तथा जिस विषय पर अपनी लेखनी उठाता, उसका पूर्ण ज्ञान भी विभिन्न पुस्तको से प्राप्त करने मे सदैव प्रयत्नशील रहता था। इस प्रकार निरतर परिश्रम करके वह टिप्पणियाँ तैयार करता और तब उन्ही टिप्पणियो के आधार पर अपने उपन्यासो का निर्माण करता था।

जोला के उपन्यास के विषय थे—नियति का उपहास और दरिद्रो का जीवन। निरीह और आश्रयहीन मनुष्यो का चित्रण करके जोला स्वय एक धनी लेखक बन गया। अब उसे कोई आर्थिक चिंता न थी। उसका शरीर स्थूल हो गया था; किन्तु वह बचपन से ही वहमी था। उसे कोई रोग नही था, परन्तु फिर भी वह अपने आप को रोगी समझता था।

कोई सन्तान न होने के कारण जोला के घर मे बच्चो की चहल-पहल न थी। उसकी पत्नी का जीवन भी उदासीन रहा करता था। जोला के घर मे जेनी रोजरोट नाम की एक युवती रहती थी। वह स्त्री जोला की प्राइवेट सेक्रेटरी थी। उसकी अवस्था केवल २० वर्ष की थी, किन्तु जोला इस समय ५० वर्ष पूर्ण कर चुका था।

जोला ने उस युवती के लिए एक दूसरा घर लिया। दोनो का पारिवारिक जीवन आरम्भ हुआ। सौभाग्य से उन्हे दो सन्ताने हुई।

जोला की प्रथम पत्नी के जीवन मे कोई प्रसन्नता नही थी। उसका जीवन चिता और विद्रोह से व्यतीत हो रहा था। अत मे सहसा उसकी उदारता जाग्रत हो उठी। वह जोला के बच्चो और उनकी माता से स्नेह

करने लगी। वह उन लोगो के सुख और सुविधा का विशेष ध्यान रखती। उसी के प्रयत्न से जोला की सन्तानो को कानूनी अधिकार प्राप्त हुए। उसने जीवनपर्यन्त अपने कर्तव्य का पालन किया।

जोला ने अपनी एक पुस्तक प्रथम पत्नी को समर्पित की है, तथा अन्य अपनी प्रेयसी जेनी को। इन दोनो पुस्तको के समर्पण से जोला की भावनाएँ स्पष्ट होती है। जोला ने अन्तिम समय तक 'प्यारी पत्नी' और 'डारलिग जेनी' दोनो ही से अपना सम्बन्ध बनाये रखा। दोनो ही के प्रति उसके हृदय मे समान प्रेम था।

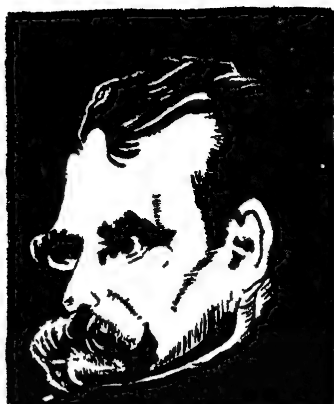
उन दिनो फ्रास मे एक निरपराध यहूदी केप्टन अल्फ्रेड ड्रेयफ्यूस पर मुकदमा चला। जोला ने खुलकर इस मुकदमे का विरोध किया। उसने अनेक आपत्तियाँ झेली, लेकिन अत मे उसी के प्रयत्न से ड्रेयफ्यूस को छुटकारा मिला। सत्य और न्याय के समर्थन मे जोला ने ससार के सम्मुख एक उच्च उदाहरण उपस्थित किया। उसने फ्रास के सम्मान की रक्षा की।

जोला ने अपने जीवन का कार्य पूरा कर लिया था। ऐसा विश्वास होता है, जैसे जीवन के रगमच पर उसका अभिनय समाप्त हो चुका था और अतिम पर्दा गिराने के लिए नियति ने घण्टी बजा दी।

उस दिन जोला रात्रि मे बहुत देर तक काम करता रहा। सोते समय वह आग बुझाना भूल गया। फलत. कमरे मे गदी गैस भर जाने के कारण उसके जीवन का सहसा अत हो गया।

प्रात.काल जोला की मेज पर पड़े एक अपूर्ण पृष्ठ पर लोगो को ये शब्द लिखे हुए दिखाई दिये—'सत्य द्वारा उच्च और सुखी मानवता का निर्माण करना' और यही जोला के जीवन-दर्शन का एकमात्र सदेश था।

---



# नीत्जे

(१८४४–१९०० ई०)

द्वितीय महायुद्ध के भीषण रक्तपात और मानवता के सर्वनाश का हिटलर एक प्रमुख कारण कहा जाता है, किन्तु हिटलर के व्यक्तित्व को निर्मित करनेवाली विचार-धारा, सर्वविदित नही है। वस्तुत इसे बहुत कम लोग जानते है कि हिटलर के व्यक्तित्व का स्रष्टा कौन था ?

फ्रेडरिक विलियम नित्जे की कल्पनाओ एव उसके दार्शनिक सिद्धान्तो ने विश्व मे मानसिक क्रान्ति उपस्थित की है। उसकी उग्र विचार-धारा ने जिस भयानक ज्वालामुखी का विस्फोट किया है, उसी का साकार रूप हिटलर था।

नित्जे का जन्म प्रशिया के सेक्सोनी प्रान्त मे हुआ था। उसका पिता एक गिरजाघर का अध्यक्ष था, अत. स्वभावत वह एक धर्मनिष्ठ पुरुष तथा, इसी कारण, एक सम्मानित व्यक्ति था। नित्जे के पूर्व-पुरुष पोल जाति के थे, परन्तु उसकी दादी और माता दोनो ही जर्मन जाति की थी।

यह भी एक विचित्र सयोग की बात है कि जिस दिन सम्राट् फ्रेडरिक विलियम चतुर्थ का जन्म हुआ, उसी दिन नित्जे का भी जन्म हुआ था। यही कारण है कि सम्राट् के नाम के साथ नित्जे के नाम का सम्बन्ध जोड दिया गया था। सम्राट् फ्रेडरिक विलियम चतुर्थ के दरबार मे नित्जे के पिता की बडी मान-प्रतिष्ठा थी। इसी से उसे धनाभाव भी नही था। गिरजाघर के अध्यक्ष होने के पूर्व इसी सम्बन्ध के कारण नित्जे के पिता को चार राजकुमारियो के अध्यापन का उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य सौपा गया था। अपने पिता की मान-मर्यादा के कारण नित्जे को ससार के रंग-

मच पर सफलता के साथ प्रवेश करने मे बडी सहायता मिली। जब नित्जे की आयु छ वर्ष की थी तभी उसके पिता की मृत्यु हो गई थी। परन्तु पिता का राज-दरबार से सम्बन्ध होने के कारण नित्जे को प्रारम्भिक जीवन मे विशेष कठिनाइयाँ नही उठानी पडी।

प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त होने के पश्चात् नित्जे ने बोन विश्वविद्यालय मे उच्च शिक्षा प्राप्त की। यहाँ नित्जे प्रसिद्ध भाषा-वैज्ञानिक रितसल से विशेष प्रभावित हुआ। धीरे-धीरे नित्जे, रितसल का अत्यन्त प्रिय शिष्य बन गया। कुछ समय पश्चात् जब रितसल की नियुक्ति लेपजिग विश्वविद्यालय मे हुई तो नित्जे भी बोन विश्वविद्यालय छोड़कर लेपजिग चला गया। यह परिवर्तन नित्जे के लिए बडा ही उपादेय सिद्ध हुआ। यही वह समय है, जब नित्जे का सपर्क अपने युग के बेगनर, रीड और सूपनहर जैसे महान् व्यक्तियो से स्थापित हुआ।

नित्जे के विचार उसके बाल्यकाल मे ही पर्याप्त पुष्ट दृष्टिगोचर होते है। उसका कहना है—सात वर्ष की छोटी सी अवस्था मे ही मै यह जानता था कि मुझ पर कभी किसी की बात का प्रभाव नही पड सकता। अपनी इस धारणा के कारण मुझे कभी किसी ने शोकान्वित भी न देखा होगा। आज भी मेरे हृदय मे सभी के प्रति नम्रता विद्यमान है। सामान्यतम व्यक्ति के लिए भी मेरे हृदय मे उदारता है। इस भाव मे न तो कोई दभ है और न घृणा। यदि मै किसी की अवज्ञा करता हूँ तो इससे यही प्रमाणित होता है कि मै घृणा से रहित नही हूँ; परन्तु बात तो यह है कि जिनकी धमनियो मे शुद्ध रक्त प्रवाहित नही होता, उन्हे मेरा अस्तित्व ही अप्रिय होता है। मनुष्य की महानता के सम्बन्ध मे तो मेरा सिद्धान्त ही अपरिवर्तनशीलता है। भूत, भविष्य, अथवा शाश्वत रूप मे, मनुष्य को परिवर्तन की वाछा न करनी चाहिए। मनुष्य को अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति तो करनी ही चाहिए, साथ ही किसी भी कारण से उन्हे छिपाना भी न चाहिए। आवश्यकताओ के सम्मुख आदर्शवाद प्रवचना मात्र है।

१३ वर्ष की अवस्था मे ही विभिन्न कार्यो के औचित्य अथवा अनौचित्य के सम्बन्ध मे नित्जे के मस्तिष्क मे नाना प्रकार के विचार उद्भूत होने लगे थे। शुभाशुभ कर्मो के सम्बन्ध मे प्रचलित धारणाओ से उसकी विचारधारा बहुत कुछ भिन्न थी। अत अपने प्रथम साहित्यिक निबन्ध मे उसने भगवान् को ही बुरे कर्मो का स्रष्टा सिद्ध किया था।

नित्जे की राजनीतिक विचार-धारा उसके यौवन-काल से ही विकसित

होने लगी थी। इन्ही दिनो प्रशिया और आस्ट्रिया मे युद्ध छिडा। इस युद्ध ने उसकी देशभक्ति की भावनाओ को बडा ही प्रबल कर दिया था। दो बार उसने सेना मे सम्मिलित होने का प्रयत्न किया, किन्तु आँखो से कुछ कम दिखाई देने के कारण वह सेना मे सम्मिलित न हो सका। १८६७ ई० मे सेना-सबन्धी नियम कुछ शिथिल हुए, फलत. नित्जे की एक सैनिक बनने की अदम्य लालसा पूर्ण हुई, किन्तु दुर्भाग्य से इस बार सैनिक शिक्षा प्राप्त करते समय वह घोडे से गिर गया, जिससे उसके सीने मे गहरी चोट आ गई। इस चोट ने उसे सदैव के लिए सैनिक कार्य के अयोग्य बना दिया।

२४ वर्ष की अवस्था मे नित्जे बेल विश्वविद्यालय मे भाषा-विज्ञान का प्रोफेसर नियुक्त हुआ। इसके लगभग दो वर्ष बाद फ्रास और प्रशिया मे युद्ध छिडा। देशभक्ति और जनसेवा के भावो से प्रेरित होकर नित्जे एक सैनिक अस्पताल मे सेवा का कार्य करने लगा। इन दिनो उसका स्वास्थ्य भी क्षीण हो रहा था। पेट के रोगो से वह बडा व्यथित था। धीरे-धीरे शारीरिक और मानसिक कष्टो से वह इतना पराभूत हो गया कि उसे सदैव के लिये अपनी नौकरी भी छोड देनी पडी।

अपने स्वास्थ्य के सुधरने की आशा से नित्जे ने स्विजरलैंड, इटली आदि देशो मे भ्रमण भी किया। वह एक स्थान से दूसरे स्थानो पर जाता; किन्तु सभी स्थानो पर उसे निराश ही होना पडता। अपने अनुकूल जलवायु और वातावरण उसे कही भी प्राप्त न हो सका। इतना होते हुए भी वह साहित्य-निर्माण मे सलग्न था। १८७२ ई०, मे उसकी एक महत्त्वपूर्ण रचना 'बर्थ आफ ट्रेजेडी' प्रकाशित हुई। इधर रोग तथा मानसिक वेदना से उसका पीछा न छूटता था। मतभेद के कारण बहुत से मित्रो से भी अनबन हो गई थी। इस अशान्ति मे सगीत ही कभी-कभी उसे कुछ शान्ति प्रदान करता था। वह सगीत का प्रेमी था। बेगनर के सपर्क मे आने से उसपर सगीत का विशेष प्रभाव पडा था।

बेगनर उसका अतरग मित्र था, परन्तु उसके विरुद्ध भी उसने अपनी लेखनी का प्रयोग किया, फलत वह मित्रता भी अब टूट गई। मत-वैषम्य एवं विरोध-प्रदर्शन की अभिरुचि के कारण प्राय उसके सभी मित्रगण विरोधी बन गये थे। केवल प्रोफेसर ओवरबुक ने ही अत तक उसका साथ दिया। इन्ही सब कारणो से उसका जीवन एकान्त मे अकेले ही कटता था।

नित्जे वश-परपरा और रक्त के प्रभाव का समर्थक था। अपने पिता के जीवन के उतार-चढाव की अपने जीवन से तुलना करते हुए उसने कहा था—मेरे पिता की मृत्यु ३६ वर्ष की आयु मे हुई थी। वे कोमल, सहृदय किन्तु रोगिष्ट थे, मानो उनका जीवन था ही अल्पकाल के लिए। वे जीवन नही, प्रत्युत जीवन की गौरवपूर्ण स्मृति-मात्र थे। मेरा स्वास्थ्य भी ठीक उसी आयु मे गिरना आरभ हुआ, जब उनका स्वास्थ्य क्षीण होने लगा था। ३६ वर्ष की आयु मे मेरी शक्ति और स्फूर्ति भी न्यूनतम हो गई थी। जीवित तो मै अभी तक हूँ; परन्तु मै अपने सामने तीन पग आगे की वस्तु भी भली भाँति नही देख पाता। १८७९ ई० मे मैंने बेसेल के प्राध्यापक पद से त्याग-पत्र देकर सेन्ट मेरिटज मे ग्रीष्मकाल-पर्यन्त क्षीण छाया के समान जीवन व्यतीत किया। और उसके पश्चात् शीतकाल आने पर—जो कि मेरे जीवन का बड़ा ही दु खद भाग था—मै नौमबर्ग मे उदासीन जीवन व्यतीत करता रहा।

जीवन-पर्यन्त नित्जे अविवाहित ही रहा। ४४ वर्ष की अवस्था में उसने लिखा था कि मेरी कोई आकाक्षा नही है। सम्मान, स्त्री और धन की अभिलाषा से मै बहुत दूर हूँ। मेरी इस उदासीनता का कारण इन वस्तुओ का अभाव नही है।

शारीरिक और मानसिक जिन परिस्थितियों का उपर्युक्त पक्तियो मे उल्लेख हुआ है, उन्होने नित्जे के जीवन-सबन्धी दृष्टिकोण को एक विशिष्ट रूप प्रदान कर दिया था। जीवन के संघर्ष मे सतत सलग्न रहते-रहते उसके हृदय मे दृढ आत्म-विश्वास हो गया था।

नित्जे का निम्नोक्त कथन उसके इसी आत्म-विश्वास का परिचायक है। एक स्थान पर उसने लिखा है कि, 'मैंने जीवन की उत्कृष्ट तथा सामान्य बहुत सी बातो को एक ऐसे रूप मे अनुभव किया है, जिस रूप मे सामान्यत· लोग उनका अनुभव नही करते। स्वास्थ्य और जीवन की प्रबल लालसा के आधार पर ही मैंने अपने सिद्धान्त निश्चित किये है। और मै चाहता हूँ कि इसे लोग भलीभाँति समझे। जीवन के उन दिनो मे, जब मै अत्यधिक निर्बल हो गया था, मैंने निराशावाद को तिलाजलि दे दी थी। आत्मोद्धार की कामना ने मुझे नैराश्य और निर्धनता के सिद्धान्तो को आत्मसात् न करने दिया। हाँ, तो प्रकृति के श्रेष्ठतम निर्माण मानव को हम कैसे समझे? श्रेष्ठतम मानव हमारी भावनाओ को परितृप्त करता है। मानो वह लकड़ी के एक ऐसे कुन्दे से गढा गया है, जो कठोर

भी है, साथ ही मधुर और सुगधित भी है। वह केवल उन वस्तुओ का उपभोग करता है, जो उसके लिए उत्तम है। और जब इस उत्तमता की सीमा का अतिक्रमण हो जाता है, तब उसके आनद और इच्छाओ का भी अत हो जाता है। वह आपत्तियो के निराकरण के हेतु युक्तियाँ निकालता है। वह जानता है कि आपत्तिजनक घटनाओ से भी कैसे लाभान्वित हुआ जा सकता है। वे सब वस्तुएँ जो उसका सहार नही करती, उसे अधिक सशक्त बना देती है। वह जो देखता-सुनता और अनुभव करता है, उससे स्वभावत कुछ न कुछ अनुभव प्राप्त कर लेता है। वह चुने हुए सिद्धान्तो का सग्राहक होता है और शेष सब को छोड देता है। ऐसा व्यक्ति अपना साथी स्वय ही होता है। चाहे उसका ससर्ग पुस्तको से हो चाहे इतर व्यक्तियो अथवा प्राकृतिक दृश्यो से। किन्तु आदर वह उन्ही वस्तुओ का करता है जिन्हे वह स्वय चुनता है, अथवा जिन्हे वह स्वीकार करता है और जिन पर उसे विश्वास होता है। सभी प्रकार की उत्तेजनाओ के प्रति उसकी प्रतिक्रिया धीमी होती है। दीर्घकाल तक सावधानी और समझदारी से काम लेते-लेते उसमे यह जो बुद्धिमत्तापूर्ण दीर्घसूत्रता उत्पन्न हो जाती है, उसीसे वह प्रत्येक उत्तेजक परिस्थिति का मूल्याकन करता है और जल्दी उसकी ओर आकृष्ट नही होता। वह दुर्भाग्य अथवा पाप पर विश्वास नही करता। वह दूसरो के साथ और स्वय अपने आपके साथ भी सतुलन का भाव रखता है। उसे कुछ बातो की उपेक्षा करना भी आता है, और वह इतना सशक्त होता है कि प्रत्येक बात से लाभ उठा लेता है।'

कुछ लोगो का मत है कि नित्जे की रचनाओ मे अनर्गल प्रलाप के अतिरिक्त और कुछ नही है। उनके विचारानुसार यदि नित्जे की विचार-धारा अधिक प्रचलित हो जाय तो विश्व मे प्रलय और सर्वनाश का दृश्य उपस्थित होने मे अधिक समय नही लगेगा। नित्जे की सर्वश्रेष्ठ रचना 'दस स्पेक जरास्थुरिया' है। इस रचना को कुछ लोग भले ही अच्छा न समझे, परन्तु इसमे सदेह नही कि विश्व-साहित्य के इतिहास मे इस पुस्तक का स्वतन्त्र तथा महत्त्वपूर्ण स्थान है। केवल घृणा की दृष्टि से इसे अलग हटाकर नही रखा जा सकता। इस पुस्तक की प्रस्तावना मे नित्जे की बहिन ने लिखा है कि—'जरास्थुरिया मेरे भाई की निजी रचना है। यह व्यक्तिगत अनुभव, आशा, निराशा और सुख-दुख की घटनाओं का इतिहास है। मेरे भाई के मस्तिष्क मे जरास्थुरिया की आकृति युवावस्था मे स्थापित हो

गई थी। वह जीवन के विभिन्न समय मे उसका स्वप्न देखता रहा।' जरास्थुरिया के कथानक एव उसके प्रमुख पात्र पर पारसियो के अवेस्ता का कुछ प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। जरास्थुरिया एक प्रकार के रहस्यवादी धार्मिक विश्वास की स्थापना करता है; जिसे सामान्यत 'जरोस्तर धर्म' कहते हैं। उपर्युक्त पुस्तक मे जिस गृद्ध और सर्प इत्यादि का उल्लेख है, वे सब फारसी के प्रतीक है। नित्जे ने इस प्रकार प्रतीक रूप मे अपने सदेश, भावनाओ और सिद्धान्तो की बडी कुशलता से अभिव्यक्ति की है।

नित्जे एक महामानव (सुपरमैन) मे विश्वास करता था। उसका कहना था कि एक सम्पूर्ण राष्ट्र की विजय-गाथा कैसे गाई जा सकती है ? प्रत्येक राष्ट्र मे व्यक्ति की ही प्रधानता पाई जाती है। यूनानियों को विशेष महत्त्व इसी कारण प्राप्त है कि उनके राष्ट्र मे अनेक विशिष्ट व्यक्तियो ने जन्म लिया था।

नित्जे का विश्वास था कि महामानव की कल्पना को यथार्थ रूप देने मे ही मानव जाति का कल्याण अन्तर्निहित ह। उसकी धारणा थी कि ईसाई धर्म कायरों और पददलितों के आक्रोष का परिणाम है। इसी से इस धर्म ने उन सब बातो पर प्रतिबन्ध लगा दिया है जो सुन्दर, परिपुष्ट और दृढता से ओत-प्रोत हैं। वस्तुत. ये सभी गुण शक्ति के आश्रित हैं। अत इस प्रतिबन्ध के परिणामस्वरूप उन सब शक्तियो को, जो जीवन को उन्नत और अग्रसर करने वाली है, बहुत अधिक महत्त्व-हीन बना दिया गया है। अब यह आवश्यक हो गया है कि लोगो के सम्मुख यथार्थ मूल्याकन की एक नवीन कसौटी उपस्थित की जाय। यह कसौटी एक सशक्त, बलिष्ठ और महान् मानव के रूप मे होनी चाहिए, जो जीवनी-शक्ति से परिपूर्ण और पूर्ण उन्नत हो। यह कसौटी आजकल के उस तथाकथित महामानव से सर्वथा भिन्न है जिसके जीवन का उद्देश्य भावनाओ, आशाओ और आकाक्षाओं का दमन मात्र है। महामानव की प्राचीन धारणा ने—जो कि अशक्तो, निर्बलो और कायरो के ही अनुकूल है—जिस प्रकार आज भी अशक्त और निर्बल मानव-जाति को जन्म दिया है, ठीक उसी प्रकार महामानव की यह नवीन कल्पना एक सशक्त बलवान्, स्वस्थ और साहसी मानव का निर्माण करेगी, जो स्वय जीवन का गौरव होगा। सक्षेप मे यह कहा जा सकता है कि, इस नवीन सिद्धान्त का प्रमुख सूत्र यह है कि शक्ति के द्वारा उद्भूत और परिचालित सभी वस्तुएँ श्रेष्ठ है और निर्बलता से उत्पन्न सभी वस्तुएँ हेय हैं।

नित्जे की विचार-धारा ठोस तर्को पर आधारित होते हुए भी ईसाई धर्म के मान्य सिद्धान्तो के प्रतिकूल थी। यही कारण था कि जर्मनी तथा योरोप मे अन्यत्र भी, लोग उसे नास्तिक समझने लगे थे। नित्जे पत्र-व्यवहार मे दीर्घसूत्री न था। उसके जो पत्र उपलब्ध है उनमे भी इस बात का बराबर सकेत मिलता है कि लोग उसे ईसाई धर्म और ईसामसीह का विरोधी समझते थे, किन्तु नित्जे को इसकी चिन्ता न थी। अत तक उसकी विचार-धारा अक्षुण्ण बनी रही थी। निराशा की भावना से दूर रहने का प्रयत्न करते हुए भी अज्ञात रूप से एक प्रकार की निराशा उसे व्यथित करती रहती थी। विरोधियो की सख्या दिन पर दिन बढती जाती थी, साथ ही उसका स्वास्थ्य भी गिरता जा रहा था। इन सब बातो के होते हुए भी नित्जे अध्ययन, गम्भीर चिंतन तथा साहित्य-निर्माण मे तल्लीन था। जरास्थुरिया के प्रथम भाग को उसने केवल १० दिनो मे लिख डाला था। इस पुस्तक के शेष तीन भाग भी क्रमश. इसी प्रकार बहुत थोडे दिनो मे ही लिख डाले गए थे। अत यहाँ कहना पडता है कि किसी अज्ञात शक्ति की प्रेरणा से एक आवेश प्राप्त करके नित्जे ने अपने इस ग्रथ की रचना की थी। यद्यपि नित्जे ने स्वत अफलातून की हँसी उडाते हुए कहा था कि 'वह किस प्रकार स्वप्न मे एक आदेश अथवा प्रेरणा प्राप्त करके अपनी पुस्तको को लिख डालता था।' परन्तु वास्तव मे नित्जे ने भी किसी अज्ञात शक्ति के बल से ही अपने ग्रथ का निर्माण किया था, अन्यथा ऐसी विषम परिस्थितियो मे ऐसी गम्भीरता से मौलिक ग्रथो का प्रणयन कदापि सभव नही था।

स्वास्थ्य की क्षीणता और अथक परिश्रम ने नित्जे को अतिम दिनो मे विक्षिप्त कर दिया था। १८८८ ई० के अत मे नित्जे का मस्तिष्क विकृत होने लगा था। अतिम दिनो मे उसके अनेक पत्रों मे इस विक्षिप्त दशा का स्पष्ट आभास मिलता है। अब उसकी आत्मप्रशसा का स्वर भी कुछ धीमा पड गया था। वही नित्जे, जो कभी कहा करता था कि अपने ग्रथो को पढने के लिए उसे थोडे से ही पाठको की आवश्यकता है; अब अपने ग्रथो को न समझ सकने के कारण जर्मन जनता पर झुँझला उठता था। अब वह यह चाहता था कि पेरिस और पीटर्सबर्ग मे उसे कुछ ऐसे व्यक्ति मिल जायँ जो फ्रास और रूस मे उसकी ख्याति फैला सके। उसके एक मित्र ने कुछ ऐसे व्यक्तियो के पते भी उसे बताए, किन्तु उन लोगो के पास पुस्तके पहुँचने के पहले ही उसने एक जर्मन पत्रिका मे लिखा था

कि लोग पेरिस और पीटर्सबर्ग मे उसके ग्रथो का अध्ययन करते है, परन्तु जर्मनी की जनता उसका समुचित आदर नही करती।

कुछ लोगो की धारणा है कि नित्जे मे आरभ से ही कुछ पागलपन विद्यमान था और यही पागलपन बढते-बढते उसके अतिम दिनो मे स्पष्टत परिलक्षित होने लगा था। लोगो की इसी भ्रान्त धारणा ने यह विचार फैला दिया है कि नित्जे के ग्रथ एक पागल व्यक्ति के ग्रथ है; परन्तु यह धारणा सर्वथा भ्रमपूर्ण है। उसके ग्रथो मे पुष्ट सिद्धान्तो का प्रतिपादन और मौलिक विचारो का सुव्यवस्थित प्रदर्शन सर्वत्र दिखाई देता है। अपने मित्रो से वार्तालाप करते समय एव पागल होने के पूर्व उसके विस्तृत पत्र-व्यवहार मे भी विकृति का कही कोई चिह्न न था। वस्तुत उसके जीवन मे पागलपन का उदय सहसा हुआ था। सभवतः अपना उन्निद्र रोग दूर करने के लिए उसने क्लोरल का अत्यधिक सेवन किया और इसके अतिरिक्त अधिक मानसिक परिश्रम, एकान्तवास, निराशा इत्यादि सभी बातो के कारण उसका मस्तिष्क अतिम दिनो मे विकृत हो गया था। इस उन्माद के कारण उसे 'जेना' के एक मानसिक चिकित्सालय मे भी कुछ समय तक रहना पडा था। कुछ अच्छे होने पर वह नौमबर्ग मे अपने घर चला आया था। कुछ दिनो बाद वहाँ से उसकी बहिन उसे 'वीमर' नगर मे, एक मकान मे, ले गई थी। वहाँ तीन वर्ष पश्चात् इस प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्ति का देहावसान हो गया।

---

# अनाटोले फ्रांस

(१८४४–१९२४ ई०)

अनाटोले फ्रास अनीश्वरवादी था, किन्तु उसकी रचनाएँ अत्यन्त महत्व-पूर्ण है और वह फ्रास का एक महान् लेखक माना जाता है।

अनाटोले फ्रास का जन्म पेरिस मे हुआ था। उसका पिता पुस्तको का व्यवसाय करता था। पेरिस मे पुस्तको की उसकी एक दूकान थी। पुस्तके बेचने से अधिक उन्हे पढना उसे विशेष प्रिय था। वह राज्य-सत्ता और कैथलिक धर्म का पक्षपाती था। मानव-जीवन की विषादमय स्थितियो के

सम्बन्ध मे उसके बडे पुष्ट विचार थे और वह स्वय भी उसी वातावरण मे उलझा हुआ था। उसकी दूकान पर ऐसे लोग एकत्र होते जो जनतत्र और क्रान्ति का विरोध करते थे। युवक अनाटोले उन लोगो के वार्तालाप को बडे ध्यान से सुनता था।

अनाटोले की शिक्षा कालेज मे हुई थी, किन्तु उसकी रुचि पढने मे नही लगती थी। वह काल्पनिक था। वह प्राय क्लिओपेटरा जैसी ऐतिहासिक नारी और सन्तो का स्वप्न देखता था। वह ससार का इतिहास चालीस खण्डो मे पूर्ण करना चाहता था।

उसका विकास बडी मन्द गति से हुआ। वह आलसी था। उसका पिता चाहता था कि उसका पुत्र किसी उद्योग मे लगे और कोई वृत्ति ग्रहण करे। अनाटोले कुछ निश्चित नही कर पाता था। वह दुकान पर बैठा रहता, पुस्तके पढता और ग्राहको की प्रतीक्षा करता। वह विज्ञापन, सूचीपत्र आदि बनाने मे अपने पिता को सहयोग देता था। वह कविता करता था। वह अपनी जीविका के लिए कोई प्रयत्न नही करता था। तीस वर्ष की अवस्था मे उसने सेनेट लाइब्रेरी मे कुछ कार्य करना आरम्भ किया, लेकिन कुछ समय बाद मतभेद के कारण उसने त्यागपत्र दे दिया।

इसके बाद वह पत्रो के लिए लेख और पुस्तको की प्रस्तावना लिखकर धन उपार्जित करता रहा। उसने अपना विवाह एक ऐसी स्त्री से किया, जिसके स्वभाव के कारण उसका जीवन अस्त-व्यस्त रहा। अन्त मे उसका पारिवारिक जीवन इतना कलहपूर्ण हुआ कि उसने अपनी पत्नी को त्याग दिया। इन घटनाओ के कारण साहित्य की ओर उसकी रुचि अग्रसर होती गई। इसका विवरण उसके उन्पयास 'वीकर-वर्क वोमन' मे वर्णित है।

आनाटोले फ्रास के साहित्यिक कार्यों मे मैडैम-डी-काईलवेट का विशेष प्रभाव पडा। इस महिला के जीवन का एकमात्र उद्देश्य यह था कि अनाटोले अपनी साहित्य-साधना मे सफल और यशस्वी हो। अनाटोले और इस महिला के सम्बन्ध के विभिन्न अगो पर विशेष प्रकाश डाला गया है। साहित्य मे बहुतेरे अनुसन्धान हुए और अनेक पुस्तके प्रकाशित हुई हैं। पत्नी से सम्बन्ध-विच्छेद करने के बाद अनाटोले इसी महिला के यहाँ आकर निवास करने लगा था। वह सदैव उसके साहित्यिक कार्यों मे सहयोग देती थी और नियमित रूप से लिखने के लिए उसे बाध्य करती थी। वह स्वभाव से ही आलसी था, किन्तु इस महिला के शासन मे प्रति-

दिन कई घण्टो तक उसे कार्य करना पडता था। वह इतनी शिक्षित भी थी कि अनाटोले को परामर्श और सहयोग देने मे उसकी योग्यता का परिचय मिलता है।

१८८१ ई० मे लेखक का प्रसिद्ध उपन्यास 'दी क्राइम आफ सिलवेस्त्रे बोनार्ड' प्रकाशित हुआ। फ्रेच एकेडमी के एक पुरस्कार के लिए ही उसने इस रचना को प्रस्तुत किया था। इसके बाद ही वह एकेडमी का सदस्य चुना गया। उसकी ख्याति फैल गई। उसने अपना अन्य उपन्यास 'माई फ्रेन्डस् बुक' लिखा। इससे उसकी प्रतिष्ठा उच्च शिखर पर पहुँच गई। ४४ वर्ष की अवस्था मे वह 'टेम्पस्' नाम के पत्र मे साहित्यिक आलोचक के रूप मे प्रकट हुआ। उसकी विवेचना गम्भीर होती थी। बचपन से ही पुस्तके पढने के कारण उसके विचार पुष्ट हो गये थे और उसकी शैली आकर्षक थी।

अनाटोले फ्रास की शैली सर्वप्रिय है। उसके उपन्यास दार्शनिक गम्भीरता के कारण कुछ शुष्क अवश्य है, किन्तु उनमे जीवन की जटिल समस्याओ का दिग्दर्शन है। जीवन के प्रति लेखक की धारणा थी कि इस ससार मे हमारा ज्ञान बहुत अल्प है और जब हमारे ज्ञान का विकास होता है तब हम इस ससार को छोडकर चले जाते है। किसी विषय पर लेखक अपना मत स्थिर नही करता। सभी विषयो पर उसका उत्तर होता है—सम्भवत। और इसी सन्देह के कारण उसके अविश्वास का जन्म हुआ है।

अनाटोले फ्रास का 'थायस' उपन्यास उसकी समस्त कृतियो से भिन्न है। यह अत्यन्त आकर्षक उपन्यास है। इसमे एक महान् तपस्वी के पतन का बडे स्वाभाविक रूप मे वर्णन हुआ है। कल्पनाओ ने कैसे वास्तविक रूप ग्रहण किया और कैसे वह तपस्वी थायस नामक एक वेश्या के सम्मुख आत्मसमर्पण करता है? वासना के प्रति विचारो का द्वन्द्व बडी कुशलता से वर्णित है। ऐसा प्रतीत होता है कि फ्लोबेयर के यथार्थवाद का लेखक के ऊपर प्रभाव पड़ा था। थायस का छायानुवाद श्री प्रेमचन्द जी ने हिन्दी मे किया था, किन्तु उसमे वह सौन्दर्य नही है जो अग्रेजी अनुवाद मे है।

अनाटोले फ्रास ने अधिक आयु प्राप्त की थी, अतएव उसने अपने जीवन मे दर्जनो उपन्यास लिखे। उसके श्रेष्ठ उपन्यासो मे 'पेनगुन आइलैड', 'दी गार्ड आर एथिस्ट' का विशेष महत्त्व माना जाता है।

अनाटोले फ्रास को नोबेल पुरस्कार मिला था। उसकी कीर्ति विश्वव्यापी थी। वह साहित्य का एक अमर पुजारी है। उसने अपने जीवन मे अन्य लेखको की भाँति कभी दरिद्रावस्था का अनुभव नही किया था। उसे अपने पिता की सम्पत्ति प्राप्त हुई थी और इसके अतिरिक्त उसकी पुस्तकों की रायल्टी से इतना धन प्राप्त होता था, जो उसके लिए पर्याप्त था। यह सब होते हुए भी मानव-समानता के सिद्धान्त का वह समर्थक था।

अनाटोले का जीवन सदैव ऐश्वर्य और सुख मे ही व्यतीत हुआ, किन्तु उसकी कृतियो मे मानव-जीवन के प्रति व्यग्य भरा पडा है। अन्तिम काल मे वह अपने नाती के साथ दिन व्यतीत कर रहा था। मैडेम काईलवेट की मृत्यु हो गई थी। उसके जमाता ने युद्ध मे वीरगति प्राप्त की थी और अनाटोले की पुत्री का भी देहान्त हो गया था।

अनाटोले वृद्धावस्था मे स्वय अपनी लम्बी आयु से ऊब उठा था। मानव-जीवन मे माता का स्थान कितना स्नेहमय और महत्त्वपूर्ण है, इसका उदाहरण अनाटोले के अन्तिम वाक्य मे है। अस्सी वर्ष का एक वृद्ध मृत्यु-शय्या पर पडा अचेतनता मे बार-बार अपनी माँ को पुकार रहा था।

सबसे आश्चर्य की बात यह थी कि जीवन भर भगवान् के अस्तित्व मे अविश्वास करनेवाले इस महापुरुष की मृत्यु-शय्या के समीप एक पादरी भी बैठा था, जिसे आशा थी कि वह अपनी आत्म-स्वीकृति और पश्चात्ताप प्रकट करेगा और इस मरनेवाले नास्तिक को वह सीधे स्वर्ग भेज देगा, किन्तु इस क्रिश्चियन प्रथा का प्रदर्शन उसके लिए व्यर्थ था।

फ्रास के एक नगर टूर्स के समीप उसके ग्राम्य-निवास मे ही उसकी मृत्यु हुई थी और उसका शव-सस्कार बडे सम्मान से किया गया था।

---




# मोपासां

(१८५०–१८९३ ई०)

मोपासा एक विलक्षण कहानी-लेखक था। विश्व मे कहानी-कला को परिष्कृत और सुन्दर रूप देने का महत्त्व फ्रास के इस अमर लेखक को ही प्राप्त है।

उस समय सभी लोग यह कहते थे कि यह पेरिस का अत्यन्त निर्लज्ज युवक है। पेरिस के सभ्य लोग उससे घृणा करने लगे थे। उसकी एक अश्लील कविता के लिए पुलिस उसे कोर्ट मे ले गई थी।

मोपासा की माँ बडी भावुक थी और वह प्राय कल्पना-लोक मे विचरण करती थी। उसका भाई एक प्रतिभासम्पन्न कवि था, जिसकी असमय मे ही मृत्यु हो गई थी। वह आशा की अट्टालिका पर बैठी हुई यही स्वप्न देखा करती थी कि किसी दिन उसका पुत्र सफल और कुशल पुरुष बनेगा।

मोपासा को आरम्भ से ही देवी देवताओ की ओर आकर्षित किया गया था, किन्तु वह विभ्रान्त होकर समुद्र-तट पर चला जाता था। वहाँ वह प्राय: रात्रि मे अपने दो कुत्तो को साथ लेकर समुद्री मछली खोजवाया करता था। पुरस्कार के प्रलोभन से मछुए उसका साथ देते थे। इसके अतिरिक्त वह किसानो के सभी खेलो मे भाग लेता था। समुद्र की निर्मल और शीतल वायु उसके जीवन मे उमग उत्पन्न करती थी। वह उत्सवो और मेलो मे युवतियो के साथ नृत्य करता था। मार्ग मे चलते हुए वह किसी अपरिचित व्यक्ति से भी बाते करने लगता था। किसी ऊँची चट्टान पर खडा होकर वह दूरबीन लगाकर दूर की रेखाओं को देखता रहता, और उसके हृदय मे यह भावना उठती कि वह समुद्र पर भ्रमण करने वालो का वशज है, और उसकी धमनियो मे उन्ही का रक्त सचरित है। उसे ऐसा

प्रतीत होता था कि वसन्त ऋतु मे प्रात काल अपनी नौका किसी अज्ञात बदरगाह की ओर छोडने से बढकर दूसरा कोई उत्तम सुख नही है।

मोपासा की माँ सदैव उसका पथ-प्रदर्शन करती रहती थी। उसने उसे युवावस्था मे पादरियो के मठ मे भर्ती कर दिया था, परन्तु मोपासा पादरी नही बनना चाहता था। वह मठ मे रखे हुए शराब के पीपो के पास पहुँचकर, अपने साथियो के साथ बडे आनद से शराब पीता। अत मे जब मठ के अधिकारियो को यह रहस्य ज्ञात हुआ, तब उन्होने मोपासा को वहाँ से निकाल दिया। इस प्रकार वह स्वतन्त्र हुआ।

मोपासा की इच्छा अब कानून का अध्ययन करने की थी। इस सम्बन्ध मे उसने कुछ परीक्षाएँ भी दी और उनमे वह उत्तीर्ण भी हुआ। उधर १८७० ई० मे प्रशिया से युद्ध छिड गया। अत मोपासा फ्रांस की सेना मे भर्ती हो गया। सैनिक जीवन उसे रुचिकर प्रतीत न हुआ, किन्तु जब फ्रास की सेना पीछे हट गई, तब जर्मनी से बदला लेने की प्रवृत्ति उसके हृदय मे जाग्रत हुई। घृणा और प्रेम की निरन्तर भावना के मध्य मे उसकी प्रतिभा का विकास हुआ। उन दिनो वह प्रेम-सम्बन्धी कविताएँ लिखने लगा था।

युद्ध समाप्त होने पर वह पेरिस गया। अब उसका ध्यान पुन कानून की शिक्षा प्राप्त करने की ओर आकृष्ट हुआ, परन्तु परिवार की आर्थिक स्थिति ठीक न होने से उसकी यह इच्छा पूरी न हो सकी। जीवन-निर्वाह के हेतु अब उसे कुछ कार्य करना आवश्यक हो गया था। उसे सरकारी विभाग मे क्लर्क का काम मिला। उन दिनो प्रतिभासम्पन्न अनेक लेखक और कवि पेरिस की गन्दी गलियो मे अपने दिन काट रहे थे। सभ्य ससार को न उनकी चिन्ता थी और न कोई उधर ध्यान ही देता था।

दिन भर काम करने के बाद मोपासा रात्रि मे उद्यानो और सडकों का चक्कर लगाता रहता। नौका लेकर सेनी नदी पर जल-विहार करना ही उसे अत्यन्त प्रिय था। मध्य रात्रि मे नाविक सहसा उसे देखकर आश्चर्य करते थे।

मोपासा का व्यक्तित्व प्रभावशाली था, किन्तु उसे मस्तिष्क-पीडा का रोग था। धीरे-धीरे उसका वह रूप बढकर उन्माद मे परिणत हो गया। वह घण्टो शीशे मे अपनी भिन्न-भिन्न आकृति देखता रहता। जाडे की रात्रि मे उसका एकाकी-जीवन विकलता की चादर ओढकर चुपचाप विचारो की गुत्थियाँ बाँधता रहता था।

मोपासा आरम्भ से ही बातचीत करने मे बडा कुशल था। किसानो, मछुओ, अभिनेत्रियो आदि के मुँह से सुनी हुई कहानियाँ एव उनके व्यक्तिगत अनुभव ही मोपासा के अध्ययन के विषय थे ।

(फ्रास का महान् यथार्थवादी लेखक फ्लोबेयर मोपासा का पथ-प्रदर्शक और गुरु था। रविवार को मोपासा अपनी रचनाएँ लेकर उसके पास जाता और बडे ध्यान से अपनी रचनाओ पर नीली पेंसिल को दौडते हुए देखता। सात वर्ष तक मोपासा नियमित रूप से अपने शिक्षक के आदेश पर चलता रहा। अन्त मे फ्लोबेयर की मृत्यु पर वह विचलित हो उठा। उसने स्वय उसके शव को नहला-धुलाकर अतिम-सस्कार मे भाग लिया।

फ्लोबेयर ने उससे कहा था—किसी भी वस्तु अथवा जीवन के किसी भी अंग पर गूढ दृष्टि से उसकी छान-बीन करते रहो और बार-बार सावधानी से उसकी परीक्षा करते रहो।)

मोपासा का मामा फ्लोबेयर के अन्तरग मित्रो मे से था। पारिवारिक सम्बन्ध होने के कारण फ्लोबेयर उसे अपनी सतान की भाँति प्यार करता था। इसके अतिरिक्त इन दोनो के विचारो और जीवन मे भी समानता थी।

मोपासा की पीडित आत्मा के सम्मुख सौन्दर्य की देवी की वाणी सुनाई देती थी। एक मूर्ति-पूजक की भाँति वह कहता—मै एक पक्षी की भाँति स्वर्ग से प्रेम करता हूँ। एक भेडिए के सदृश मै जगल को प्यार करता हूँ, पहाडी हिरनो की तरह चट्टानो को और घोडो की भाँति घास पर चरना पसद करता हूँ। निर्मल जल मे मछलियो की भाँति तैरना मुझे प्रिय है। मै एक ऐसे कम्प का अनुभव करता हूँ, जो प्रत्येक जन्तु मे समान रूप से विद्यमान रहता है। मै मनुष्य की भाँति नही, प्रत्युत जन्तु की भाँति ससार से प्रेम करता हूँ।

पशु-पक्षियो की पीडित अवस्था देखकर उसकी आत्मा विह्वल हो उठती थी। इन मूक जीव-जन्तुओ की कहानियो को उसने इतनी कुशलता से उपस्थित किया है कि पढकर उनके प्रति अनायास ही सहानुभूति और करुणा उत्पन्न हो उठती है।

मोपासा के इन वाक्यो मे उसकी कथा का रहस्य छिपा हुआ है—'जितने अधिक मनुष्य है उतने ही प्रकार सत्य के भी है। हममे से प्रत्येक अपने लिए ससार का एक भ्रामक रूप कल्पित कर लेता है। यह भ्रम अपनी-अपनी प्रकृति के अनुसार काव्यगत, भावगत, आनन्दप्रद, उदासीन, अपूत अथवा भयप्रद हुआ करता है। सौन्दर्य का भ्रम एक

मानवीय नियम है। कुरूपता का भ्रम एक परिवर्तनशील सम्मति है। निकृष्टता का भी भ्रम है जो इतना आकर्षित करता है। महान् कलाकार वे ही है जो लोगो से अपना विशेष भ्रम मान्य करा लेते है।'

निरीक्षण और मनन के ससार मे मोपासा अपने आपको खो बैठा था। उसकी आँखे धँस गई थी। वह मृत्यु से भयभीत हो उठा था। उसकी कहानियो मे जिन भूत-प्रेतादि का वर्णन है, वे स्वय उसी के जीवन के रहस्यमय क्षणो की घटनाएँ है।

एक दिन दोपहर के समय उसने अपने कमरे मे प्रवेश किया। वहाँ उसने स्वय अपनी ही प्रतिमूर्ति को पहले से बैठे हुए देखा। वह प्रतिमूर्ति वही पुस्तक पढ रही थी, जिसे वह पढते-पढते वहाँ छोडकर चला गया था। इसी प्रकार एक अन्य अवसर पर जब वह मेज के पास बैठा हुआ लिख रहा था, तब उसने अपने ही प्रतिरूप को शान्त भाव से अपने सामने बैठे हुए, उसी कहानी को लिखते हुए देखा। इस दृश्य से अत्यत भयभीत होकर वह उस छाया को हटाने का प्रयत्न करने लगा था। अपने जीवन की ऐसी ही घटनाओ से प्रेरित होकर उसने 'ला होरला' शीर्षक एक कहानी लिखी थी, जिसमे एक ऐसे मनुष्य का वर्णन है जो अपनी ही प्रतिच्छाया से भ्रमित और अनुसरित होता ह। मृतको का चीत्कार जैसे उसके रक्त मे स्पन्दन बनकर व्याप्त हो गया था। शीतकाल की रात्रि मे कभी वह उन भुनगो पर विचार करता जो केवल कुछ घण्टो तक ही जीवित रहते है। कभी वह उन पशुओ पर विचार करता जो कुछ दिनो तक जीवित रहते है। कभी वह मनुष्यो पर विचार करता, जिनका जीवन कुछ वर्षो का होता है, और कभी वह इस ससार पर विचार करता जो कुछ शताब्दियो तक स्थिर रहता है। वह अपने मन से पूछता कि विश्व और पतगो मे आखिर क्या अन्तर है?

उसे अपने चारो ओर मृत्यु का ताण्डव-नृत्य दिखाई देता था। उसने अपनी इस मनोदशा का इन शब्दो मे वर्णन किया है—मृत्यु अब मुझे अपने इतने निकट दिखाई देने लगी है कि मै उसे अपने हाथ फैलाकर दूर हटा देना चाहता हूँ, मुझे तो वह सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। मार्ग म पिस जानेवाला एक छोटा-सा कीडा, पेड से गिरनेवाली पत्तियाँ, अपने किसी मित्र के सिर मे उगनेवाले सफेद बाल, सभी मेरे हृदय को व्यथित करते और मानो चिल्लाकर मुझसे कहते है कि देख इसे देख! इसने तो मेरी सभी बातो पर आधिपत्य जमा लिया है। जो कुछ मै देखता

और खाता-पीता हूँ, वे सब वस्तुएँ जिन्हे मै प्यार करता हूँ, स्वच्छ निर्मल चाँदनी, मनोरम सूर्योदय, विस्तीर्ण सागर, स्वच्छन्द सरिताएँ, मधुर वसत-कालीन सध्या, सुरभित समीर, सभी का आनन्द जैसे विनष्ट हो गया है।

मोपासा अब सभ्य ससार के योग्य नही था। लोग उसे पागल समझते थे। वह एकान्त मे एक निर्वासित की भाँति अपना जीवन व्यतीत कर रहा था। उन्ही दिनो उसे अपने छोटे भाई की बीमारी का समाचार मिला। वह उसे देखने गया। उसका अतिम समय था। अपने प्यारे भाई को देखने के लिए उसने आँखे खोली और जैसे बचपन मे वह अपने भाई से कहा करता था ठीक उसी तरह उसने कहा—'चलो बगीचे मे हम लोग खेले।' और उसकी आँखो से दो बूँद आँसू टपक पडे।

मोपासा ने उसकी आँखो से आँसू पोछे, परन्तु अब वे नेत्र सदैव के लिए बन्द हो चुके थे। डाक्टरो ने एक दिन पूर्व ही उसके अत की सूचना दे दी थी। अपने भाई के लिए ही उसके प्राण अटक रहे थे। वह जीवित था केवल अपने भाई को एक बार देखने के लिए, उसके साथ खेलने के लिए।

मोपासा की मनोदशा अस्वस्थ थी, किन्तु विधाता की इच्छा उसे एक महान् कलाकार बनाने की थी, अत इस दशा मे भी उसकी प्रतिभा का विकास होता रहा। उसकी भावुकता धीरे-धीरे उच्च शिखर पर पहुँच गई, तथा मानव-प्रेम की अनेक उत्कृष्ट कहानियाँ उसकी सशक्त लेखनी से प्रसूत हुई। इसमे तनिक भी सदेह नही है कि उसने दाँत निपोरनेवाले मनुष्य तक का बडा सजीव चित्रण किया है। उसके प्रत्येक पात्र मे जीवन का यथार्थ स्पन्दन विद्यमान रहता है। घृणा, प्रेम, क्रोध, दया इत्यादि जिन भावो को उसने अकित किया है, पात्रो के रूप मे उनका साकार रूप खडा हो गया ह। विलक्षण व्यक्तियो और अभागो का चित्रण इतना स्वाभाविक है कि वे पात्र पाठकों के मानसिक नेत्रो के सम्मुख मूर्तिमान् हो उठते है, मानो वे स्वय सत्य से भी अधिक सच्चे है। मोपासा अपने पात्रो को पाठकों के सम्मुख मनोवैज्ञानिक रूप मे उपस्थित करके उनके मूल्याकन का भार पाठको पर ही छोडकर स्वय तटस्थ हो जाता है।

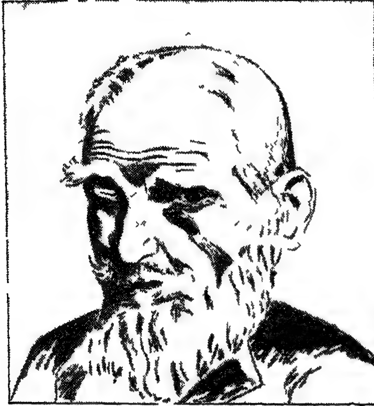
मोपासा की विक्षिप्तावस्था दिन-दिन बढती जाती थी। अब उसे ऐसा प्रतीत होता था, मानो उसके कमरे की मेज, कुर्सी, लैम्प इत्यादि वस्तुएँ जानवरो का रूप धारण करके सडक पर चल-फिर रही है। मानो उसके रक्त मे अगणित कीटाणु अपना प्रभाव दिखा रहे है। पृथ्वी पर पैर रखते

ही वह कॉपने लगता था। एक बार मैदान मे उसका रसोइया फ्रेकोइस उसे सहारा देकर ले जा रहा था। उस समय मोपासा ने गिरजाघर के समीप ईसा की मूर्ति की ओर सकेत करते हुए कहा—सचमुच महान् प्रतिभासम्पन्न तथा अखिल सृष्टि के इस महापुरुष ने पृथ्वी पर जन्म लिया था, और केवल तेतीस वर्ष की अवस्था मे ही उसके प्राण ले लिये गये। मै तो अब ४१ वर्ष का हो रहा हूँ।

कुछ ऐसी ही मनोदशा मे मोपासा के जीवन के दो वर्ष और व्यतीत हो गये। नूतन वर्ष आरभ हुआ था। कुछ घण्टे बीते थे। मोपासा ने पिस्तौल लेकर अपने मस्तक पर चला दी, लेकिन उसमे गोलियॉ नही थी। वह खाली थी। अब क्या करे? सामने एक उस्तरा पडा था। उसने तत्काल उसे उठाकर अपने गले की नस काट दी। रक्त की धारा बह उठी, किन्तु वह मुस्करा रहा था। इसी समय भोजन की सूचना देने के लिए जब रसोईदार आया तो यह दृश्य देखकर आश्चर्य और भय से कॉपने लगा। मोपासा ने उससे कहा—'तुम जानते हो फ्रेकोइस, मैने यह क्या किया है? मैने अपना गला काट दिया है।' निश्चय ही यह मोपासा के पागल हो जाने का जाज्वल्यमान प्रमाण है। प्रकृतिवादी मोपासा ने एक अतिम प्रयोग मानव-पशु पर भी कर डाला था, किन्तु यह उसके प्रयोगो का अत था। डाक्टरो ने पट्टी बॉधकर खून की गति बन्द की। प्रातःकाल का समय था। आकाश धूमिल था। लोगो ने उसे समुद्र-तट पर ले जाना ठीक समझा। उन्हे विश्वास था कि अपने परम प्रिय दृश्यो को देखकर सम्भवत. वह चैतन्य हो जायगा। मोपासा कुछ देर तक अपनी नौका की ओर देखता रहा। उसकी जिह्वा ठीक ऐसे बालक की तरह चल रही थी जिसने अभी ठीक-ठीक बोलना नही सीखा है। उसे प्रतीत होता था मानो वह घास और सरपत की हरियाली से आगे बढता हुआ लहरो से शून्य धारा मे अनन्त शान्ति से बहता चला जा रहा है। मोपासा की आत्मा का यह महाप्रयाण था।

मोपासा की कहानियो मे मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और जीवन के घात-प्रतिघात के एक से एक उज्ज्वल चित्र विद्यमान है। इसी कारण मोपासा की कहानियॉ सर्वप्रिय बन गई है।

---



# बर्नाड शा

(१८५६–१९५० ई०)

बर्नाड शा की आर्थिक स्थिति पर दु खित होकर एक महिला ने कहा था—एक जूता बनानेवाले को उचित पारिश्रमिक मिल जाता है, किन्तु एक लेखक को नही।

वास्तव मे शा को अपने आरम्भिक जीवन मे घोर आर्थिक सकट का सामना करना पडा था। केवल तेरह वर्ष की अवस्था मे शा को नौकरी करनी पडी थी। उसके परिवार की आर्थिक समस्या बडी जटिल थी। उसका पिता शराबी था। घर की व्यवस्था माता के ऊपर ही निर्भर करती थी। शा का पिता डबलिन के न्याय-विभाग मे कार्य करता था और बाद मे उसे साठ पौड की वार्षिक 'पेंशन' मिलने लगी, किन्तु इस 'पेशन' को बेंचकर उसने अनाज का व्यवसाय आरम्भ किया। व्यवसाय मे अनु-भव न होने के कारण उसे घाटा हुआ।

शा की माँ न तो अपने पुत्र की ओर ध्यान देती थी और न अपने पति के प्रति उसका प्रेम था। सगीत की ओर शा की माँ विशेष आकर्षित थी। उसका कठ बडा मधुर था। 'ली' नाम के एक सगीतज्ञ का विशेष प्रभाव उस पर था और उसी के कारण उसके सगीत का ज्ञान बढता गया। दस वर्ष की आयु मे शा स्कूल मे भर्ती हुआ, किन्तु स्कूल की पढाई उसे रुचिकर नही थी। वह गणित से घबरा उठता था। उसकी धारणा थी कि स्कूल तो जेल से भी निकृष्ट है, क्योकि जेल मे शारीरिक यत्रणा मिलती है, लेकिन स्कूल मे मस्तिष्क पर आक्रमण होता है।

शा छ वर्ष की अवस्था मे ही शेक्सपीयर के नाटको को पढता रहा। नाटक और सगीत के प्रति बाल्यकाल से ही उसकी रुचि थी। उसकी कल्पनाओ का निरन्तर विकास होता गया। वह उपन्यास और कहानियो को बडे ध्यान से पढता रहा। वह स्कूल मे अपने सहपाठियो को 'इलियड' और 'ओडेसी' की कथा के अनुसार हास्यपूर्ण विवरण देता था। वह अपने एक कल्पित पात्र द्वारा अपने सहपाठियो का मनोरजन करता। उसके पात्र की घटनाओ के वर्णन पर वे सभी हँसते-हँसते लोट-पोट हो जाते थे।

शा के परिवार के प्राणी अर्थाभाव के कारण दिन पर दिन कष्ट उठा रहे थे। इसलिए तेरह वर्ष की आयु मे शा को एक कपडे के व्यवसायी के यहाँ क्लर्क का कार्य करना पडा। वह कुछ युवको को सगीत की शिक्षा देकर भी कुछ उपार्जित कर लेता था, किन्तु परिवार का खर्च फिर भी ठीक से नही चलता था। अन्त मे घर का सब सामान बेचकर उसकी माँ लन्दन चली गई। शा अपने पिता के साथ डबलिन मे ही रहता था।

उसके पास परिवार का एक पुराना 'पियानो' शेष बचा था। शा इसी पियानो को बजाकर अभ्यास करता। चार वर्ष तक वह खजाची का कार्य करता रहा। छब्बीस वर्ष की आयु मे ७ पौड मासिक उसका वेतन हुआ। शा के भावुक हृदय मे एक महान् व्यक्ति बनने की अभिलाषा हुई। डबलिन नगर के जीवन से वह असन्तुष्ट रहा करता था। लन्दन मे उसे सफलता की आशा थी, इसलिए वह अपनी नौकरी छोड़कर लन्दन चला गया।

लन्दन आने पर शा को ज्ञात हुआ कि उसकी माँ सगीत की शिक्षा देकर और बहिन गाना गाकर अपनी जीविका उपार्जित कर रही है। शा के आ जाने पर स्थिति कुछ सरल नही हुई, क्योकि शा ने अपनी माँ से गाना सीखना आरम्भ किया और अपनी बहिन द्वारा उसने शास्त्रीय सगीत का अध्ययन आरम्भ किया।

कुछ समय बाद शा ने एक टेलिफोन कम्पनी मे कार्य किया, किन्तु उसे इस वृत्ति से घृणा थी और अन्त मे वह उससे मुक्त हुआ। साहित्य की ओर बाल्यकाल से ही उसकी रुचि थी। अब वह साहित्य-साधना मे ही अपना समय व्यतीत करने लगा। १८७६ ई० से १८८५ ई० तक शा ने नौ वर्ष में अपनी लेखनी से कुल १६ पौड उपार्जित किये थे। इसमे ५ पौड साहित्यिक रचना से, ५ पौड दवाओ का विज्ञापन लिखकर और शेष ६ पौड विज्ञापन के लिए हास्यरस की कविता लिखकर प्राप्त किये थे।

१८७९ से १८८३ ई० तक का काल शा का उपन्यास लिखने मे ही व्यतीत हुआ। वह प्रतिदिन नियमित रूप से लिखता रहा और इस तरह उसने पॉच उपन्यासो को पूर्ण किया। शा के इन उपन्यासो को तनिक भी सफलता नही मिली। उसने अपने इन उपन्यासो को प्रकाशित करने के लिए प्रकाशको के यहॉ भेजा, किन्तु किसी ने उन्हे छापना स्वीकार नही किया। इस पर शा निराश नही हुआ, उसने साठ पुस्तक-प्रकाशन-सस्थाओ के अस्वीकृति के पत्रो को एकत्र कर रखा था। उसके इन उपन्यासो के पार्सल एक स्थान से वापस आने पर दूसरे स्थान को भेजे जाते रहे। शा के सम्मुख ६ पेनी के टिकट की समस्या खडी हो जाती थी कि कैसे वह प्राप्त हो और फिर कही पार्सल भेजा जाय।

शा ने अपने नाटक 'मैन एड सुपरमैन' मे एक स्थान पर कलाकार की व्याख्या की है—सच्चा कलाकार वही है जो अपनी पत्नी को भूखों तडपने दे, अपने बच्चो को नगे पैर भटकने दे और अपनी बूढी माता को निराश्रय छोडकर कला की साधना मे लीन रहे।

शा ने अपने जीवन मे परिस्थितियो से कितना द्वन्द्व किया है, यह उसकी सम्पूर्ण जीवनी पढने पर ही ज्ञात हो सकता है। उसने लिखा है—'अन्य किसी पेशे मे अच्छी पोशाक का होना आवश्यक है, किन्तु साहित्य की वृत्ति ग्रहण करने मे एक लाभ यह भी है कि लेखक फटे-पुराने कपडे भी यदि पहने तो कोई उससे कुछ कह नही सकता।' उपन्यास-लेखन-काल मे नौ वर्ष तक शा की स्थिति ऐसी नही थी कि वह अपने कपडो की ओर ध्यान दे सके। वह अपने फटे जूते पहनकर बाहर निकलता था। उसके पैजामा मे छेद हो गया था और काले कोट का रग उडते-उडते हरा हो गया था। उसका 'हैट' भी बडा और लम्बा था। उस समय की स्मृति मे शा को दो घटनाएँ स्मरण थी। एक बार एक आदमी ने उससे नम्रतापूर्वक कहा—'मेरे पास एक पेनी भी नही है।' वह कुछ सहायता चाहता था, किन्तु शा ने उत्तर दिया–और मेरे पास भी नही है। दूसरी घटना यह थी कि एक युवती शा के पीछे लगी थी अन्त मे शा ने अपना 'पर्स' खोलकर उसके सामने उलट दिया। उसे खाली देखकर वह चुपचाप चली गई।

शा की आर्थिक स्थिति और उसके व्यक्तिगत विचारो ने उसे समाजवादी सिद्धान्तो की ओर प्रवृत्त किया। उस समय उसने कार्लमार्क्स की पुस्तक 'केपिटल' पढी। निश्चय ही इस पुस्तक का उस पर विशेष

प्रभाव पडा और उसके अपने विचार और दृढ हो गये। वह क्रान्तिकारी सिद्धान्तों का लेखक बन गया।

शा भाषण देने मे भी बडा कुशल था। वह सडक पर खडा होकर अपनी वाणी से जनता को आकर्षित कर लेता और लोग बडे ध्यान से उसकी बाते सुनते थे। वह किसी भी प्रश्न का तत्काल ही उत्तर दे देता था। वह अपने भाषण के लिए एक पैसा भी किसी सस्था से कभी नही लेता था। नगर से दूर जाने पर केवल तीसरे दर्जे का टिकट ही उसके लिए पर्याप्त था। भूखी और त्रस्त जनता शा के शब्दो से प्रभावित होकर विद्रोह करने के लिए उत्तेजित हो उठती थी। आपत्तिकाल मे शा ने सदैव जनता का पथ-प्रदर्शन किया था। शा ने 'फेबियन सोसाइटी' का सगठन किया था और उसने मार्क्स के सिद्धान्तो के अनुसार पूँजीवाद के विरुद्ध आन्दोलन खडा किया था।

१८८५ ई० मे शा के पिता का देहान्त हो गया। उस समय शा पत्रो के लिए कला सम्बन्धी आलोचनाएँ लिखकर कुछ प्राप्त कर लेता था, किन्तु उसकी आय एक सौ रुपया मासिक से अधिक नही थी। एक वर्ष बाद मिस पेनी-टाउनशेड नाम की एक आयरिश महिला से शा ने अपना विवाह किया। इसके पश्चात् शा की ख्याति और आय बढती ही गई। उसके लिखे नाटको की माँग बढने लगी। उसकी पत्नी भी धनी थी। अतएव अब शा के सम्मुख अर्थाभाव का प्रश्न नही था।

शा मास नही खाता था। वह मदिरा और सिगरेट से भी दूर था। उसे किसी भी प्रकार का व्यसन नही था। उसका जीवन अत्यन्त सात्त्विक था। वह प्रकृति का उद्दड और अक्खड था। बात-बात मे वह ऐसी चुटकियाँ लेता कि लोग मौन होकर उसकी ओर देखते ही रह जाते। वह सत्य का पुजारी था।

१९०३ ई० मे शा का श्रेष्ठ नाटक 'मैन एड सुपरमैन' प्रकाशित हुआ। शा की एक विशेषता यह भी थी कि वह अपने नाटक के अभिनेता और अभिनेत्रियो का पूर्ण रूप से निर्देशन करता था। वह अपनी विशेषताओ के अनुसार रगमच की रूप-रेखा प्रस्तुत करता था। शा इबसन के सिद्धान्तो का अनुयायी था।

प्रथम महायुद्ध के बाद शा की ख्याति निरन्तर बढने लगी। समाचार-पत्रो मे बराबर उसकी चर्चा रहती थी। शा ने स्वय लिखा है—लोगो का कथन है कि सदैव मै अपना विज्ञापन करता हूँ, लेकिन बहुत से मूर्ख

मेरे सम्बन्ध मे मूर्खतापूर्ण बाते लिखते रहते है। इसका परिणाम यह होता है कि सर्वत्र मेरी चर्चा हुआ करती है; लेकिन मेरी पुस्तको को कोई पढता नही है।

१९२५ ई० मे शा को नोबेल पुरस्कार मिला, किन्तु शा ने यह लिखकर अस्वीकार कर दिया कि—'उस तैरनेवाले के लिए उस समय 'रक्षा बेल्ट' फेका गया है, जो किनारे पर सावधानी से पार लग गया है।' लेकिन अनेक आग्रह पर शा ने उस धन को स्वीडन के साहित्य-विकास के उपयोग मे लगाने के लिए अर्पित कर दिया।

१९३१ ई० मे शा अपनी मडली के साथ सोवियत-रूस देखने गया। वहाँ की स्थिति का उस पर विशेष प्रभाव पडा। वह स्टालिन से भी मिला था। दोनो की आपस मे बाते हुई। शा स्टालिन का प्रशसक था और उसके प्रति उसकी पूर्ण सहानुभूति थी।

१९४३ ई० मे शा की पत्नी का देहान्त हुआ, तब से वह बराबर एकाकी जीवन व्यतीत करने लगा। वह वृद्धावस्था मे भी एक बालक की तरह सरल और प्रसन्न रहता था। ९४ वर्ष की अवस्था मे वह पत्रो के लिए लेख और एक पुस्तक समाप्त करने मे व्यस्त था। वह स्वय सभी पत्रो का उत्तर देता था।

शा ने विश्व-भ्रमण किया थो। वह भारतवर्ष भी आया था। ससार के सभी महान् व्यक्तियो से उसका पत्र-व्यवहार था। जीवन-द्वन्द्व मे वह एक विजयी सैनिक की भाँति था।

शा ने नाट्य-साहित्य मे युगान्तर उपस्थित किया है। पुस्तक से अधिक उसकी भूमिका का महत्त्व समझा जाता है। शा ने बडी शान्तिपूर्वक अपनी जीवन-यात्रा समाप्त की। वह अपने युग का एक महान् तपस्वी था।

---



# चेखाव

(१८६०–१९०४ ई०)

यदि कोई मुझसे प्रश्न करे कि एक ऐसे कहानी-लेखक का नाम बतलाओ जो ससार मे सब से अधिक प्रसिद्ध और श्रेष्ठ है तो निस्सन्देह मै चेखाव का नाम ही उपस्थित करूँगा।

चेखाव कहानी-लेखको का सम्राट् था। उसने कहानी-क्षेत्र की जो सीमा निर्धारित की थी उससे आगे जाने का किसी लेखक को सौभाग्य प्राप्त नही हुआ है। चेखाव रूस ही नही, विश्व के कहानी-साहित्य मे अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है।

चेखाव का जन्म दक्षिण रूस मे हुआ था। उसका पिता एक बन्धक-दास था; किन्तु अपनी योग्यता और परिश्रम से युवावस्था मे ही वह दासता के बन्धन से मुक्त हो गया था। उसने अपने पुत्र को उच्च शिक्षा के लिए अग्रसर किया। चेखाव ने मास्को-विश्वविद्यालय से डाक्टरी का अध्ययन समाप्त किया था। उसने कालेज के दिनो मे ही कहानियाँ लिखना आरम्भ किया था। आरम्भ मे वह साप्ताहिक पत्रो के लिए हास्यरस के रेखा-चित्र प्रस्तुत करता था। उसकी प्रतिभा विकसित होती गई और उसकी रचनाओ को बडा आदर मिला। हास्यरस की रचनाओ के बाद वह छोटी कहानियाँ लिखने लगा, जो गभीर हुआ करती थी। उसकी ख्याति बढने लगी। १८८७ ई० मे 'साइस एकेडेमी' ने उसके एक कहानी-सग्रह पर पुश्किन-पुरस्कार प्रदान किया था।

१८८४ ई० मे शिक्षा समाप्त करने के बाद चेखाव ने कुछ समय तक चिकित्सक का कार्य किया। उसके जीवन मे एक ऐसा समय आया, जब यह प्रश्न उठा कि वह एक डाक्टर का जीवन व्यतीत करे अथवा साहित्यकार बने। अन्त मे साहित्य की ही विजय हुई। अपनी आत्म-कहानी मे इस सम्बन्ध मे आलोचना करते हुए चेखाव ने लिखा है—अपने विषय के चुनाव पर पछताने के लिए मेरे पास अवकाश नही था। मेरी डाक्टरी शिक्षा का मेरे साहित्यिक जीवन पर निस्सन्देह बहुत बडा प्रभाव पडा। इससे मेरे अन्वेषण और पर्यालोचन का क्षेत्र बढा और मेरे ज्ञान की सीमा बहुत विस्तृत हुई। एक लेखक के नाते मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस विषय के ज्ञान से उत्पन्न लाभ को एक दूसरा डाक्टर ही समझ सकता है। इसके अतिरिक्त जीवन और मनुष्य के सम्बन्ध मे मेरी दृष्टि को इस डाक्टरी शिक्षा ने प्रभावित किया और मै इस सम्बन्ध मे भूल करने से बचा।

सचमुच चेखाव के इस ज्ञान के कारण मानव-मनोवृत्तियो का भिन्न-भिन्न चित्रण करने मे उसे अपूर्व सफलता मिली।

चेखाव की रचनाओ का क्रमिक रूप से अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि लेखक युवावस्था मे सम्पूर्ण उल्लास के साथ हास्यप्रिय था। उसकी अनेक छोटी कहानियाँ केवल तीन-चार पृष्ठो में समाप्त होती है। वे शब्द-चित्र के रूप मे है, किन्तु उनमे व्यग्य और उपहास अत्यन्त सजीव है। इसके पश्चात् उसी व्यग्य मे मानव-प्रकृति की हृदयहीनता और तुच्छता का दर्शन मिलता है।

चेखाव ने अपने जीवन-काल मे एक भी उपन्यास नही लिखा। छोटी कहानियो के ससार मे वह शासन करता था। वह कभी भी अपने प्रधान पात्र के जन्म से मरण तक का इतिहास प्रस्तुत नही करता था। वह अपने पात्र के जीवन के एक चित्र, केवल एक घटना, को लेकर इतनी कुशलता से अकन करता था कि पाठक उस पात्र को कभी विस्मृत नही कर सकता।

मानव-जीवन मे आकाक्षा का अभाव और आत्मा की दुर्बलता ही चेखाव की कहानियो का मूल रहस्य है। इसका एकमात्र कारण यह भी है कि उस युग मे रूस की परिस्थितियाँ भी वैसी ही थी। चेखाव को निराशावादी नही कहा जा सकता, क्योकि अवस्था ढलने पर उसका यह विश्वास अधिक बद्धमूल होता जा रहा था कि इस जीवन को सुन्दर और सुखी बनाया जा सकता है। उसने मनुष्य की रचनात्मक प्रतिभा और

आध्यात्मिक शक्ति मे इन शब्दो मे विश्वास प्रकट किया है—यह एक प्रसिद्ध कहावत है कि मनुष्य के लिए केवल छ फुट भूमि ही आवश्यक है, किन्तु यह एक मृत व्यक्ति की आवश्यकता है। एक जीवित व्यक्ति के लिए तीन गज भूमि नही, समस्त पृथ्वी, प्रकृति का सम्पूर्ण विस्तार, चाहिए, जिससे वह अपनी प्रकृति के सभी गुणो और विशेषताओ को उद्घाटित कर सके।

चेखाव विज्ञान की प्रगति मे विश्वास करता था और यह उसकी धारणा थी कि उसका पिछडा देश कभी एक हर-भरा बाग बन जायेगा। वह सदैव क्रान्तिकारी सघर्ष से अलग था, इसलिए उसे यह कल्पना न हो सकी कि उसकी जन्म-भूमि इतनी शीघ्रता से परिवर्तित हो जायगी।

चेखाव ने १९वी शताब्दी की आठवी और नवी दशाब्दी के रूसी जीवन पर अच्छा प्रकाश डाला है। जयशील ग्राम्यता, बुद्धिजीवियो का निराशावाद, कुलीन वर्ग का विघटन, निर्धन किसान वर्ग, 'बुर्ज्वाजी' का उत्थान, कुलक वर्ग द्वारा छोटे किसानो का शोषण—यही लेखक की कहानियो का विषय होता था। उसका वास्तविक क्षेत्र बुद्धिजीवियो का ससार था। शिक्षित और अर्ध-शिक्षित रूसी समाज के चित्रण मे वह अत्यन्त कुशल था।

टाल्सटाय ने लिखा था कि कलाकार चेखाव की तुलना पहले के लेखको से—तुर्गनेव, डौस्टाएईव्स्की या मुझसे ही—नही की जा सकती। चेखाव की अपनी एक शैली है जैसे प्रभाववादियो की अपनी शैली है। यह ठीक वैसे ही है जैसे हम किसी व्यक्ति को अपनी तूलिका से भिन्न-भिन्न रग भरते देखे, प्रत्येक बार की तूलिका की रेखा भले ही अगली बार से असम्बद्ध हो, किन्तु बाद मे आप परिणाम पर देखे तो आश्चर्य हो और आपके सामने एक पूर्ण चित्र उपस्थित दिखाई पडे।

१८९० ई० मे चेखाव ने साखालीन द्वीप की यात्रा की थी। यह द्वीप दण्डित व्यक्तियो के निर्वासन के लिए एक स्थान था। लेखक वहाँ एक पुस्तक के लिए सामग्री एकत्र करने गया था। उसने इस द्वीप से सम्बद्ध बहुत से ग्रन्थो का अध्ययन किया और कई मास तक वहाँ रहा। उसने वहाँ के निवासियो की जनगणना की और दस हजार कैदियो और प्रवासियो के नामो की सूची प्रस्तुत की। चेखाव की पुस्तक 'साखालीन द्वीप' का रूसी जनता पर बहुत प्रभाव पडा। आज साखालीन द्वीप की विशेष उन्नति हुई है और सुखी जीवन के सभी आवश्यक साधन वहाँ प्रस्तुत है। यह चेखाव की प्रेरणा का ही परिणाम है।

१८९० ई० मे ही चेखाव ने योरोप की यात्रा की थी। उसने वियेना, वेनिस, फ्लोरेन्स, मिला, जेनोआ, नीस, रोम और पेरिस आदि नगरो को

देखा। १९०० ई० मे लेखक 'साइस एकेडेमी' का सम्मानित सदस्य चुना गया। दो वर्ष बाद उसने जार द्वारा गोर्की की सदस्यता छीन ली जाने के कारण अपनी सदस्यता भी त्याग दी।

नाट्य-क्षेत्र मे चेखाव का स्थान एक पृथक् महत्त्व रखता है। उसकी कहानियो की भाँति उसके नाटक भी मनोवैज्ञानिक और गीतात्मक है। आज भी रूस की सभी रगशालाओ मे उसके नाटको के अभिनय होते है और विदेशो मे भी ये खेले जाते है। इस प्रसिद्ध यथार्थवादी कलाकार ने गद्य और नाटक के विकास को एक नई दिशा दी और रूसी साहित्य को प्रभावित करने के साथ ही उसने पश्चिमी देशो, विशेषकर अमेरिकी लेखको, पर बडा प्रभाव डाला।

चेखाव ने अपने नाटको को गीतात्मक हास्य कहा है। लेखक ने अपने जीवनकाल मे तीन नाटको की रचना की थी। उसका प्रथम नाटक 'इवानोव' का अन्त निराशा मे ही होता है और विवाह के दिन इवानोव आत्म-हत्या कर लेता है। इसमे भी बुद्धिजीवी के पतन का चित्रण है।

'अकल वान्या' का अन्त भी विषादमय है, किन्तु वान्या के हताश जीवन मे भी आशा और विश्वास की उज्ज्वल रेखाएँ दिखाई पडती है। वह भाग्य के कुचक्रो के मध्य मे परिश्रम और कार्य करने मे दृढ रहती है।

चेखाव का अन्तिम नाटक 'चेरी ट्री गार्डन' गीतात्मक है। इस नाटक के अन्त मे लेखक ने भविष्य की सुन्दर कल्पना की है। एक धनी सामन्त का चेरी के वृक्षो का एक बगीचा था। वृक्षो के पूर्ण विकास मे जब कोयल चारो ओर गान करती है, उस समय वह परियो का बगीचा प्रतीत होता है और ऐसे समय मे पेड सब काट दिये जाते है। धन के लोभ मे पैसे वाला अपने बाग को उजाड देता है, लेकिन लेखक भविष्य पर दृष्टिपात करता है। वह उस स्थान को फिर से विकसित होते देखता है। इस बगीचे के नवीन वातावरण मे सबको शान्ति और प्रसन्नता मिलेगी। व्यक्तिगत स्वार्थ वाले ऐसे बाग का कभी निर्माण नही कर सकते, किन्तु वान्या और उसके मित्र द्वारा किसी दिन यह कार्य पूर्ण होगा।

चेखाव का जीवन कष्ट मे बीता। उसे क्षयी का रोग था। धीरे-धीरे उसका स्वास्थ्य क्षीण होता गया। अन्त मे चिकित्सको के आदेशानुसार वह स्विजरलैंड गया। सभी प्रयत्न विफल हुए। अन्त मे वही, केवल ४४ वर्ष की अवस्था मे, उसका देहान्त हुआ। उसका शव मास्को लाया गया और वही पर उसका अन्तिम सस्कार हुआ।

---

# रोमांरोलां




(१८६६–१९४४ ई०)

रोमा रोला एक महान् साहित्यकार था। पचास वर्ष की अवस्था तक निरन्तर परिश्रम करने के बाद उसकी ख्याति विश्वव्यापी हुई। वह कभी भी हताश नही हुआ, सदैव अपनी लगन मे दृढ रहा। वह एक तपस्वी की भॉति एक एकान्त स्थान मे साहित्य और सगीत की साधना मे लीन रहा। सफलता नही, विश्वास ही उसका लक्ष्य था।

रोमा रोला का जन्म फ्रास के एक प्रतिष्ठित मध्यमवर्गीय कुल मे हुआ था। उसका पिता कानून का विशेषज्ञ था। उसकी माता धार्मिक मनोवृत्ति की महिला थी, जिसका अधिकाश समय अपने पुत्र और पुत्री की देखरेख मे ही व्यतीत होता था।

रोला का पुराना मकान क्लामेसी नाम के एक छोटे से नगर मे था। उसके मकान के सामने ही एक नहर बहती थी। शिशुकाल मे ही रोला का सगीत के प्रति आकर्षण था। उसकी माता ने उसे पियानो बजाना सिखलाया था। उसकी आत्मा जब कभी उदासीन हो उठती तब वह केवल सगीत से ही शान्ति प्राप्त करती थी। बचपन मे ही मोजार्ट और मीथोवन जैसे सगीत के आचार्यो की स्वर-लिपियो से वह परिचित हो गया था। उनके प्रति उसकी अपार श्रद्धा थी।

उसके बाल्यकाल का आराध्यदेव शेक्सपीयर भी था। वह तन्मय हो-कर शेक्सपीयर के नाटको को पढता था। उसके जीवन का आरम्भ सुमहले स्वप्नो द्वारा हुआ। रोला का पिता अपने पुत्र को उच्च शिक्षा देना चाहता था। अतएव वह सपरिवार पेरिस चला गया। आरम्भ मे एक हाईस्कूल मे शिक्षा ग्रहण करने लगा। फ्रास का विख्यात कवि पाल क्लाउडेल भी उसका सहपाठी था। रोला की आकाक्षा कवि

और सगीतज्ञ बनने और वीररस के नाटको का निर्माण करने की थी। रोला नार्मल स्कूल मे इतिहास और भूगोल का अध्ययन करता रहा। यूनान के प्राचीन दार्शनिक स्पिनोजा के दर्शन का विशेष प्रभाव उसपर पडा था। उसकी विचार-धारा पुष्ट और विस्तृत हुई।

रोला अपने बाल्यकाल से एक महान् आत्मा, एक विश्वव्यापी कलाकार, की खोज मे था। टाल्सटाय के आदर्शमय सिद्धान्तो से वह आर्कषित हुआ। स्कूल के दिन बीत चुके थे। अब जीविका के लिए कुछ कार्य करना आवश्यक था। वह कौन-सी वृत्ति ग्रहण करे, यही प्रश्न था। जीवन के लिए एक व्यवस्थित क्रम होना चाहिए। स्वतन्त्रता के स्थान पर नियम के बन्धन और वृत्ति के लिए अपने उद्देश्यो को भूल जाना होगा। अतएव बाईस वर्ष का युवक रोला कुछ निश्चित करने मे असफल रहा।

उस समय रोमा रोला, टाल्सटाय के कलासम्बन्धी विचारो के कारण, भ्रम मे पड गया। रोला के लिए कला और सगीत ही जीवन था। वह सगीत को अपने जीवन के लिए रोटी के समान आवश्यक समझता था। टाल्सटाय का विचार था कि सगीत द्वारा मनुष्य अपने कर्त्तव्य-पालन से विमुख होता है। रोला ने टाल्सटाय के पास एक पत्र भेजा, जिसमे उसकी अन्तरात्मा की पुकार थी। कई सप्ताह बाद टाल्सटाय का उत्तर मिला, जिसमे उसने लिखा था कि 'जो कलाकार अपने विश्वास के लिए त्याग करता है, उसी का महत्त्व है। उसका प्रेम कला के लिए नही, समस्त मानवता के प्रति होना चाहिए। इस उद्देश्य को लेकर कोई भी कलाकार अपने कार्य मे अग्रसर हो सकता है।' टाल्सटाय का यह पत्र ३८ पृष्ठो मे समाप्त हुआ था।

प्रतिवर्ष नार्मल स्कूल के कुछ विशिष्ट विद्यार्थियो को विदेश मे अध्ययन करने के लिए छात्र-वृत्ति मिलती थी। रोला यह छात्र-वृत्ति लेकर दो वर्ष तक रोम मे इतिहास का अध्ययन करता रहा। रोम मे मालविडा नाम की एक बूढी जर्मन महिला से उसका परिचय हुआ। रोला के जीवन मे उसकी माता और इस महिला का विशेष प्रभाव पडा था। यह जर्मन महिला शिक्षित और उच्च विचार की थी। उसने रोला को रोमन समाज से परिचित कराया।

रोमा रोला प्राय 'मालविडा के यहाँ जाता। उसे पियानो बजाकर सुनाता। वह उसकी कला पर मुग्ध थी। जीवन के अनेक जटिल प्रश्नो पर वार्तालाप होता। रोला के विचार अधिक पुष्ट और गम्भीर होते गये।

मालविडा को भी विश्वास था कि किसी दिन यह युवक रोला विश्व का एक महान् कलाकार माना जायगा। रोमा ने अपने अध्ययन-काल मे ही अनेक नाटको की रूपरेखा प्रस्तुत कर ली थी। वह नवीन दृष्टि-कोण से नाटको की रचना करने लगा।

रोम मे अपना अध्ययन समाप्त कर रोला पेरिस लौटा। वह पहले नार्मल स्कूल मे और बाद मे सोर्बोन विश्वविद्यालय मे सगीत के इतिहास का अध्यापक नियुक्त हुआ। वह समाज के सम्मुख आया। उसका विवाह हुआ। उसकी पत्नी एक शिक्षित परिवार की थी। उसका पिता एक सम्मानित प्रोफेसर था, जिसके कारण रोला का परिचय समाज मे बढने लगा। उसे सभी वर्ग के लोगो के जीवन को प्रत्यक्ष रूप से देखने का अवसर मिला। मानव जीवन की वास्तविक परिस्थितियो का उसे ज्ञान हुआ।

रोमा रोला और उसके कुछ साहित्यिक मित्रो के प्रयत्न से 'केशियर' नाम का पत्र प्रकाशित हुआ। साहित्य और समाज के भ्रष्टाचार के विरुद्ध इस पत्र ने विशेष कार्य किया। इस पत्र द्वारा फ्रेंच आदर्श और बन्धुत्व का मार्ग प्रदर्शित किया गया। १५ वर्षों तक नियमित रूप से यह पत्र प्रकाशित हुआ। पत्र की ग्राहक-सख्या बहुत अल्प थी। कुछ शिक्षित और कलाकार ही उसे पढते थे। इसी पत्र मे रोमा रोला की सभी प्रमुख रचनाएँ प्रकाशित हुई थी।

रोमा रोला की आर्थिक समस्या उतनी सरल नही थी, फिर भी अपनी साहित्यिक कृतियो से उसे कोई भी लाभ नही हुआ और जनता मे उसकी प्रसिद्धि भी नही हुई थी। उस समय पूँजीपतियो के आश्रय मे ही नाटको का प्रदर्शन, उनके मनोरजन के लिए, होता था। रोला ने सर्वसाधारण के लिए नाटको की योजना प्रस्तुत की। उसने स्वय कुछ ऐसे नाटको का निर्माण किया जो जनता के लिए लिखे गये थे। राजनीतिक कारणो से उन नाटको को सफलता नही मिली।

रोमा रोला को अपने सभी प्रयोगो मे असफलता और निराशा ही मिली, किन्तु वह हताश नही हुआ। अपनी आत्मा मे उसका अटल विश्वास था। रोला दुर्दिन की घडियो मे महापुरुषो और वीर व्यक्तियो की कल्पना करता था। आपत्तिकाल मे व्यथा पर विजय प्राप्त कर जीवन को कलामय बनानेवाली महान् आत्माओ का वह स्वप्न देखा करता था। वह स्वय कभी पराजित नही हुआ।

रोला ने अध्यापन-कार्य छोड़ दिया। ससार से अलग होकर दस वर्षो

के घोर परिश्रम के पश्चात् उसने अपनी अमर रचना 'जीन क्रिस्टोफे' को विश्व के सम्मुख प्रकट किया।

रोला ने अपने उपन्यास 'जीन क्रिस्टोफे' मे बीथोवन, वागनर आदि महान् सगीतज्ञो के चरित्र और घटनाओ की छाया मे ही 'क्रिस्टोफे' के चरित्र का अकन किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि उन महान् आत्माओ के चरित्र का उस पर विशेष प्रभाव पडा था। ओलिवर के रूप मे रोला ने स्वय अपना चरित्र उपस्थित किया था। सगीत ही इस उपन्यास की आत्मा है। ओलिवर आध्यात्मिक फ्रास का प्रतिनिधि है और क्रिस्टोफे जर्मनी की उन्नत प्रतिभा का उदाहरण है। भिन्न-भिन्न परिस्थितियो मे दोनो कला और जीवन का उच्च आदर्श उपस्थित करते है।

विश्व-साहित्य मे रोला का उपन्यास 'जीन क्रिस्टोफे' अपने ढग की बेजोड रचना है। मानव-जीवन के जटिल और गूढ प्रश्नो को कथा के सूत्र मे बाधकर लेखक ने एक आदर्शमय जीवन की सृष्टि की है। उसने जीवन-द्वन्द्व मे मानव को सत्य के पथ मे अटल और अविचलित होने का आदेश दिया है। मानव को समझना और उसके प्रति प्रेम रखना यही रोला का मूल सदेश है।

१९१० ई० मे एक दुर्घटना के बाद ही रोला ससार मे विख्यात हुआ। एक दिन अपने घर से निकलकर वह सडक पर जा रहा था। अचानक एक मोटर के पहियो के नीचे वह आ गया, किन्तु सौभाग्य से उसकी प्राण-रक्षा हुई। उसे गहरी चोट लगी। हड्डियाँ टूट गई थी। कुछ समय बाद अस्पताल से वह मुक्त हुआ। उसे नया जीवन मिला।

१९१२ ई० तक रोमा रोला की कीर्ति अज्ञात थी। केवल दो वर्षो मे उसकी प्रसिद्धि उच्च शिखर पर पहुँच गई। वह समस्त विश्व की मानवता को एक सूत्र मे बँधा देखना चाहता था। उसका बन्धुत्व का सदेश योरोप भर मे छा गया। उसने अपनी सम्पूर्ण शक्ति से युद्ध का विरोध किया।

१९१४ ई० से रोला का जीवन एक उपदेशक के रूप मे परिणत हुआ। अब वह एकान्तवास छोडकर ससार के सम्मुख आया। उसका द्वार सभी के लिए खुल गया। उसकी वाणी अधिक शक्तिशाली हुई।

१९१९ ई० मे रोला ने अपनी सम्पूर्ण शक्ति से 'विचारो की स्वतन्त्रता' के लिए आन्दोलन खड़ा किया और उसने ससार के प्रमुख लेखको का समर्थन और सहयोग प्राप्त किया। इस सम्बन्ध मे उसने अनेको लेख लिखे। उसने विरोधियो का खुलकर सामना किया। बारबूसे जैसे विख्यात

फ्रेंच लेखक का मत था कि क्रान्तिकारी सिद्धान्तो की रक्षा के लिए 'विचार-स्वातन्त्र्य भी बलिदान किया जा सकता है', किन्तु रोला किसी भी स्थिति मे विचार-स्वातन्त्र्य की हत्या नही देखना चाहता था।

रोला मानव-स्वतन्त्रता और सामाजिक क्रान्ति का समर्थन करता था, किन्तु वह रक्तपात का विरोधी था। उसने जर्मनी मे रोसा लक्समबर्ग की हत्या का जोरो से विरोध किया था। चारो ओर से दु ख और निराशा का उस पर आक्रमण हुआ और दो वर्षो तक वह मृत्यु के साथ विचरण करता रहा।

योरोप के लेखको के दो दल हो गये थे। एक रोमा रोला के पक्ष का समर्थन करता था और दूसरा क्रान्ति के नाम पर लेखको की स्वतन्त्रता भी उत्सर्ग करता था। रोला अहिसा का समर्थक था। उसने रूस के बोल-शेविको का भी विरोध किया था, जिनके शासन मे लेखको की स्वतन्त्रता पर भी कडा नियत्रण लगा हुआ था और उस परिस्थिति मे गोर्की को भी अपना देश छोडना पडा था। गोर्की रोला के विचारो से सहमत था। रोला से उसकी घनिष्ठ मित्रता थी और उसने अपनी एक पुस्तक भी रोला को समर्पित की थी।

१९२२ ई० मे फ्रास छोडकर रोला स्विजरलैंड मे निवास करने लगा। भारतीय दर्शन का उस पर गहरा प्रभाव पडा था। भारत की महान् आत्माओ से उसने अपना सम्बन्ध स्थापित किया। उसने महात्मा गाधी और परमहस रामकृष्ण का जीवनचरित्र भी लिखा। एक ओर गाधी जी के सिद्धातो का उस पर प्रभाव पडा था दूसरी ओर सोवियत रूस के प्रति उसकी सहानुभूति भी थी। वह चाहता था कि दोनो सिद्धान्तो के अनुयायी मिलकर ससार का कल्याण करे। इस सम्बन्ध मे उसने बहुत प्रयत्न किया, किन्तु वह असफल रहा।

उन दिनो हिटलर और मुसोलिनी का फासिस्टवाद उनके देशो मे अपना आतक जमाये था। रोला उनके प्रयोगो को घातक समझता था। इसके कारण भविष्य मे फिर एक भीषण महायुद्ध की सम्भावना उसे दिखाई पडती थी। उसने उसका तीव्र विरोध किया। एक बार, १९२६ ई० मे, महाकवि रवीन्द्र रोला से मिलने गये। वह इटली की यात्रा समाप्त कर वहाँ गये थे। मुसोलिनी की बातो का उनके ऊपर विशेष प्रभाव पडा था और वह सहानुभूति प्रकट करने लगे। अन्त मे रोला ने सम्पूर्ण स्थिति उनके सम्मुख रखी। रोला ने फासिस्टवाद का घोर विरोध किया और उसने एक विश्वव्यापी आन्दोलन का रूप खडा किया।

द्वितीय महायुद्ध आरम्भ होने पर रोला का जीवन निर्वासन मे ही व्यतीत हुआ। उसने अपने जीवनकाल मे एक बृहत् डायरी प्रस्तुत की थी। अब उसके अनेक खण्डो का प्रकाशन हुआ है। उसे पढने पर रोला के जीवन और दर्शन का पूर्ण ज्ञान होता है।

द्वितीय महायुद्ध समाप्त होने के पहले ही रोमा रोला इस ससार से बिदा लेकर चला गया।

---

# गोर्की

(१८६८–१९३६ ई०)



लेखक की वृत्ति ग्रहण कर इस ससार मे मैक्सिम गोर्की को जितना सम्मान, कीर्ति और प्रसिद्धि मिली, उतनी शायद ही किसी अन्य लेखक को अपने जीवन मे मिली होगी। वह रूस के नवीन युग के लेखको का भाग्यविधाता था और उसी के आदेश पर आज सोवियत लेखक अपना कार्यक्रम बना रहे है।

गोर्की केवल रूस ही नही, समस्त विश्व के मानव को परतन्त्रता से मुक्त देखना चाहता था। उसकी दृष्टि सर्वव्यापी थी। वह हमारे भारतवर्ष की स्वतन्त्रता का भी पक्षपाती था। उसने अपने एक लेख मे भारत मे अग्रेजो के दुराचार का विरोध किया था। उसने पेरिस मे रहनेवाले भारतीय कृष्णवर्मा का समर्थन और उनकी प्रशसा की थी। सावरकर के निर्वासन पर उसने नौकरशाही की निन्दा की थी। उस लेख को पढने से विदित होता है कि हमारे यहाँ की स्थिति से गोर्की पूर्ण परिचित था और भारत को वह पूर्ण स्वतन्त्र देखना चाहता था।

गोर्की का पिता एक साधारण व्यवसायी था। उसकी माता एक ग्रामीण महिला थी। नौ वर्ष की अवस्था मे गोर्की अनाथ हो गया। उसका बाल्य-काल कष्ट और अभाव मे ही व्यतीत हुआ।

एक दिन अपने सम्बन्धियो का घर छोडकर वह भाग गया। दस वर्ष की अवस्था मे उसे अपनी जीविका के लिए वोल्गा पर चलनेवाले एक जहाज पर नौकरी करनी पडी। इसके बाद उसने जीवन अवलम्ब के लिए अनेक वृत्तियाँ ग्रहण की। उसने नानबाई के यहाँ कार्य किया, कुली का जीवन व्यतीत किया, सडको पर फेरी देकर फल बेचता रहा। फिर एक वकील का मुहर्रिर बना।

१८९२ ई० मे पैदल चलनेवाले यात्रियो के साथ उसने दक्षिण रूस की यात्रा की थी। गोर्की ने अपने इस भ्रमण-काल मे अनेक कहानियाँ लिखी थी। प्रकाशित होने पर उसकी कहानियाँ पाठको को अत्यन्त रुचिकर प्रतीत हुई। १९०० ई० मे जब इन कहानियो का सग्रह प्रकाशित हुआ, उस समय गोर्की को अत्यधिक सम्मान मिला। रूस के प्रथम कोटि के लेखको मे उसका स्थान माना गया। उसकी ख्याति निरन्तर बढती गई और अमेरिका और योरोप की अन्य भाषाओ मे भी उसकी कृतियो का अनुवाद प्रकाशित हुआ।

गोर्की की उन कहानियो की प्रसिद्धि और विकास के क्रम का अध्ययन करने के लिए मालवा, चेलखश, दी एक्स मैन और 'ट्वेन्टीसिक्स मेन एण्ड ए गर्ल' शीर्षक कहानियो को पढना आवश्यक है।

गोर्की ने जिन नारी और पुरुषो का वर्णन किया है वे साधारण निराश्रित और निद्रित अवस्था मे जीवन व्यतीत करने वाले जीव थे।

गोर्की के उपन्यासों मे जीवन के भिन्न-भिन्न चित्र अकित है। उनमे मानव के उलझे और द्वन्द्वमय जीवन की भावनाओ का विश्लेषण है। गोर्की ने अपने नवीन और मौलिक पात्रो के चरित्र-चित्रण मे मनोविज्ञान का अपूर्व प्रदर्शन किया है। उसकी रचनाओ की पृष्ठभूमि मे सर्वत्र प्रकृति का सुन्दर अकन है।

मालवा नाम की स्त्री जिस मछुवे को प्यार करती है और प्रत्येक रविवार को उसके यहाँ आती है, वह उस मछुवे से अधिक उस स्थान को प्यार करती है। प्रकृति की उपासना और उसका सौन्दर्यमय आकर्षण मानव-जीवन मे पूर्ण व्याप्त है। यही इस कहानी का मूल लक्ष्य है।

गोर्की एक महान् कलाकार था। वह कवि भी था। अन्य लेखक यथार्थ-

वाद के नाम पर केवल 'डायरी' की भाँति वास्तविक जीवन का लेखा प्रस्तुत करते थे। जो कुछ जैसा है उसका वर्णन वैसा करना उनका एक-मात्र उद्देश्य था। वे एक इतिहासकार की भाँति घटनाओ को उपस्थित कर देते थे। उस पर अपना मत देना उन्हे उचित नही प्रतीत होता था। किन्तु गोर्की के पात्रो के साथ लेखक की सहानुभूति प्रकट होती है, ठीक उसी भाँति जैसे तुर्गनेव के पात्र वाजारोफ, हेलेन और रुडिन के साथ उसकी सहानुभूति थी।

इस अर्थ मे गोर्की यथार्थवाद के साथ आदर्शवाद का मेल करता है; लेकिन वह उन पात्रो के द्वारा आदर्श उपस्थित करता है, जो निराश्रित और राजविद्रोही है। उसके पात्र समाज से निकाले हुए है, वे एक स्थान से दूसरे स्थान पर भटकते रहते है। जब तक उनका मन होता है तब तक काम करते है। वे नगर के किसी गन्दे भाग मे अपना जीवन व्यतीत करते है।

गोर्की के पात्र अपनी दरिद्रता और अभाग्य के प्रति शिकायत नही करते। उन पात्रो की धारणा है कि सब ठीक है, जीवन के प्रति असन्तोष और शिकायत की आवश्यकता नही, उससे कोई लाभ नही होगा। जीवित रहो और सहन करो। जब शक्ति क्षीण हो जायगी तब मृत्यु एक दिन आलिगन करेगी। उसकी प्रतीक्षा करो। यही सबसे बडी बुद्धिमता इस ससार मे है।

गोर्की के पात्रो मे प्रतिभा और उत्साह की प्रेरणा है। उसके पात्र दरिद्र है, लेकिन वे चिन्ता नही करते है। वे शराब पीते है, किन्तु हताश नही होते। उसके पात्र का विश्वास है कि प्रत्येक मनुष्य अपनी परिस्थितियों का स्वय निर्माण करता है।

गोर्की ने बुद्धिजीवियो की श्रेणी से अपने पात्रो का चुनाव नही किया है, क्योकि वह जानता था कि वे बडी सरलता से जीवन के बन्दी बन जाते है। गोर्की की वारेन्का ओलेसोवा शीर्षक कहानी मे वारेन्का एक पुरुष के प्रति हँसती ह जो उससे प्रेम करता ह। उसके द्वारा लेखक रूसी उपन्यासो मे वर्णित 'हिरो' की परिभाषा उपस्थित करता है। वह कहती है—रूसी 'हिरो' सदैव मूर्ख और दुष्ट होता है। वह किसी न किसी वस्तु मे लीन रहता है। वह प्राय ऐसी बातो के सम्बन्ध मे विचार करता रहता है, जो कभी भी नही समझी जा सकती। वह स्वय अभागा है। वह बराबर सोचता रहता है, फिर बोलने लगता है। और अपना प्रेम

प्रकट करता है। इसके पश्चात् वह फिर सोचने लगता है, फिर उसका विवाह होता है—और तब! वह अपनी पत्नी से सभी प्रकार की मूर्खता की बाते करेगा। अन्त मे वह अपनी पत्नी का परित्याग करेगा।

सचमुच गोर्की न बहुत ही उपयुक्त विचार यहाँ प्रकट किया है।

गोर्की का अभीष्ट पात्र राजद्रोही श्रेणी का होता है। वह समाज के प्रति पूर्ण रूप से विद्रोह करता है। किन्तु वह शक्तिमान् भी है। लेखक ने स्वय ऐसे निराश्रित पात्रो के साथ रहकर अपना कुछ समय व्यतीत किया था और यही कारण है कि समाज के इसी स्तर से वह अपने आकर्षक 'हिरो' का निर्माण करता था।

गोर्की के कुछ पात्र दार्शनिक भी है। वे मानव-जीवन पर विचार करते है और उन्हे उसका तत्त्व ज्ञात होता है। लेखक का विश्वास है कि जीवन-द्वन्द्व मे जो पराजित हो जाता है और जो अत्याचारो के भयानक आक्रमणो से उसी घेरे मे फँसा है, वह सोपनहर से अधिक दार्शनिक है। क्योकि कल्पनाएँ कभी ठीक और वास्तविक रूप नही धारण कर सकती है, किन्तु यत्रणा से त्रस्त मानव अपने विचारो को स्वाभाविक रूप मे प्रकट करता है।

गोर्की के पात्र प्रकृति के प्रति विशेष उन्मुख दिखाई पडते है। उसके पात्र, प्रकृति के विभिन्न क्रीडा-स्थलो को मुग्ध होकर देखते है और उनमें कवि की भावुकता प्रकट होती है।

गोर्की के पात्र-पात्रियो मे चरित्र-बल दिखाई पडता है, किन्तु लेखक आदर्श वीर की भाँति उनको नही उपस्थित करता है। वह यह सकेत देता है कि उन अभागो के जीवन मे भी ऐसे क्षण आते है, जब अपने आत्मबल के कारण वे महान् दिखाई पडते है।

१८९८ ई० मे प्रकाशित अपनी एक कहानी 'दी रीडर' मे गोर्की अपने आरम्भिक साहित्यिक सिद्धान्तो को व्यक्त करता है। वह जीवन मे किसी उच्च आदर्श को महत्त्व देता है। 'प्रतिदिन के जीवन मे कुछ ऐसी वस्तु की आवश्यकता है, जो आत्मा को उन्नत करे।' यही विचार लेखक ने अपने एक नाटक 'दी लोअर डेप्पथ' मे भी प्रकट किया है।

गोर्की की रचनाओ के क्रम-विकास पर ध्यान देने पर विदित होता है कि आरम्भ मे आदर्शवाद की छाया मे वह यथार्थवाद के पथ पर चलता रहा। समय के परिवर्तन के साथ लेखक की गति भी बदलती गई। १९०५ ई० की रूसी क्रान्ति मे भाग लेने के कारण उसकी रचनाओ में भी नवीन दृष्टिकोण और सिद्धान्त का जन्म हुआ।

फ्रास के लेखको का यथार्थवाद केवल वास्तविक स्वरूप उपस्थित करने का पक्षपाती था। लेखक अपनी सहानुभूति और विचारो से अलग रहता था। उसका कोई आदर्श और उद्देश्य नही रहता था, किन्तु गोर्की ने निरीह और पतित जीवन व्यतीत करनेवाले लोगो को भी उच्च और सुन्दर जीवन बनाने के लिए मार्ग दिखाया। अपनी आत्मा की प्रेरणा से वे कैसे अग्रसर हो सकते है ? यही उसका उद्देश्य होता था। वे परिस्थितियो से त्रस्त होकर उसी मे उलझकर अपना जीवन समाप्त कर दे यह लेखक का लक्ष्य नही रहता था। वह अपने पात्र-पात्रियो को सदैव क्रोध, घृणा, लज्जा की भावना लेकर जीवन-द्वन्द्व मे अग्रसर करता रहा। उसका विश्वास था कि ठडी साँस लेने, विलाप करने और यह कहने पर कि मानव एक मिट्टी का पुतला है और मिट्टी मे मिल जायगा, किसी महान् उद्देश्य की पूर्ति नही हो सकती। गोर्की ऐसे मानव को महत्त्व देता है, जो लज्जा-जनक वातावरण की निस्तब्धता मे अपनी भविष्यवाणी द्वारा जीवित मृतक को भी चैतन्य कर देगा। उसकी वाणी तुच्छ आत्मा को भी कम्पित कर देगी।

गोर्की की एक कहानी मे बूढी ईजरगिल डेनको का जो वर्णन करती है, वह मानवता से प्रेम करनेवाला अद्भुत वीर है। डेनको अन्धकार और निराशा मे भी जनता का पथ-प्रदर्शन करता है। वह अपने सीने से चीरकर अपना हृदय निकाल देता है, जो प्रकाश और स्वतन्त्रता का मार्ग-प्रदर्शन करता है।

यह 'डेनको' का स्वरूप गोर्की की अनेक कृतियो मे भिन्न-भिन्न आकृति मे चित्रित होता है। गोर्की ने एक महान् आत्मा, एक श्रेष्ठ मानव की कल्पना की जो जनता को परतन्त्रता से मुक्त करता है, किन्तु नित्जे के महामानव की भाँति वह मनुष्यो पर शासन नही करता।

शासन और अत्याचारो के प्रति विद्रोह के आन्दोलन मे भाग लेने के कारण गोर्की को जार की सरकार ने रूस छोडने के लिए बाध्य किया। गोर्की विदेश मे भ्रमण करता रहा। अन्त मे 'केपरी' टापू पर उसने अपना व्यवस्थित जीवन व्यतीत करना आरम्भ किया। गोर्की अपनी साहित्य-साधना मे लीन रहा। वह पत्र का सम्पादन करता, अपनी रचनाएँ प्रस्तुत करता और रूसी क्रान्ति के लिए सगठन और प्रचार करता। 'केपरी' का टापू क्रान्तिकारियो का एक तीर्थस्थान बन गया था।

१९०५ ई० मे लेनिन से गोर्की की भेट हुई थी, किन्तु दो वर्ष बाद

घनिष्ठता बहुत बढ गई। गोर्की एक ऐसे परिवार मे उत्पन्न हुआ था जिसमे भगवान् और अन्धविश्वासो की मान्यता थी। सस्कार का प्रभाव गोर्की पर भी था, किन्तु निरन्तर अपने विचारो के द्वन्द्व ने लेखक को सभी बन्धनों से मुक्त कर दिया था। लेनिन का प्रभाव उस पर विशेष रूप से पडा। १९०५ ई० की रूसी राज्यक्रान्ति की असफलता के कारण नवीन कार्यक्रम के सम्बन्ध मे क्रान्तिकारी दलो मे आपस में मतभेद हो गया था। बगडानोव के दल ने कुछ आदर्शमय सिद्धान्त और धर्म का पथ ग्रहण किया था। गोर्की इसी पथ का समर्थन करता था।

लेनिन की आलोचनाओ का ही परिणाम था कि अन्त मे गोर्की उसके सिद्धान्तो का अनुयायी बना। १९०६ ई० मे गोर्की का 'मदर' उपन्यास प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक ने भविष्य मे क्रान्तिकारियो की गीता का स्थान ग्रहण किया। लेनिन ने स्वय इसकी प्रशसा की और इसी कोटि की रचना करने के लिए गोर्की को उत्साहित किया। लेनिन गोर्की की कृतियो का बडा सम्मान करता था। उसकी धारणा थी कि जन-सामान्य की कला का गोर्की सबसे बडा लेखक है। गोर्की का विश्वास था कि लेनिन ससार का सबसे बडा आदमी है। उसने लेनिन के रूप मे ही सर्व-शक्तिमान् मानव को अपनी रचनाओ मे अकित किया है।

गोर्की ने अपने बाल्यकाल से ही मनुष्य के दुर्गुण, पतन और भ्रष्ट आचरण का अध्ययन किया था। उसने अपनी दादी से वीर, देवता, जगल, पहाड और चोर-डाकुओ की कहानी बडी उत्सुकता से सुनी थी। बचपन मे ही एक अनाथ बालक के प्रति उसकी सहानुभूति हुई थी। उसने अपनी दादी से पूछा कि क्यो अनाथ अवस्था मे लोग अपनी सन्तान को छोड देते है? उसे उत्तर मिला—'दरिद्रता के कारण उन्हे ऐसा करना पडता है।' बचपन से ही अभाव और दरिद्रता का प्रश्न गोर्की के मस्तिष्क मे जम गया था।

गोर्की का प्रेम मानवता तक ही सीमित नही था। पशु-पक्षी और जीव-जन्तुओ सभी के प्रति उसका असीम प्रेम था। अपने पिता के शव-सस्कार के समय उसने देखा था कि शव गाडने के लिए जो स्थान खोदा गया था, उस गड्ढे मे दो मेढक दलदल मे पडे थे। शव के साथ वे भी दफन हो गये। यह दृश्य जीवन भर गोर्की भुला नही सका। अपनी 'चाइल्डहुड' नामक पुस्तक मे उसने लिखा है कि जब पिता के देहान्त के बाद सब लोग विलाप कर रहे थे, तब उसकी दादी ने उससे कहा कि तुम क्यो नही अश्रुपात कर रहे हो? इस पर उसने कहा—मेरे हृदय मे वैसा अनुभव

नही हो रहा है। क्या मै बनावटी विलाप करूँ? इसपर दादी ने कहा—नही, वैसा करना आवश्यक नही है।

१९१७ ई० की रूसी राज्यक्रान्ति के बाद गोर्की ने लेनिन के सिद्धान्त के अनुसार ही अपने उपन्यासों की रचना की। इस सम्बन्ध मे लेनिन से उसकी प्राय वार्ता हुआ करती और उसी के आदेशानुसार उसने 'डिकेडेन्स' नामक उपन्यास प्रस्तुत किया था। गोर्की ने एक नवीन युग का आरम्भ किया। उसने टाल्सटाय और डौस्टोएईव्स्की की रचनाओ का विरोध किया; क्योकि क्रान्तिकारियो के लिए ऐसी रचनाएँ घातक थी। उन्हे पढकर जीवन मे उत्साह का सचार नही होता। यह उदासीनता का दर्शन क्रान्तिकारियो के उपयुक्त नही है। गोर्की ने विरोध मे आन्दोलन खडा किया और उसको लेनिन का पूर्ण समर्थन प्राप्त था।

गोर्की की रचनाओ को दो भागो मे विभक्त किया जा सकता है। प्रथम लेनिन के प्रभाव से पहले की रचनाएँ और दूसरी उसके बाद लिखी गई। गोर्की मे प्राचीन और नवीन दोनो का मेल था। समय के परिवर्तन के साथ उसके विचार भी परिवर्तित हुए। वह क्रान्ति का अग्रदूत बना। उसने जनता मे जागृति का सदेश दिया। उसने नवीन-साहित्य का निर्माण किया। उसने नवीन लेखको को उत्साहित किया और उनका पथ-प्रदर्शक बना।

नवीन रूस के निर्माण मे गोर्की का उद्योग प्रशसनीय है। उसकी कृतियो मे श्रम को विशेष महत्त्व दिया गया है। उसे श्रम पर पूर्ण विश्वास था। उसने अपने जीवन मे अपने श्रम से ससार मे इतनी कीर्ति प्राप्त की थी। १९२० ई० मे लेनिन के आग्रह से अपने स्वास्थ्य लाभ के लिए वह विदेश गया। उस समय खाँसने पर वह मुख से खून फेक रहा था। निरन्तर परिश्रम के कारण गोर्की का स्वास्थ्य क्षीण हो गया था।

विदेश से लौटने पर गोर्की नये रूस के निर्माण मे पूर्ण सहयोग देता रहा। उसने रूसी साहित्य और विज्ञान के विकास में अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगा दी थी। उसके प्रयत्न से ही लेखको का जीवन-स्तर उच्च हुआ और वे अनेको कठिनाइयो से मुक्त हुए।

गोर्की का जीवन-रहस्य समझने के लिए तीन रचनाओं को पढना आवश्यक है—चाइल्डहुड (१९१०ई०), इन दी वर्ल्ड (१९१६ ई०), माई युनिवर्सिटीज (१९२३ ई०)।

गोर्की का अन्तिम बृहत् उपन्यास 'लाइफ आफ क्लिम सायगिन' है। इसमे लेखक ने पूँजीवादी रूस के उत्थान और पतन का लेखा प्रस्तुत किया

है और उस प्रणाली के विकास का क्रम दिया है, जिसके कारण रूस का प्रथम समाजवादी राज्य स्थापित हुआ है। लेखक ने इस उपन्यास को १९२७ ई० मे आरम्भ किया था और १९३६ ई० मे समाप्त किया। इसी वर्ष अपने उपन्यास के साथ ही गोर्की ने अपने जीवन का भी कार्यक्रम समाप्त किया। कहते है कि बीमारी मे फासिस्ट एजेट द्वारा उसे विष दिया गया।

आज अनीश्वरवादी सोवियत रूस मे हमारे ब्रह्मा, विष्णु और महेश की भाँति लेनिन, स्टालिन और गोर्की की पूजा होती है।

---

# प्रौस्ट

(१८७१–१९२८)

बीसवी शताब्दी के ससार मे जो महान् उपन्यास-लेखक अवतीर्ण हुए है, उनमे प्रौस्ट का स्थान बडा महत्त्वपूर्ण है।

मार्सेल प्रौस्ट का जन्म पेरिस मे हुआ था। उसका पिता एक डाक्टर था और पेरिस मे स्वास्थ्य कमिश्नर था। प्रौस्ट की माता एक यहूदी स्त्री थी। वह सुन्दरी, मनोहर और बुद्धिमती थी। बचपन से ही माता और पुत्र के बीच ऐसा अपूर्व वात्सल्य था कि वयस्क होने पर भी प्रौस्ट तब तक सो नही सकता था, जब तक उसकी माँ ने उसका चुम्बन नही लिया हो और उसे थपथपाया न हो। वह दुर्बल और निर्बल था। उसमे भावुकता इतनी अधिक थी कि वह कभी-कभी सामान्य परिस्थितियो मे भी आँसू बहाने लगता। जब उसकी माँ उसको कहानियाँ सुनाती तो वह कहानी के नायक-नायिका की दु ख-कथा सुनकर भावाभिभूत होकर काँपने लगता था।

बचपन मे वह अपने सम्बन्धियो के यहाँ देहातो मे रहा और पेड-पत्तो की हरियाली के बीच पला था। उसका विश्वास था कि वृक्षो का भी व्यक्तित्व है, उनमे भी जान है। बाद मे उसने अपनी स्मृतियो मे उन्ही दिनो को अपने जीवन के सबसे सुन्दर क्षण बताया है।

प्रौस्ट अपनी आरम्भिक शिक्षा के दिनो मे भी अपनी रुचि की पुस्तके पढना अधिक पसन्द करता था। स्कूल के दिनो मे ही उसने बहुत सी

शास्त्रीय और प्रतीकवादी फ्रेंच कविताएँ कण्ठस्थ कर ली थी। स्नातक होने के बाद वह सैनिक शिक्षण के लिए गया। वहाँ भी अस्वस्थ रहने के कारण वह अपना अधिकाश समय पढने-लिखने और कुछ-कुछ अग्रेजी सीखने मे व्यतीत किया करता था। उन दिनो उसने कुछ शृगार-रसात्मक वर्णन लिखे और साहित्यिक जीवन की ओर प्रवृत्ति दिखाई।

सैनिक शिक्षण के बाद उसके पिता ने उसे राजदूत के कार्य के लिए तैयार करना चाहा, इसलिए वह सोर्बोन विश्वविद्यालय में राजशास्त्र और कानून पढने के लिए भेज दिया गया। उसे वहाँ का पाठ्यक्रम भाया नही। हेनरी वर्गसन का दर्शन, मनोविज्ञान और अध्यात्म अवश्य उसकी रुचि के विषय थे। वर्गसन बाद मे उसका घनिष्ठ मित्र हो गया। वर्गसन ने जो अवचेतन मन एव स्मृति सम्बन्धी सिद्धान्त प्रतिपादित किये थे, उनसे प्रौस्ट को बडी प्रेरणा मिली थी। वर्गसन का यह प्रभाव प्रौस्ट पर से तब तक नही हटा जब तक कि वह अनातोले फ्रास के सम्पर्क मे नही आया। अनातोले फ्रास ने उसे बताया कि दृश्य जगत् के अतिरिक्त वस्तुओ का निरीक्षण अथवा परीक्षण मनुष्य को निराश बनाता है, या पागल।

प्रौस्ट कानून की डिग्री नही प्राप्त कर सका। वह विश्वविद्यालय मे रहकर दर्शन और मनोविज्ञान का ही अध्ययन करता रहा। उसने लिखने का प्रयत्न किया और प्रतिभाशाली लेखको से परिचय प्राप्त करता रहा। प्रौस्ट के स्वभाव की यह एक विचित्रता थी कि मार्ग मे यदि कोई राजकुमार, ड्यूक या डचेस मिल जाती तो वह उसी प्रकार उसका अभिवादन करता जैसा कि उसने पुस्तकों मे पढा था। स्त्रियाँ उसको कुछ पागल और अशक्त समझती थी और साथ ही मनोरजक भी और वे उसके अभिवादन का प्रत्युत्तर भी दे देती थी। प्रौस्ट के पागलपन को सोचते-सोचते उनका मस्तिष्क कभी-कभी थक उठता था और अन्त मे उन्हे यह निर्णय करना कठिन हो जाता था कि इस व्यक्ति को पहले कहाँ देखा है। प्रौस्ट भी यही चाहता था।

युवावस्था मे प्रौस्ट ने धनिक वर्ग की जीवन-शैली का अध्ययन किया था। उसने राजकुमारो की वेष-भूषा और उनके रहन-सहन का अध्ययन किया था। यहाँ तक कि वह स्वय राजकुमारो-जैसी वेष-भूषा धारण कर सैर करने निकलता था। प्रौस्ट की माँ उसे सभी व्यर्थ के कामो मे उत्साहित किया करती थी। उसके पिता ने उसकी शिक्षा-दीक्षा का विचार छोडकर उसे पर्याप्त धन देना आरम्भ किया।

प्रौस्ट का सर्वप्रथम प्रेम एक कुलीन स्त्री के प्रति हुआ। वह उससे अवस्था मे बडी थी। उससे उसका कोई परिचय नही था, केवल मार्ग मे उसे देखकर वह उसके पीछे चल पडता और उसे घर पहुँचाकर लौट आता था। इसके बाद बहुत सी युवतियो को देखकर वह सब के प्रेम से अभिभूत हो गया और बडी कठिनाई से उसने उन लोगो मे से एक को चुना। सक्षेप मे, प्रौस्ट को किसी का प्यार नही मिला। वह जीवन भर अविवाहित ही रहा।

१९०३ ई० मे प्रौस्ट के पिता का देहान्त हो गया और प्रौस्ट को बहुत बडी सम्पत्ति मिली। वह खुलकर मित्रो को भोज देने लगा। वह नौकरो को इनाम देने मे इतना मुक्तहस्त था कि उन्हे कई बार इनाम देने पर भी उसे सन्देह रहता कि कही उन्हे कम तो नही मिला है। उस समय उसका जीवन अव्यवस्थित हो गया था।

१९०५ ई० मे प्रौस्ट की माता की मृत्यु हुई। उसका जीवन अत्यन्त शोकमय हो गया। कुछ समय बाद वह समाज से दूर रहने लगा। वह एक एकान्त मकान मे अपनी एक नौकरानी के साथ रहता था। वही नौकरानी ही उसे कपडा पहनाती, खिलाती और उसकी सेवा-शुश्रूषा करती थी। उसकी नौकरानी का पति टैक्सी चलाता था और रात दस बजे अपनी मोटर लाकर मकान के पास खडी कर देता था। प्रौस्ट उन दिनो ग्यारह बजे रात से पहले घर से बाहर नही निकलता था। उसका जीवन अत्यन्त रहस्यमय था। उसकी गतिविधि उसके बहुत से मित्रो के लिए भी गुप्त थी। यह निश्चित रूप से ज्ञात होता है कि वह पक्का सट्टेबाज था और मूल्यो के चढने-उतरने का ज्ञान उसे भली भाँति रहता था।

इस प्रकार उसने प्रभूत सम्पत्ति एकत्र कर ली थी। वह मित्रो को भोज देने मे पर्याप्त धन व्यय करता था।

प्रौस्ट छ वर्ष तक पलग पर पडा-पडा लिखता रहा। उसने अपना उपन्यास 'स्वान्स वे' समाप्त करने के पहले किसी से अपनी रचना के सम्बन्ध म कुछ नही कहा था। 'स्वान्स वे' मे उसके पिछले दिनो की स्मृति का वर्णन है। प्रौस्ट ने अपने पुराने प्रकाशक के पास अपनी रचना भेजी, किन्तु उसने उसे अस्वीकृत कर दिया। प्रौस्ट के मित्रो ने बडा प्रयत्न किया कि वह प्रकाशित हो जाय। एक प्रकाशक ने इस पुस्तक के सम्बन्ध मे अपने एक मित्र को पत्र मे लिखा था कि चाहे जो भी हो, समझ मे नही आता, तीस पृष्ठो मे केवल यह वर्णन करना कि एक व्यक्ति अपनी पलग पर कैसे करवट बदलता है, क्या महत्त्व रख सकता है ?

'बीते दिनो की स्मृति' मे प्रौस्ट ने लिखा है कि जब वह पेरिस के जीवन से परिचित हो गया, तब उसने यह विचार किया—जोला आदि लेखको द्वारा वर्णित निम्नतम श्रेणी के लोगो तक के चरित्र फ्रेच उपन्यासो मे आ चुके है, केवल फ्रासीसी कुलीनो का निर्बल समाज छूट गया है। उन लोगो के लिए जीवन के मूल्य और सत्य केवल यही थे कि वे अपने घरो से लोगो को बाहर करे। इस समाज के लोगो पर दया आती थी। बाह्य जगत् से अपने को पृथक् रखने के लिए इनको अनेक रीति-रिवाज, कानून और विधान बनाने पडे। अन्त मे इस वर्ग के साथी के रूप मे केवल मूर्ख और हत्यारे लोग रह गये। इनके कोई इतिहासकार नही रहे। इनके बीच शिक्षा की कोई व्यवस्था न रही। ये सब के सब शिक्षा और प्रतिभा से हीन थे।

प्रौस्ट ने इस वर्ग का विशेष अध्ययन किया। उसने उन लोगो को सभी दृष्टियो से देखा—उनके रग-ढग, रीति-रिवाज, सोच-विचार, उनके मिथ्याभिमान, उनके दुर्गुण, उनका चिन्तापूर्ण जीवन और उसके कारणो पर विचार किया। उसने निश्चय किया कि वह उन लोगो का इतिहासकार बने, उनका विश्लेषण करे, उन्हे नैतिक शिक्षा दे, उनपर व्यग्य कसे। उसका विश्वास था कि ऐसे समाज को विनष्ट कर देना चाहिए। प्रौस्ट की रचनाओ मे एसे समाज का अत्यन्त मार्मिक चित्रण हुआ है।

प्रौस्ट के अनुसार किसी ऐसी वस्तु के वर्णन के लिए, जिसको किसी ने न देखा हो, चाहा हो, यह आवश्यक है कि वह उससे तटस्थ होकर स्मृतियो के बल पर उसके निर्बाध चित्रण का प्रयत्न करे। प्रौस्ट का मत है कि 'कलात्मक रचना मे हम स्वतन्त्र नही होते, वह पहले से ही बनी रहती है और हमे केवल उसका पता लगाना पडता है, जैसे हम किसी गुप्त प्राकृतिक रहस्य का पता लगा रहे हो।'

प्रौस्ट दमा का रोगी था। वह सदैव अपने को ऊनी कपडो से ढँके रहता था। वह अपने कमरे को इस प्रकार बन्द किये रहता था कि उसमे वायु का सचार न हो सके। कभी उसका पलग झाडा नही जाता था और शीत लगने के भय से वह स्नान भी नही करता था। उसका पिता अनुभवी डाक्टर था, किन्तु प्रौस्ट डाक्टरो से घृणा करता था। वह मादक द्रव्यों और काफी का सेवन करता था। वह प्राय कुछ नही खाता और केवल काफी पीकर रात भर जागता रहता था। निमोनिया होने पर उसने डाक्टर को नही बुलाया। उसका भाई भी एक कुशल चिकित्सक था।

उसने उसको भी सूचना नही दी। डाक्टरो का कथन था कि उसने स्वय अपने जीवन का अन्त किया था।

प्रौस्ट को जब 'गोकूर' पुरस्कार प्राप्त हुआ, तभी से उसकी ख्याति बढने लगी। उसने पुरस्कार के पैसो से एक बडे होटल मे मित्रो को भोज दिया और फिर घर लौटकर शेष रचनाओ को पूर्ण करने मे व्यस्त हो गया। वह अपनी रुग्णावस्था मे घोर परिश्रम करता रहा। अपनी रचना के अन्तिम भाग का सशोधन समाप्त करने पर ही ५० वर्ष की आयु मे उसे निमोनिया हो गया। मृत्यु से पूर्व 'ले ज्यो दोनेर' पुरस्कार उसे प्राप्त हुआ था।

प्रौस्ट बडी दयालु प्रकृति का पुरुष था। वह स्वय एक दुर्बल व्यक्ति था और उसने रुग्ण समाज के परीक्षण और आलेखन का काम किया। बाद मे तो प्रौस्टवाद ही चल पडा, लेनिन की भाँति प्रौस्ट ने भी एक नैतिक न्याय की घोषणा की थी। इसी लिए सोवियत विद्वान् उसकी रचनाओ को पढते है।

प्रौस्ट अपनी रचनाओ मे पहले-पहल क्रातिकारी सा जान पडता है। इसका कारण यही है कि वह स्वभाव से चचल रहा और मूल्यो के विषय मे उसके अपने व्यक्तिगत विचार थे। प्रौस्ट ने अधिकतर स्थिरता, विरोध आदि पर बल दिया, जिनको कथा-परम्पराओ ने सामान्य सत्य और द्रुत-प्रभाव के अधीन कर दिया है। किसी ने अवचेतन मन, विचारो के धुँधले सम्बन्ध आदि पर उतना ध्यान नही दिया जितना प्रौस्ट ने, परन्तु वह कभी उनमे खो नही गया। यद्यपि वह घूम-फिरकर अपने लक्ष्य तक पहुँचता है तथापि उसके पात्रो के चरित्र एक निश्चित उद्देश्य लिये हुए दिखाई पडते है। इस दृष्टि से वह आजकल के मनोवैज्ञानिको की भाषा मे 'व्यवहारवादी' कहलायेगा, क्योकि आजकल यह धारणा है कि मानव का उपयुक्त अध्ययन उसकी बाह्य गति-विधि से हो सकता है, उसके अज्ञात मन की गहराई मे घुसकर नही।

उपन्यास-लेखन के विषय मे जितने मत-मतान्तर उत्पन्न हुए है, उनमे किसको अच्छा या बुरा कहा जाय, यह निश्चित करना कठिन है, लेकिन यह सत्य है कि ससार के बडे-बडे उपन्यासकारो ने समान रूप से अपनी जनता को क्रियमाण दिखाया है। यही कारण है कि अच्छे उपन्यासो मे देश-विशेष की जनता का जीवन्त उदाहरण मिलता है। प्रौस्ट इस कला का विशेषज्ञ था। वह भली भाँति जानता था कि जनता की कौन-सी गति-विधि और किन विचारो का उल्लेख करना आवश्यक है।

प्रौस्ट के पाठक विश्वास के साथ उसकी रचना पढते हैं। उसके कुछ उपन्यास नीरस ढग से आरम्भ होते है, लेकिन ऐसा ज्ञात होता है कि आरम्भिक पृष्ठो मे ही भाग्य का निपटारा हो जानेवाला है। सम्भव है कि वह समय बहुत अन्त मे आये, पर आरम्भ मे ही पाठको को ऐसा सकेत मिल जाता है और उसकी प्रतीक्षा मे उत्सुकता के साथ वे आगे बढते चले जाते है। भाग्य के इस खेल को दिखाने के अनेक ढग हो सकते है, पर उनमे सबसे अच्छा ढग यही है कि ऐसी घटनाओ को चुनकर रखा जाय, जिनसे पाठको की कल्पना-शक्ति जागरित हो जाय। पात्रो की क्रिया जैसे स्पष्ट हो जाय।

एक विद्वान् आलोचक ने लिखा है कि प्रौस्ट का व्यग्य किसी नैतिक आदर्श पर अवलम्बित न होकर उसके मनोवैज्ञानिक परीक्षण का परिणाम सा प्रतीत होता है। उसका कहना है कि केवल एक स्थल पर प्रौस्ट ने अपने एक पात्र बरगोत की मृत्यु के अवसर पर ही नैतिक आदर्श की चर्चा की है। प्रौस्ट इन वाक्यो का उल्लेख करता है—हमारे जीवन की हर एक घटना ऐसी होती है कि मालूम होता है कि हम पिछले जीवन के कुछ कर्त्तव्य लेकर आये हो। हमारे पार्थिव जीवन मे कोई ऐसी बात नही, जिससे हम समझे कि हमारे कुछ कर्त्तव्य है। इसी प्रकार कलाकार का भी यह कर्त्तव्य नही है कि वह बीस बार एक ऐसा वाक्य लिख जाय, जिसके लिए लोग उसके मरने के बाद उसकी प्रशसा करे। ये सब कर्त्तव्य किसी और लोक के मालूम पडते है। एक ऐसा लोक जहाँ हम इस पार्थिव जीवन से पहले रहे होगे और जहाँ जाने के लिए हम इस जीवन मे कुछ कर्तव्य निभाते है, ऐसे कर्तव्य जिनके सस्कार हम इस पार्थिव जीवन मे आने से पहले ग्रहण कर लेते है। ये कर्तव्य हमारे बौद्धिक प्रयत्नो के साथ और स्पष्ट हो जाते है। ये कर्त्तव्य केवल मूर्खो के लिए अज्ञात रहते है।

प्रौस्ट के इस नैतिक आदर्श की स्पष्ट स्वीकृति को सयोगात्मक कहकर नही टाला जा सकता। उल्लिखित पक्तियाँ प्रौस्ट की सबलता और निर्बलता की कुजी समझी जा सकती है। पर इस अन्य लोक से प्राप्त कर्तव्य मे प्रौस्ट स्टोइक फिलासफी के 'साहस' का उल्लेख नही करता है। वह इस गुण को मानव-क्रिया की आवश्यक प्रेरक शक्ति नही समझता। प्रौस्ट मनुष्य को दयावान्, गुणवान्, त्यागी और दूसरे ऐसे रूपो मे तो देख सकता है, पर स्वभाव से या प्रयत्नपूर्वक मनुष्य का वीर होना उसके लिए कोई महत्त्व नही रखता।

प्रौस्ट के नैतिक जगत् पर भय का शासन है। मृत्यु का भय, उत्तरदायित्व का भय, बीमारी का भय, दुष्कालो का भय, यहाँ तक कि भय का भय, यही उसके जगत् का क्षितिज है। उसके कलाकार-स्वरूप की प्रवृत्ति की सीमा है। यह कहते हुए हम लेखक की प्रतिभा और उसकी शारीरिक शक्तिहीनता के बीच पहुँच जाते हैं, लेकिन यह सब होते हुए भी उसकी रचनाओ की महत्ता को कोई अस्वीकार नही कर सकता। प्रौस्ट ने किसी विशेष प्रवृत्ति मात्र को नही लिया, उसने न तो कोई बौद्धिक रचना की और न किसी सिद्धान्त-विशेष पर ही ध्यान दिया, क्योकि प्रौस्ट के मतानुसार इन्ही बातों से कभी-कभी लेखक का ध्यान असन्तुलित रचनाओ की ओर आकृष्ट हो जाता है। प्रौस्ट ने अपने अनुभव के बल पर चेतन और अचेतन भावनाओ की गहराइयो तक पहुँचकर उनका वर्णन किया है।

कला मे शैलियो का परिवर्तन तो होता ही रहता है, परन्तु जब तक प्रतिभा-सम्पन्न कलाकार सामान्य शैलियो से कुछ ऊपर उठकर एक नवीन शैली का अनुसरण नही करता; तब तक उसका अध्ययन महत्त्व नही रखता। इस दृष्टि से देखा जाय तो निस्सन्देह प्रौस्ट एक महान् कलाकार है। उपन्यासो मे मनोवैज्ञानिक वर्णन के लिए उसकी कृतियाँ अध्ययन की सामग्री है।

—समाप्त—